वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 439
ISBN-978-93-84003-45-6

ढाईद्वीप विधान

–रचयित्री –

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी
परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी

परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा घोषित
'श्री गौतम गणधर वर्ष' वीर निर्वाण संवत् 2540-41 (सन् 2014-2015) के
अन्तर्गत शरदपूर्णिमा के शुभ अवसर पर प्रकाशित।

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.
फोन नं.- (01233) 280184, 280994
Website : www.jambudweep.org, www.encyclopediaofjainism.com
E-mail : jambudweeptirth@gmail.com
Facebook : jaintirthjambudweep

प्रथम संस्करण	वीर नि. सं. 2540	मूल्य
1100 प्रतियाँ	आश्विन शु. पूर्णिमा, 8 अक्टूबर 2014	120/-रु.

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएँ भी प्रकाशित होती रहती हैं।

–: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :–

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी
(दो बार डी.लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत)

–: मार्गदर्शन :–

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी
(पीएच.डी. की मानद उपाधि से अलंकृत)

–: निर्देशक एवं सम्पादक:–

कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

–: प्रबंध सम्पादक :–

जीवन प्रकाश जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

कम्पोजिंग - ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

सम्पादकीय

–कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

ऊँ नमो मंगलं कुर्यात् , ह्रीं नमश्चापि मंगलम्।
मोक्षबीजं महामंत्रं, अर्हं नमः सुमंगलम्।।

जैन परम्परा में उपयोग तीन प्रकार का माना गया है। अशुभोपयोग, शुभोपयोग एवं शुद्धोपयोग। इन तीनों उपयोगों में से कोई न कोई उपयोग प्रतिक्षण जीव में चला ही करता है, जिसमें से अशुभोपयोग तो दुर्गति का कारण पापरूप है, जो सर्वथा हेय है। बात है उपादेयता की, शेष दोनों शुभोपयोग व शुद्धोपयोग उपादेय हैं। चूंकि गृहस्थ श्रावक के शुभोपयोग के अलावा शुद्धोपयोग हो नहीं सकता इसलिए शुभोपयोग ही उपादेय ठहरता है। शुद्धोपयोग वीतराग चारित्र से अविनाभावी है और वीतराग चारित्र निर्ग्रन्थ मुनियों के ही संभव है अतः श्रावकों को प्रयत्नपूर्वक शुभोपयोग की भावना में ही प्रवृत्त होना चाहिए। पूजन पाठ, सामायिक, दान आदि समस्त धार्मिक क्रियायें पुण्यरूप हैं और शुभोपयोग हैं, इसलिए श्रावकों द्वारा शांति विधान, सिद्धचक्र विधान आदि मण्डल विधान करने की परम्परा प्राचीन काल से चली आ रही है। श्रावकों के षट् आवश्यक कार्यों में देवपूजा प्रथम आवश्यक कार्य है।

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी परमपूज्य चारित्रचन्द्रिका गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम, सर्वतोभद्र, तीनलोक, शांतिविधान, ऋषिमण्डल आदि छोटे–बड़े 100 विधानों की एवं 300 ग्रंथों की रचना की हैं। जिनमें से अभी कुछ विधान एवं ग्रंथ अप्रकाशित हैं। विधानों की श्रृंखला में यह **'ढाईद्वीप विधान'** वृहत् विधान रचकर नूतनकृति के रूप में पूज्य माताजी ने हम सबको प्रदान किया है। यह विधान सभी रोग, शोक, दुख, दारिद्र्य को दूर करके सुख को प्रदान करने वाला है। भक्ति करते-करते भक्त जब एक दिन भगवान बन सकता है, तो भक्ति से छोटे–छोटे कार्य तो सिद्ध हो ही जाएंगे। यह नूतन विधान सभी के लिए मंगलकारी हो, यही मंगल भावना है। पूज्य माताजी स्वस्थ रहें, दीर्घायु प्राप्त करें एवं वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला दिन दूनी रात चौगुनी वृद्धि करे, यही जिनेन्द्रदेव से मंगल प्रार्थना है।

प्रस्तावना

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

तीन शतक अट्ठानवे, जिनगृह शाश्वत नित्य।
ढाईद्वीप के नित नमूँ, पाऊँ निजसुख नित्य।।

मध्यलोक में असंख्यातों द्वीप समुद्र हैं। उनमें ढाईद्वीप तक ही मनुष्य होते हैं। ढाईद्वीप के आगे मनुष्य नहीं जा सकते। ढाईद्वीप में 398 अकृत्रिम जिनमंदिर हैं। ढाईद्वीप में ही भूत, भविष्यत, वर्तमान तीनों काल में अनंतानंत नवदेवता अर्थात् अर्हंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, जिनधर्म, जिनागम, जिनचैत्य और चैत्यालय हो चुके हैं और आगे भी होते रहेंगे। 170 कर्मभूमि ढाईद्वीप में ही हैं, जहाँ से अनंतानंत सिद्ध हुए हैं।

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी युगप्रवर्तिका, चारित्रचन्द्रिका, सिद्धान्तचक्रेश्वरी आर्यिका शिरोमणि परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने इस ढाईद्वीप विधान के मंगलाचरण में जितने भी तीर्थंकर, गणधर, मुनिगण, केवली, श्रुतकेवली हुए हैं उन सभी को नमन किया है। पंचकल्याणक भूमि, अतिशयक्षेत्र को नमन किया है। कृत्रिम, अकृत्रिम सभी जिनमंदिर, जिनप्रतिमाओं को नमन किया है। पाँच भरत, पाँच ऐरावत एवं एक सौ साठ विदेह क्षेत्रों के सभी तीर्थंकर को नमन किया है और फिर अंत में त्रिभुवन के मस्तक पर विराजमान अनंतानंत सिद्धों को नमन करते हुए यह भावना भाई है कि मैं भी शीघ्र अनंत सौख्य–सिद्ध पद को प्राप्त करूँ।

त्रिभुवन के मस्तक पर सिद्ध–शिला पर सिद्ध अनंतानंत।
नमूँ नमूँ मैं सब सिद्धों को, पा जाऊँ मैं सौख्य अनंत।।

विधान का मंगलाचरण करते हुए पूज्य माताजी ने इसमें भगवान महावीर स्वामी के प्रथम गणधर श्री गौतम स्वामी के मुख से निकली हुई चैत्यभक्ति का पद्यानुवाद कृतिकर्म विधिपूर्वक दिया है। इसके बाद श्रीकुंदकुंद स्वामी रचित पंचमहागुरुभक्ति का पद्यानुवाद दिया है। इसके बाद नवदेवता की पूजन है। फिर ढाईद्वीप पूजा (समुच्चय पूजा) है, इसमें पूज्य माताजी ने लिखा है–

अरिहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्वसाधु परमेष्ठी हैं।
जिनधर्म जिनागम जिनप्रतिमा जिनमंदिर सब जग पूजित हैं।।
इन ढाई द्वीप में इक सौ सत्तर कर्मभूमि में ही ये हैं।
इस ही प्रमाण है सिद्धशिला यहाँ से ही मुक्ती पाते हैं।।

पूजा की इन पंक्तियों में इस विधान का सार भरा हुआ है कि ढाईद्वीप में एक सौ सत्तर कर्मभूमियों में नवदेवता होते हैं। ढाईद्वीप प्रमाण ही सिद्धशिला है अतः

ढाईद्वीप से ही मनुष्य सिद्धपद को प्राप्त करते हैं।

ढाईद्वीप की पूजा के बाद सिद्धपूजा है। फिर जम्बूद्वीप सम्बन्धी सुदर्शन मेरु जिनालय पूजा, षट्कुलाचल जिनालय पूजा, चार गजदंत जिनालय पूजा, जंबूवृक्ष-शाल्मलिवृक्ष जिनालय पूजा, सोलह वक्षार गिरि जिनालय पूजा एवं चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजा है। पुनः जम्बूद्वीप सम्बन्धी भरतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा, ऐरावत क्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा, विदेह क्षेत्र के विहरमाण तीर्थंकर पूजा एवं जम्बूद्वीप सम्बन्धी नवदेवता पूजा है।

जम्बूद्वीप के बाद लवण समुद्र है। लवण समुद्र के बाद दूसरा द्वीप धातकीखण्ड द्वीप है। धातकीखण्डद्वीप में इष्वाकार पर्वत के पड़ने से पूर्वधातकीखण्ड एवं पश्चिमधातकीखण्ड दो भाग हो जाते हैं। अतः यहां पर पूज्य माताजी ने जम्बूद्वीप सम्बन्धी समस्त जिनालयों की पूजन के पश्चात् धातकीखण्ड द्वीप इष्वाकार जिनालय पूजा दी है पुनः विजयमेरु पूजा, विजयमेरु सम्बन्धी षट्कुलाचल, चार गजदंत, धातकी-शाल्मली वृक्ष, सोलहवक्षार पर्वत, चौंतीस विजयार्ध पर्वत जिनालयों की पूजा है। इसके बाद पूर्वधातकी खण्ड भरतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा, ऐरावत क्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा, विहरमाण तीर्थंकर पूजा एवं नवदेवता पूजा है।

पश्चिम धातकीखण्ड में अचलमेरु है। अतः अचलमेरु पूजा, अचलमेरु सम्बन्धी षट्कुलाचल, चार गजदंत, धातकी-शाल्मली वृक्ष, षोडश वक्षार गिरि, चौंतीस विजयार्ध जिनालयों की पूजा है। पश्चिम धातकीखण्ड भरतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा, विहरमाण बीस तीर्थंकर पूजा एवं नवदेवता पूजा है।

धातकीखण्ड द्वीप के बाद कालोदधि समुद्र आता है। कालोदधि समुद्र के बाद पुष्करार्धद्वीप आता है। इस पुष्करार्ध द्वीप में भी इष्वाकार पर्वत के पड़ने से 2 भाग हो जाते हैं पूर्व पुष्करार्ध एवं पश्चिम पुष्करार्ध। इसमें पुष्करार्धद्वीप सम्बन्धि इष्वाकार जिनालय पूजा है फिर मन्दरमेरु पूजा, मन्दरमेरु सम्बन्धी षट्कुलाचल, चार गजदंत, पुष्करतरु-शाल्मलि तरु, सोलह वक्षार, चौंतीस विजयार्ध जिनालयों की पूजा है। इसके बाद पूर्व पुष्करार्धद्वीप भरतक्षेत्र वर्तमान कालीन तीर्थंकर पूजा, ऐरावत क्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा, विदेह क्षेत्र तीर्थंकर पूजा एवं नवदेवता पूजा है।

पश्चिम पुष्करार्ध द्वीप में विद्युन्माली मेरु है अतः विद्युन्माली मेरु पूजा, विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी षट्कुलाचल, चार गजदंत, पुष्करवृक्ष-शाल्मलिवृक्ष, षोडशवक्षार, चौंतीस विजयार्ध जिनालयों की पूजा है। पुनः पश्चिम पुष्करार्ध द्वीप भरतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा, ऐरावत क्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा, विहरमाण बीस तीर्थंकर पूजा एवं नवदेवता पूजा है।

पुष्करार्ध द्वीप के मध्य में वलयाकार मानुषोत्तर पर्वत के पड़ जाने से पुष्करार्ध

द्वीप आधा ही रह जाता है जो कि ढाईद्वीप की सीमा है। अतः मानुषोत्तर पर्वत के पूर्वदिक्, दक्षिणदिश, पश्चिमदिश, उत्तरदिश जिनालय पूजा है। ढाईद्वीप के अकृत्रिम जिनालयों की पूजा के पश्चात् कृत्रिम जिनालय पूजा है। इसके बाद ढाईद्वीप समवसरण पूजा, पंचकल्याणक तीर्थ पूजा एवं अंत में सिद्धशिला पूजा है। सिद्धशिला की पूजा के बाद बड़ी जयमाला एवं प्रशस्ति है।

इस विधान की बड़ी जयमाला में पूज्य माताजी ने लिखा है–

पैंतालिस लख योजनों, सिद्धशिला का व्यास।
सिद्ध अनंतों को नमूँ, हो लोकांत निवास।।

अर्थात् 45 लाख योजन प्रमाण सिद्धशिला है जहाँ पर अनन्तानंत सिद्ध भगवान विराजमान हैं उन अनंत सिद्धों को नमन करते हुए पूज्य माताजी ने यही भावना भाई है कि एक दिन मेरा भी सिद्धशिला पर निवास हो।

इस विधान की प्रत्येक पूजा के अंत में चार पंक्तियाँ बहुत ही सुन्दर भावों से सहित हैं–

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।

अर्थात् जो भव्यात्मा ढाईद्वीप का विधान करेंगे, वे मनुष्य एवं देव के सुखों को प्राप्त करेंगे। फिर ढाईद्वीप में जन्म लेकर साधु बनकर सिद्धपद को प्राप्त कर लेंगे।

इस विधान की प्रशस्ति में पूज्य माताजी ने लिखा है कि इस ढाईद्वीप विधान में 63 पूजाएं हैं यह विधान मैंने स्वरचित कई विधानों से संकलित किया है–

श्री ढाईद्वीप का यह विधान, ये त्रेसठ पूजायें सुन्दर।
यह सर्वसौख्य प्रद होवेगा, अतिशायी जग में मंगलकर।।
वीराब्द पचीस सौ उनतालिस, वैशाख सुदी द्वादशि तिथि है।
यह विधान मैंने पूर्ण किया, संकलित ग्रंथ सब हितकर है।।।

पूज्य माताजी ने इस विधान को वीर नि. सं. 2539 वैशाख शुक्ला द्वादशी को पूर्ण किया था लेकिन अभी तक इसके छपने का योग नहीं आ पाया। अब इसके छपने का योग आया है। यह विधान सभी भव्यजीवों के लिए मंगलकारी होवे। भगवन्तों की भक्ति करके भक्त एक दिन भगवान बनें, अनंत गुणों को प्राप्त कर सिद्ध स्थान को प्राप्त करें यही मंगल भावना है।

पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी जिनका हरपल शुभोपयोग में एवं भगवन्तों की भक्ति में लगा रहता है, जिनधर्म की प्रभावना कैसे अधिक हो जिनका चिन्तन

हरक्षण चलता रहता है ऐसी सरस्वती की प्रतिकृति पूज्य माताजी के स्वस्थ एवं दीर्घ जीवन की कामना करते हुए कोटि-कोटि नमन करती हूँ।

इस विधान में कुल 63 पूजा हैं। 917 अर्घ्य, 83 पूर्णार्घ्य एवं 64 जयमालाएँ हैं। इस विधान में 39 प्रकार के छन्दों का प्रयोग है। यह विधान एक अतिशयकारी विधान बन गया है क्योंकि इसमें ढाईद्वीप के अन्दर विराजमान जितने भी अकृत्रिम एवं कृत्रिम मन्दिर हैं, नवदेवता हैं, उन सबकी पूजा करते हुए इसमें उन्हें नमन किया गया है।

पूज्य माताजी ने इस विधान में जाप्य करने हेतु तीन मंत्र बनाएं हैं जिनमें से किसी भी मंत्र जाप्य का आप अनुष्ठान कर सकते हैं-

-मंत्र जाप्य-

(1) ऊँ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागम-जिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

अथवा

(2) ऊँ ह्री सार्द्धद्वयद्वीपसंबंधि-त्रैकालिकनवदेवताभ्यो नमः।

अथवा

(3) ऊँ ह्रीं सार्द्धद्वयद्वीपसंबंधि-कृत्रिमाकृत्रिमजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो नमः।

दो शब्द

-आर्यिका सुव्रतमती

स्वदोष-शान्त्यावहितात्मशांतिः शान्तेर्विधाता शरणं गतानाम्।
भूयाद् भवक्लेश-भयोपशान्त्यै शांतिर्जिनो मे भगवान्शरण्यः।।

भगवान महावीर के शासनकाल में बीसवीं, इक्कीसवीं शताब्दी में जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी, युगप्रवर्तिका, चारित्रचन्द्रिका, आर्यिका शिरोमणि, वर्तमान कालीन पिच्छीधारी सभी साधुओं में सबसे प्राचीन दीक्षित, परमपूज्य 105 गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने जिनधर्म, जिनागम की विशेष प्रभावना की है। प्रतिक्षण पूज्य माताजी की यह भावना रहती है कि किस तरह से मैं वर्तमान में सभी भव्य जीवों को आगम के ज्ञान से, पूर्वाचार्यों की वाणी से सिंचित करूँ।

आज के भौतिक युग में लोगों को धर्ममार्ग में लगाने के लिए भगवान की भक्ति, पूजा विधान आदि सशक्त माध्यम हैं। जब लोग पूज्य माताजी द्वारा रचित विधानों की पंक्तियों को पढ़ते हैं तो वे भक्ति में भाव विभोर हो जाते हैं। भक्ति में उनके पैर थिरकने लग जाते हैं और वे भक्ति भाव से पूजा कर असंख्य कर्मों की निर्जरा कर लेते हैं। जब भगवान के दर्शनमात्र से पाप कर्म निर्जीण हो जाते हैं तो उनकी पूजा, भक्ति करने से तो विशेष पुण्य फल प्राप्त होता है।

धवला पु.-6 में आचार्य श्री वीरसेनस्वामी ने जिनबिम्ब दर्शन के महत्त्व का कितना सुन्दर वर्णन किया है-

दर्शनेन जिनेन्द्राणां पापसंघातकुंजरम्।
शतधा भेदमायाति गिरिर्वज्रहतो यथा।।

अर्थात् जिनेन्द्रों के दर्शन से पापसंघातरूपी कुंजर के सौ टुकड़े हो जाते हैं, जिस प्रकार कि वज्र के आघात से पर्वत के सौ टुकड़े हो जाते हैं।

देव, शास्त्र, गुरु की भक्ति, पूजा विशेष फल को देने वाली है। पूज्य माताजी की वाणी जिनवाणी है। लेखनी में सरस्वती का वास है। जिनागम का सार बताने वाली, ज्ञानामृत का वितरण करने वाली, षट्खण्डागम की 16 पुस्तकों पर 'सिद्धान्तचिन्तामणि' नाम की संस्कृत टीका लिखने वाली, राष्ट्रगौरव, युगनायिका, सिद्धान्तचक्रेश्वरी, वाग्देवी, डी. लिट्, आदि अनेक उपाधियों से अलंकृत पूज्य माताजी इस युग के लिए वरदान हैं। इस विधान की प्रूफ रीडिंग के माध्यम से मुझे जो स्वाध्याय का लाभ प्राप्त हुआ है, वह मेरे भव भ्रमण को दूर कर शीघ्र ही श्रुतज्ञान, केवलज्ञान की प्राप्ति करावे, इन्हीं मंगल भावनाओं के साथ पूज्य माताजी के पावन चरणों में कोटि-कोटि नमन।

ढाई द्वीप विधान-एक अतिशयकारी विधान है

–आर्यिका स्वर्णमती

बीसवीं सदी में मुनि परम्परा को जीवन्त करने वाले युगप्रवर्तक प्रथमाचार्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज के 3 बार दर्शन करने वाली, उनसे अनुभव ज्ञान प्राप्त करने वाली, प्रथम पट्टशिष्य चारित्र चूड़ामणि आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से आर्यिका दीक्षा को प्राप्त कर ज्ञानमती नाम को सार्थक करने वाली, बीसवीं सदी की युगप्रवर्तिका, प्रथम बालब्रह्मचारिणी आर्यिका, चारित्रचन्द्रिका, आर्यिका शिरोमणि गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी हैं।

पूज्य माताजी ने जिनधर्म, जिनागम की विशेष प्रभावना करते हुए अब तक लगभग 400 ग्रंथों की रचना की हैं जिनमें से अभी कुछ ग्रंथ अप्रकाशित हैं। आज के भौतिक युग में लोगों को धर्ममार्ग में लगाने के लिए भगवान की भक्ति, पूजा विधान, स्तुति आदि सशक्त माध्यम है।

माताजी की लेखनी से लिखा गया एक–एक शब्द मोती की माला के समान सुशोभित है। पूज्य माताजी ने भगवान के सहस्रनाम मंत्र से लेखनी का शुभारम्भ किया। अष्टसहस्री ग्रंथ का हिन्दी अनुवाद किया। षट्खण्डागम सूत्र ग्रंथ पर **'सिद्धान्त चिन्तामणि'** नाम से संस्कृत टीका 16 पुस्तकों की 3100 पृष्ठों में लिखकर एक कीर्तिमान स्थापित किया है। नियमसार ग्रंथ पर **'स्याद्वादचन्द्रिका'** नाम से संस्कृत टीका एवं समयसार ग्रंथ पर **'ज्ञानज्योति'** हिन्दी टीका लिखी है।

विधानों में इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम, सर्वतोभद्र, तीनलोक, सिद्धचक्र, समवसरण, जम्बूद्वीप आदि बड़े विधानों के साथ–साथ शान्ति विधान आदि छोटे विधानों को मिलाकर 100 की संख्या में विधानों की रचना की है। 365 दिन में प्रतिदिन कहीं न कहीं पूज्य माताजी द्वारा रचित विधान होते ही रहते हैं। जम्बूद्वीप पर प्रतिदिन कोई न कोई विधान होता ही रहता है।

विधानों की श्रृंखला में यह **'ढाई द्वीप विधान'** एक अतिशयकारी विधान है, इसमें ढाई द्वीप के समस्त अकृत्रिम-कृत्रिम जिनबिम्बों की एवं नवदेवताओं की पूजा है।

पूज्य माताजी के ज्ञानगुण की पूजा करते हुए मैं यही भावना करती हूँ कि पूज्य माताजी के गुण मुझमें अवतरित हों। यह विधान मेरे जीवन में श्रुतज्ञान, केवलज्ञान को प्राप्त करावे, इसी मंगल भावना के साथ पूज्य माताजी के पावन चरणों में कोटि–कोटि नमन।

हार्दिक उद्गार

–ब्र. कु. बीना जैन (संघस्थ)

नमः श्री वर्धमानाय, निर्धूत कलिलात्मने।
सालोकानां त्रिलोकानां, यद्विद्या दर्पणायते।।

बीसवीं शताब्दी में मुनि परम्परा को जीवन्त करने वाले युगप्रवर्तक चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शान्तिसागर जी महाराज हुए हैं। जिनकी चर्या चतुर्थकालीन सम मुनियों के समान थी। इनके प्रथम पट्टशिष्य आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से आर्यिका दीक्षा प्राप्त कर, आर्यिका ज्ञानमती नाम पाकर, स्वनाम को सार्थक करते हुए परम पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने चारों अनुयोगों का तलस्पर्शी ज्ञान प्राप्त करके, ग्रंथों का खूब स्वाध्याय करके, अपने ज्ञान को परिपक्व करके 'सहस्रनाम मंत्र' की रचना से अपनी लेखनी का शुभारम्भ करके अब तक छोटे–बड़े सभी ग्रंथों को मिलाकर 400 ग्रंथों की रचना की है।

आज के वैज्ञानिक युग में पारस टी. वी. चैनल के माध्यम से लोग घर बैठे पूज्य माताजी के मुखारविन्द से प्रतिदिन ज्ञानामृत का पान करते हैं। जब वे हस्तिनापुर आकर पूज्य माताजी का दर्शन करते हैं, तो गद्गद् होकर कहते हैं कि माताजी हम तो आपके शुद्ध शास्त्रीय, आगमानुसार प्रवचन सुनकर धन्य हो गए।

वास्तव में पूज्य माताजी ने भगवान महावीर की दिव्यध्वनि से निकली द्वादशांग वाणी को जिन्हें पूर्वाचार्यों ने ग्रंथरूप में लिपिबद्ध किया है उसी को आत्मसात करके, जन–जन के हिताय प्रवचन के द्वारा तथा ग्रंथों के द्वारा प्रदान कर रही हैं। अष्टसहस्री जैसे क्लिष्ट न्याय के ग्रंथ का अनुवाद करके पूज्य माताजी ने एक महान् कार्य किया है। विद्वद्वर्ग, युवावर्ग, बालवर्ग सभी के लिए पूज्य माताजी ने समयसार, नियमसार की टीका, कल्पद्रुम, इन्द्रध्वज आदि विधान, प्रतिज्ञा, परीक्षा, जीवनदान आदि उपन्यास एवं बालविकास के 4 भाग, जैसी पुस्तकें लिखकर सर्वांगीण ज्ञान का प्रचार प्रसार किया है। यह ढाईद्वीप विधान भी बहुत सुन्दर एवं अतिशयकारी विधान है।

मेरा परम सौभाग्य है कि पूज्य माताजी की कुल परम्परा में जन्म लेकर, उन्हें गुरुरूप में पाकर और उनसे ज्ञानामृत को प्राप्त कर अपने जीवन को धन्य किया है। सच्चे देव, शास्त्र, गुरु के प्रति भक्ति को करते हुए अपनी नारी पर्याय को सफल करूँ यही मंगल भावना है। पूज्य माताजी दीर्घायु हों, स्वस्थ रहें, यही जिनेन्द्रदेव से मंगल प्रार्थना करते हुए, ज्ञान की भण्डार पूज्य माताजी के चरणों में कोटि–कोटि नमन करती हूँ।

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त-परिचय

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जन्मस्थान–टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.

जन्मतिथि–आसोज सुदी 15 (शरदपूर्णिमा) वि. सं. 1991, (22 अक्टूबर सन् 1934)

जाति–अग्रवाल दि. जैन, **गोत्र**–गोयल, **नाम**–कु. मैना

माता-पिता–श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जैन

आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत–ई. सन् 1952, बाराबंकी में शरदपूर्णिमा के दिन

क्षुल्लिका दीक्षा–चैत्र कृ. 1, ई. सन् 1953 को महावीरजी अतिशय क्षेत्र (राज.) में आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से। नाम-क्षुल्लिका वीरमती

आर्यिका दीक्षा–वैशाख कृ. 2, ई. सन् 1956 को माधोराजपुरा (राज.) में चारित्रचक्रवर्ती 108 आचार्य श्री शांतिसागर जी की परम्परा के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से।

साहित्यिक कृतित्व–अष्टसहस्री, समयसार, नियमसार, मूलाचार, कातंत्र-व्याकरण, षट्खण्डागम आदि ग्रंथों के अनुवाद/टीकाएं एवं लगभग 300 ग्रंथों की लेखिका।

डी.लिट्. की मानद उपाधि–सन् 1995 में अवध वि.वि. (फैजाबाद) द्वारा एवं तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद द्वारा 8 अप्रैल 2012 को ''डी.लिट्.'' की मानद उपाधि से विभूषित।

तीर्थ निर्माण प्रेरणा–हस्तिनापुर में जंबूद्वीप, तेरहद्वीप, तीनलोक आदि रचनाओं के निर्माण, शाश्वत तीर्थ अयोध्या का विकास एवं जीर्णोद्धार, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का निर्माण, तीर्थंकर जन्मभूमियों का विकास यथा-भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में 'नंद्यावर्त महल' नामक तीर्थ निर्माण, भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकन्दी तीर्थ (निकट गोरखपुर-उ.प्र.) का विकास, भगवान पार्श्वनाथ केवलज्ञानभूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर तीस चौबीसी मंदिर, हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर भगवान शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा, मांगीतुंगी में निर्माणाधीन 108 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमा, महावीर जी तीर्थ पर महावीर धाम में पंचबालयति मंदिर, शिर्डी में ज्ञानतीर्थ, सम्मेदशिखर में आचार्य श्री शांतिसागर धाम इत्यादि।

महोत्सव प्रेरणा–पंचवर्षीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव, भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव, अयोध्या में भगवान ऋषभदेव महाकुंभ मस्तकाभिषेक, कुण्डलपुर महोत्सव, भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव, दिल्ली में कल्पद्रुम महामण्डल विधान का ऐतिहासिक आयोजन इत्यादि। विशेषरूप से 21 दिसम्बर 2008 को जम्बूद्वीप स्थल पर विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसका उद्घाटन भारत की तत्कालीन राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील द्वारा किया गया।

शैक्षणिक प्रेरणा–'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान' पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन, इतिहासकार सम्मेलन, न्यायाधीश सम्मेलन एवं अन्य अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सेमिनार, ऑनलाइन जैन इनसाइक्लोपीडिया आदि।

रथ प्रवर्तन प्रेरणा–जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति (1982 से 1985), समवसरण श्रीविहार (1998 से 2002), महावीर ज्योति (2003-2004) का भारत भ्रमण।

इस प्रकार नित्य नूतन भावनाओं की जननी पूज्य माताजी चिरकाल तक इस वसुधा को सुशोभित करती रहें, यही मंगल कामना है।

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान-संक्षिप्त परिचय

–जीवन प्रकाश जैन (प्रबंध सम्पादक)

ईसवी सन् 1972 में पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से स्थापित उक्त संस्था के द्वारा जम्बूद्वीप रचना के निर्माण हेतु मेरठ (उ.प्र.) के ऐतिहासिक तीर्थ हस्तिनापुर में नशिया मार्ग पर जुलाई 1974 में एक भूमि क्रय की गई, जहाँ सर्वप्रथम 24वें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी की अवगाहना प्रमाण सात हाथ (सवा दस फुट) ऊँची खड्गासन प्रतिमा विराजमान करने हेतु फरवरी 1975 में एक लघुकाय जिनालय का निर्माण किया गया, जो सन् 1990 में एक अनोखे 'कमल मंदिर' के रूप में निर्मित हुआ है। यहाँ विराजमान कल्पवृक्ष भगवान महावीर से यह अतिशय क्षेत्र निरंतर प्रगति पथ पर अग्रसर होता हुआ नित्य नये निर्माणों के द्वारा संसार में अद्वितीय पर्यटन स्थल के रूप में प्रसिद्ध हुआ है। इस प्रतिमा के दर्शन करके भक्तगण अपनी मनोकामनाएँ पूर्ण करते हैं।

जम्बूद्वीप निर्माण का प्रथम चरण–जुलाई सन् 1974 में रखी गई नींव के आधार पर जम्बूद्वीप के बीचोंबीच में सर्वप्रथम आगम वर्णित सुमेरुपर्वत (101 फुट ऊँचा) का निर्माण अप्रैल सन् 1979 में एवं सन् 1985 में जम्बूद्वीप रचना का निर्माण पूर्ण हुआ। सोलह जिनमंदिरों से समन्वित उस सुमेरुपर्वत के अंदर से निर्मित 136 सीढ़ियों से चढ़कर श्रद्धालु भक्त समस्त भगवन्तों के दर्शन करके जब सबसे ऊपर पाण्डुकशिला के निकट पहुँचते हैं, तो नीचे जम्बूद्वीप रचना के सभी नदी, पर्वत, मंदिर, उपवन आदि दृश्यों के साथ-साथ हस्तिनापुर के आसपास के सुदूरवर्ती ग्रामों का भी प्राकृतिक सौंदर्य देखकर फूले नहीं समाते हैं।

यात्री सुविधा–हस्तिनापुर तीर्थ में जम्बूद्वीप स्थल के पूरे परिसर में संस्थान द्वारा कार्यालय का सक्रिय संचालन किया जाता है। वहाँ यात्रियों के ठहरने हेतु आधुनिक सुविधायुक्त 200 कमरे, 50 से अधिक डीलक्स फ्लैट एवं अनेकों गेस्ट हाउस (बंगले) बने हुए हैं। इसके साथ ही यहाँ सुन्दर भोजनालय है जहाँ यात्रियों को सुविधापूर्वक शुद्ध भोजन प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त 2 किमी. दूर हस्तिनापुर सेन्ट्रल टाउन में सरकारी अस्पताल, डाकखाना, बाजार, इंटरकालेज तथा अन्य शिक्षण संस्थाएँ आदि सभी आवश्यक सुविधाएँ उपलब्ध हैं।

हस्तिनापुर कैसे पहुँचे ?–भारत की राजधानी दिल्ली से 110 किमी. पश्चिमी उत्तरप्रदेश में जिला-मेरठ से 40 किमी. दूर हस्तिनापुर तीर्थ है। राजधानी दिल्ली से हस्तिनापुर के लिए अंतर्राज्यी बस अड्डे अथवा आनंद विहार बस अड्डे से उत्तरप्रदेश रोडवेज तथा डी.टी.सी. बसों की निरंतर सेवा उपलब्ध है। मेरठ से भी प्रति आधे घंटे के अंतराल से जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर पहुँचने हेतु रोडवेज की बसें सुलभता के साथ उपलब्ध रहती हैं। 'जम्बूद्वीप' के नाम से ये बसें चलती हैं जो सीधे जम्बूद्वीप के सामने ही रुकती हैं और जम्बूद्वीप से ही मेरठ, दिल्ली, तिजारा आदि यात्रा हेतु बसें उपलब्ध रहती हैं। दिल्ली और मेरठ के बीच रेल सेवा भी है। देश-विदेश के यात्रीगण हस्तिनापुर पधारकर इस धरती का स्वर्ग मानी जाने वाली 'जम्बूद्वीप रचना' के दर्शन करें और मानसिक शांति का अनुभव करते हुए मनवांछित फल प्राप्त करें, यही मंगलकामना है।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के शिरोमणि संरक्षक

1. श्रीमती निर्मला जैन ध.प. स्व. श्री प्रेमचन्द्र जैन, तत्पुत्र प्रदीप कुमार जैन, खारी बावली, दिल्ली-6।
2. श्रीमती सुमन जैन ध.प. श्री दिग्विजय सिंह जैन, इंदौर।
3. श्री महावीर प्रसाद जैन संघपति, जी-19, साऊथ एक्सटेन्शन, नई दिल्ली।
4. श्री महेन्द्र पाल हरेन्द्र कुमार जैन, सूरजमल विहार, दिल्ली।
5. श्रीमती मोहनी जैन ध.प. श्री सुनील जैन, प्रीत विहार, दिल्ली।
6. श्री देवेन्द्र कुमार जैन (धारूहेड़ा वाले) गुड़गाँव (हरि.)।
7. श्रीमती शारदा रानी जैन ध.प. स्व. रिखबचंद जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-92।
8. डॉ. देवेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)
9. श्रीमती संगीता जैन ध.प. श्री संजीव कुमार जैन, शेरकोट (बिजनौर) उ.प्र.
10. श्री अनिल कुमार जैन, दरियागंज, दिल्ली
11. श्री बी.डी. मदनाइक, मुम्बई
12. श्री धनकुमार जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-92।
13. श्री जितेन्द्र कुमार जैन एवं श्रीमती सुनीता जैन कोटड़िया, फ्लोरिडा, यू.एस.ए.
14. श्रीमती विमला देवी जैन ध.प. श्री ओमप्रकाश जैन, स्वालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।
15. श्री अमित जैन एवं संभव जैन सुपुत्र श्रीमती अनीता जैन ध.प. श्री मूलचंद जैन पाटनी, दिसपुर (कामरूप) आसाम।
16. श्रीमती अजित कुमारी जैन ध.प. श्री महेन्द्र कुमार जैन, ओबेदुल्लागंज (रायसेन) म.प्र.।
17. श्री नाभिकुमार जैन, जैन बुक डिपो, सी-4, पी.वी.आर. प्लाजा के पीछे, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के परम संरक्षक

1. श्री माँगीलाल बाबूलाल पहाड़े, हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश)।
2. डॉ. प्रकाशचन्द्र जैन, 792 विवेकानंदपुरी, सिविल लाइन, सीतापुर (उ.प्र.)।
3. श्री सुमत प्रकाश जैन, गज्जू कटरा, शाहदरा, दिल्ली।
4. श्री सुनील कुमार जैन, द्वारा-सुनील टैक्सटाईल्स, सरधना (मेरठ) उ.प्र.।
5. स्व. श्री प्रकाश चंद अमोलक चंद जैन सर्राफ, सनावद (म.प्र.)।
6. श्री प्रद्युम्न कुमार जवेरी, रोकड़ियालेन, बोरीवली (वेस्ट) मुंबई।
7. श्रीमती उर्मिला देवी ध.प. श्री कान्ती प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
8. श्रीमती उषा जैन ध.प. श्री विमल प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
9. श्री आनन्द प्रकाश जैन (सौरम वाले) , गांधीनगर, दिल्ली।
10. श्रीमती सरिता जैन ध.प. श्री राजकुमार जैन, किदवई नगर, कानपुर।
11. स्व. श्रीमती कैलाशवती ध.प. श्री कैलाश चन्द्र जैन , तोपखाना बाजार, मेरठ।
12. श्री भानेन्द्र कुमार जैन, द्वारा-श्री विद्या जैन, भगत सिंह मार्ग, जयपुर।
13. श्री प्रदीप कुमार शान्तिलाल बिलाला, अनूपनगर, इंदौर, (म.प्र.)।
14. श्री सुरेशचंद पवन कुमार जैन, बाराबंकी (उ.प्र.)।
15. श्री नथमल पारसमल जैन, कलकत्ता-7।
16. श्रीमती स्व. शांताबाई ध.प. श्री कमलचंद जैन, सनावद (म.प्र.)।
17. श्री रूपचंद जैन कटारिया, दिल्ली
18. श्री आशु जैन, कालका जी, नई दिल्ली
19. श्री प्रद्युम्न कुमार जैन छोटी सा., श्री अमरचंद जैन सर्राफ, लखनऊ (उ.प्र.)
20. श्रीमती शशि जैन ध.प. श्री दिनेशचंद जैन, शिवालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।

विषयानुक्रमणिका

क्र.सं.	पूजन	पृष्ठ सं.
1.	मंगलाचरण	1
2.	चैत्यभक्ति (कृतिकर्म विधि सहित)	3
3.	पंचमहागुरुभक्ति (कृतिकर्म विधि सहित)	7
4.	नवदेवता पूजन	9
5.	ढाईद्वीप पूजा (समुच्चय पूजा)	14
6.	सिद्ध पूजा	19
7.	सुदर्शनमेरु जिनालय पूजा	25
8.	सुदर्शनमेरु संबंधी षट् कुलाचल जिनालय पूजा	33
9.	सुदर्शनमेरु संबंधी चार गजदंत जिनालय पूजा	39
10.	सुदर्शनमेरु संबंधी जंबूवृक्ष शाल्मलिवृक्ष जिनालय पूजा	44
11.	सुदर्शनमेरु संबंधी सोलह वक्षारगिरि जिनालय पूजा	50
12.	सुदर्शनमेरु संबंधी चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजा	58
13.	जम्बूद्वीप भरतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा	70
14.	जम्बूद्वीप ऐरावत क्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा	77
15.	जम्बूद्वीप विहरमाण तीर्थंकर पूजा	85
16.	जम्बूद्वीपस्थ नवदेवता पूजा	91
17.	धातकीखण्ड द्वीप इष्वाकार जिनालय पूजा	102
18.	विजयमेरु पूजा	107
19.	विजयमेरु संबंधी षट्कुलाचल जिनालय पूजा	115
20.	विजयमेरु संबंधी चार गजदंत जिनालय पूजा	122
21.	विजयमेरु संबंधि धातकी शाल्मलिवृक्ष जिनालय पूजा	127
22.	विजयमेरु के सोलह वक्षार पर्वत जिनालय पूजा	132
23.	विजयमेरु संबंधी चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजा	140
24.	पूर्व धातकीखण्ड भरतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा	153
25.	पूर्वधातकीखण्डद्वीप ऐरावतक्षेत्र वर्तमानकालीन तीर्थंकर पूजा	161
26.	पूर्वधातकीखण्डद्वीप विहरमाण तीर्थंकर पूजा	169

क्र.सं.	पूजन	पृष्ठ सं.
27.	पूर्व धातकीखण्डद्वीप नवदेवता पूजा	175
28.	पश्चिम धातकीखण्ड अचलमेरु पूजा	187
29.	अचलमेरु सम्बंधी षट्कुलाचल जिनालय पूजा	195
30.	अचलमेरु संबंधि गजदंत जिनालय पूजा	202
31.	अचलमेरु सम्बंधि धातकी वृक्ष शाल्मली वृक्ष जिनालय पूजा	208
32.	अचलमेरु सम्बंधि षोडश वक्षारगिरि जिनालय पूजा	214
33.	अचलमेरु सम्बंधि चौंतिस विजयार्ध जिनालय पूजा	222
34.	पश्चिम धातकीखण्ड भरतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा	235
35.	पश्चिम धातकीखण्ड ऐरावतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा	243
36.	पश्चिम धातकीखण्ड विहरमाण बीस तीर्थंकर पूजा	250
37.	पश्चिम धातकीखण्ड नवदेवता पूजा	256
38.	पुष्करार्ध द्वीप संबंधि इष्वाकार जिनालय पूजा	268
39.	मंदरमेरु पूजा	274
40.	मन्दरमेरु संबंधि षट् कुलाचल जिनालय पूजा	282
41.	मन्दरमेरु संबंधि चार गजदंत जिनालय पूजा	289
42.	मन्दरमेरु सम्बन्धी पुष्करतरु शाल्मलितरु जिनालय पूजा	295
43.	मन्दरमेरु संबंधि सोलह वक्षार जिनालय पूजा	300
44.	मन्दरमेरु संबंधि चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजा	308
45.	पूर्व पुष्करार्धद्वीप भरतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा	321
46.	पूर्व पुष्करार्धद्वीप ऐरावतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा	328
47.	पूर्व पुष्करार्ध विदेहक्षेत्र तीर्थंकर पूजा	335
48.	पूर्व पुष्करार्ध नवदेवता पूजा	340
49.	विद्युन्माली मेरु पूजा	351
50.	विद्युन्मालीमेरु संबंधि षट् कुलाचल जिनालय पूजा	358
51.	विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी चार गजदंत जिनालय पूजा	365
52.	विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी पुष्कर वृक्ष शाल्मलि वृक्ष जिनालय पूजा	371
53.	विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी षोडश वक्षार जिनालय पूजा	377
54.	विद्युन्मालीमेरु के चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजा	386

क्र.सं.	पूजन	पृष्ठ सं.
55.	पश्चिम पुष्करार्धद्वीप भरतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा	397
56.	पश्चिम पुष्करार्धद्वीप ऐरावतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा	405
57.	पश्चिम पुष्करार्ध विहरमाण बीस तीर्थंकर पूजा	412
58.	पश्चिम पुष्करार्ध नवदेवता पूजा	418
59.	मानुषोत्तर पर्वत पूर्वदिक् जिनालय पूजा	431
60.	मानुषोत्तर पर्वत दक्षिण दिश जिनालय पूजा	436
61.	मानुषोत्तर पर्वत पश्चिम दिश जिनालय पूजा	440
62.	मानुषोत्तरपर्वत उत्तरदिश जिनालय पूजा	445
63.	कृत्रिम जिनालय पूजा	450
64.	ढाईद्वीप समवसरण पूजा	458
65.	पंचकल्याणक तीर्थ पूजा	471
66.	सिद्धशिला पूजा	481
67.	बड़ी जयमाला	490
68.	ढाई द्वीप विधान की प्रशस्ति	492
69.	ढाईद्वीप विधान की मंगल आरती	493
70.	ढाईद्वीप विधान का भजन	494
71.	भजन (जन्म मानव का पाया है जो.....)	495
72.	भजन (जिनमंदिर का निर्माण.....)	496

ढाईद्वीप विधान में प्रयुक्त छंदों के नाम

1. चौबोल छंद, 2. दोहा, 3. गीता छंद, 4. सोरठा, 5. शेर छंद, 6. शंभु छंद, 7. उपेन्द्रवज्रा छंद, 8. घत्ता छंद, 9. अडिल्ल छंद, 10. चौबोल छंद, 11. रोला छंद, 12. सुगीतिका छंद, 13.पद्धड़ी छंद, 14. तोटक छंद, 15. नरेन्द्र छंद, 16. त्रिभंगी छंद, 17. सवैया छंद, 18. मद-अवलिप्त कपोल छंद, 19. स्रग्विणी छंद, 20. चाल छंद, 21. लोलतरोल छंद, 22. चौपाई छंद, 23. पृथ्वी छंद, 24. अनंगशेखर छंद, 25. चामर छंद, 26. नाराच छंद, 27. सखी छंद, 28. जोगीरासा छंद, 29. विष्णुपद छंद, 30. काव्य छंद, 31. द्रुतविलम्बित छंद, 32. राग भरतरी, 33. हरिगीतिका छंद, 34. भुजंगप्रयात छंद, 35. लक्ष्मीधरा छंद, 36.कुसुमलता छंद, 37. मोतीदाम छंद, 38. बसंततिलका छंद, 39. अनुष्टुप् छंद।

ढाई द्वीप विधान

-मंगलाचरण-

अर्हन्तो मंगलं कुर्युः, सिद्धाः कुर्युश्च मंगलम्।
आचार्याः पाठकाश्चापि, साधवो मम मंगलम्।।1।।
मंगलं जिनधर्मः स्यात्, जिनवाणी च मंगलम्।
जिनार्चा जिनगेहाश्च, कुर्वन्तु मम मंगलम्।।2।।
कृत्रिमाकृत्रिमाः सर्वे, नरलोके जिनालयाः।
कृताकृता जिनार्चाश्च, ते ताः कुर्वन्तु मंगलम्।।3।।
चतुर्विंशतितीर्थेशा, भरतैरावतोद्भवाः।
विदेहक्षेत्रजाः सर्वे, ते मे कुर्वन्तु मंगलम।।4।।
त्रैलोक्यशिखराग्रे या, भाति सिद्धशिला शुभा।
अनंतानंत-सिद्धेभ्यो, भृता कुर्यात् सुमंगलम्।।5।।

अथ जिनयज्ञप्रतिज्ञापनाय मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-चौबोल छंद-

इन ढाईद्वीप में जितने भी, तीर्थंकर गणधर औ यतिगण।
वर्तमान केवलि श्रुतकेवलि, ऋषिगण आदिक उन्हें नमन।।
पंचकल्याणक भूमि तथा अतिशययुत क्षेत्र सभी प्रणमूँ।
कृत्रिम अकृत्रिम जिन प्रतिमा, जिनगृह को मैं नित्य नमूँ।।1।।

पंच भरत पंचैरावत में, चौबिस जिनवर को प्रणमन।
एक सौ साठ विदेहों के भी, सभी तीर्थकर को वंदन।।
त्रिभुवन के मस्तक पर सिद्ध-शिला पर सिद्ध अनंतानंत।
नमूँ नमूँ मैं सब सिद्धों को, पा जाऊँ मैं सौख्य अनंत।।2।।

-दोहा-

तीन शतक अट्ठानवे, जिनगृह शाश्वत नित्य।
ढाईद्वीप के नित नमूँ, पाऊँ निजसुख नित्य।।3।।
त्रैकालिक नवदेवता, कहे अनंतानंत।
ढाईद्वीप के नमत ही, हों नवलब्धि अनंत।।4।।
ढाईद्वीप से ही हुये, सिद्ध अनंतानंत।
इक सौ सत्तर कर्मभू, यहीं हुए भगवंत।।5।।
इन सबको नित भक्ति से, नमूँ अनंतों बार।
जिन भक्ति ही एकली, करे भवोदधि पार।।6।।
ढाईद्वीप विधान को, करो करावो भव्य।
नवदेवों की भक्ति से, पावो निजसुख नव्य।।7।।

अथ जिनयज्ञप्रतिज्ञापनाय मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

चैत्यभक्ति

(कृतिकर्म विधि सहित)

अथ सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-नवदेववन्दनाक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवसमेतं चैत्यभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(पंचांग नमस्कार करें, खड़े होकर तीन आवर्त एक शिरोनति करके मुक्ताशुक्ति मुद्रा के द्वारा सामायिक दंडक पढ़ें।)

सामायिक दंडक

णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं।।

चत्तारि मंगलं—अरहंत मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहु मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंत लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा, साहु लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा। चत्तारि सरणं पव्वज्जामि—अरहंत सरणं पव्वज्जामि, सिद्ध सरणं पव्वज्जामि, साहु सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि।

ढाई द्वीप अरु दो समुद्र गत, पन्द्रह कर्म भूमियों में।
जो अर्हत भगवंत आदिकर, तीर्थंकर जिन जितने हैं।।1।।
तथा जिनोत्तम केवलज्ञानी, सिद्ध शुद्ध परि निर्वृतदेव।
पूज्य अंतकृत भवपारंगत, धर्माचार्य धर्मदेशक।।2।।
धर्म के नायक धर्मश्रेष्ठ, चतुरंग चक्रवर्ती श्रीमान्।
श्री देवाधिदेव अरु दर्शन-ज्ञान चरित गुण श्रेष्ठ महान।।3।।
करूँ वंदना मैं कृतिकर्म, विधि से ढाई द्वीप के देव।
सिद्ध चैत्य गुरुभक्ति पठन कर, नमूँ सदा बहुभक्ति समेत।।4।।
भगवन् ! सामायिक करता हूँ, सब सावद्य योग तज कर।
यावज्जीवन वचन कायमन, त्रिकरण से न करूँ दुःखकर।।5।।
नहीं कराऊँ नहिं अनुमोदूँ, हे भगवन् ! अतिचारों को।
त्याग करूं निंदूं गर्हूं, अपने को मम आत्मा शुचि हो।।6।।

जब तक भगवत् अर्हद्देव की, करूँ उपासना हे जिनदेव।
तब तक पापकर्म दुश्चारित, का मैं त्याग करूँ स्वयमेव।।7।।

(तीन आवर्त एक शिरोनति करके 27 उच्छ्वास में **9 बार महामंत्र का जाप्य**, पुनः पंचांग नमस्कार-तीन आवर्त एक शिरोनति करके खड़े होकर मुक्ताशुक्ति मुद्रा द्वारा हाथ जोड़कर 'थोस्सामिस्तव' पढ़ें।)-

थोस्सामि स्तवन

स्तवन करूँ जिनवर तीर्थंकर, केवलि अनंत जिन प्रभु का।
मनुज लोक से पूज्य कर्मरज, मल से रहित महात्मन् का।।1।।
लोकोद्योतक धर्म तीर्थकर, श्रीजिन का मैं नमन करूँ।
जिन चउबीस अर्हंत तथा, केवलि-गण का गुणगान करूँ।।2।।
ऋषभ, अजित, संभव, अभिनन्दन, सुमतिनाथ का कर वंदन।
पद्मप्रभ जिन श्री सुपार्श्व प्रभु, चन्द्रप्रभ का करूँ नमन।।3।।
सुविधि नामधर पुष्पदंत, शीतल श्रेयांस जिन सदा नमूँ।
वासुपूज्य जिन विमल अनंत, धर्मप्रभु शान्तिनाथ प्रणमूँ।।4।।
जिनवर कुन्थु अरह मल्लिप्रभु, मुनिसुव्रत नमि को ध्याऊँ।
अरिष्टनेमि प्रभु श्री पारस, वर्धमान पद शिर नाऊँ।।5।।
इस विध संस्तुत विधुत रजोमल, जरा मरण से रहित जिनेश।
चौबीसों तीर्थंकर जिनवर, मुझ पर हों प्रसन्न परमेश।।6।।
कीर्तित वंदित महित हुए ये, लोकोत्तम जिन सिद्ध महान् ।
मुझको दें आरोग्यज्ञान अरु, बोधि समाधि सदा गुणखान।।7।।
चन्द्र किरण से भी निर्मलतर, रवि से अधिक प्रभाभास्वर।
सागर सम गंभीर सिद्धगण, मुझको सिद्धी दें सुखकर।।8।।

(3 आवर्त 1 शिरोनति करके वंदनामुद्रा के द्वारा)

चैत्यभक्ति

जय हे भगवन् ! चरण कमल तव, कनक कमल पर करें विहार।
इन्द्रमुकुट की कांति प्रभा से, चुंबित शोभें अति सुखकार।।

जातविरोधी कलुषमना, क्रुध मान सहित जन्तूगण भी।
ऐसे तव पद का आश्रय ले, प्रेम भाव को धरें सभी।।1।।

जय हो श्रेयस्कर धर्मामृत, वृद्धिंगत महिमाशाली।
कुगति कुपथ से प्राणीगण को, निकालकर दे सुख भारी।।
नय को मुख्य गौण करने से, बहुत भेदयुत सुखदाता।
ऐसे जिनवचनामृतमय, हे धर्म! करो जग से रक्षा।।2।।

जय हो जैनी वाणी जग में, सप्तभंगमय गंगा है।
व्यय उत्पाद ध्रौव्ययुत द्रव्यों, के स्वभाव को प्रगट करे।।
अनुपम शिवसुख द्वार खोलती, अव्यय सुख को देती है।
विघ्न रहित अरु कर्म धूलि से, रहित मोक्ष को देती है।।3।।

अर्हत सिद्धाचार्य उपाध्याय, सर्व साधुगण सुरवंदित।
त्रिभुवन वंदित पंच परम गुरु, नमोऽस्तु तुमको मम संतत।।4।।

मोहारि के घातक द्वयरज, आवरणों से रहित जिनेश।
विघ्न-रहस विरहित पूजा के, योग्य अर्हत को नमूँ हमेश।।5।।

क्षमादि उत्तम गुणगण साधक, सकल लोक हित हेतु महान्।
शुभ शिवधाम धरे ले जाकर, जिनवर धर्म नमूँ सुख खान।।6।।

मिथ्याज्ञान तमोवृत जग में, ज्योतिर्मय अनुपम भास्कर।
अंगपूर्वमय विजयशील, जिनवचन नमूँ मैं शिर नत कर।।7।।

भवनवासि व्यन्तर ज्योतिष, वैमानिक में नरलोक में ये।
जिनभवनों की त्रिभुवन वंदित, जिनप्रतिमा को वंदूँ मैं।।8।।

भुवनत्रय में जितने जिनगृह,भवविरहित तीर्थंकर के।
भवाग्नि शांति हेतु नमूँ मैं, त्रिभुवनपति से अर्चित ये।।9।।

इस विध प्रणुत पंचपरमेष्ठी, श्री जिनधर्म जिनागम को।
विमल चैत्य चैत्यालय वंदूँ, बुधजन इष्ट बोधि मम दो।।10।।

द्युतिकर जिनगृह में अकृत्रिम, कृत्रिम अप्रमेय द्युतिमान।
नर सुर पूजित भुवनत्रय के, सब जिन बिंब नमूँ गुणखान।।11।।

द्युतिमंडल भासुर तनु शोभित, जिनवर प्रतिमा अप्रतिम हैं।
जग में वैभवहेतु उन्हें, वंदूँ अंजलिकर शिर नत मैं।।12।।

आयुध विक्रिय भूषा विरहित, जिनगृह में प्रतिमा प्राकृत।
कांती से अनुपम हैं कल्मष, शांति हेतु मैं नमूँ सतत।।13।।

परम शांति से कषायमुक्ती, को कहती मनहर अभिरूप।
भव के अंतक जिन की प्रतिमा, प्रणमूँ मन विशुद्धि के हेतु।।14।।

दुष्कृतपथ रोधक मम सिद्ध-भक्ति से हुआ पुण्य जो भी।
भव-भव में जिनधर्म हि में, दृढ़ भक्ति रहे फल मिले यही।।15।।

अंचलिका (बैठकर)

भगवन् ! चैत्यभक्ति अरु कायोत्सर्ग किया उसमें जो दोष।
उनकी आलोचन करने को, इच्छुक हूँ धर मन सन्तोष।।
अधो मध्य अरु ऊर्ध्वलोक में, अकृत्रिम कृत्रिम जिनचैत्य।
जितने भी हैं त्रिभुवन के, चउविध सुर करें भक्ति से सेव।।1।।

भवनवासि व्यंतर ज्योतिष, वैमानिक सुर परिवार सहित।
दिव्य गंध सुम धूप चूर्ण से, दिव्य न्हवन करते नितप्रति।।
अर्चें पूजें वंदन करते, नमस्कार वे करें सतत।
मैं भी उन्हें यहीं पर अर्चूं, पूजूँ वदूँ नमूँ सतत।।2।।

दुःखों का क्षय कर्मों का क्षय, होवे बोधि लाभ होवे।
सुगतिगमन हो समाधिमरणं, मम जिनगुण संपति होवे।।3।।

अथ सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-पंचपरमेष्ठिवंदनाक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावंदनास्तवसमेतं पंचमहागुरुभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(पंचांग नमस्कार करके खड़े होकर 3 आवर्त एक शिरोनति करें, मुक्ताशुक्तिमुद्रा से पूर्ववत् 'सामायिक दंडक' पढ़कर 3 आवर्त 1 शिरोनतिपूर्वक कायोत्सर्ग (9 जाप्य) करें पुनः साष्टांग नमस्कार करके खड़े होकर 3 आवर्त 1 शिरोनति कर मुक्ताशुक्तिमुद्रा से 'थोस्सामि स्तवन' पढ़कर पुनरपि 3 आवर्त 1 शिरोनति करके वंदना-मुद्रा से 'पंचमहागुरु भक्ति' पढ़ें।)

पंचमहागुरु भक्ति

(कृतिकर्म विधि सहित)

सुरपति नरपति नागइन्द्र मिल, तीन छत्र धारें प्रभु पर।
पंचमहाकल्याणक सुख के, स्वामी मंगलमय जिनवर।।
अनंत दर्शन ज्ञान वीर्य सुख, चार चतुष्टय के धारी।
ऐसे श्री अर्हंत परमगुरु, हमें सदा मंगलकारी।।1।।

ध्यान अग्निमय बाण चलाकर, कर्मशत्रु को भस्म किये।
जन्म जरा अरु मरणरूप-त्रय नगर जला त्रिपुरारि हुए।।
प्राप्त किये शाश्वत शिवपुर को, नित्य निरंजन सिद्ध बने।
ऐसे सिद्धसमूह हमें नित, उत्तम ज्ञान प्रदान करें।।2।।

पंचाचारमयी पंचाग्नी में जो तप तपते रहते।
द्वादश अंगमयी श्रुतसागर, में नित अवगाहन करते।।
मुक्तिश्री के उत्तम वर हैं, ऐसे श्री आचार्य प्रवर।
महाशीलव्रत ज्ञान-ध्यानरत, देवें हमें मुक्ति सुखकर।।3।।

यह संसार भयंकर दुखकर, घोर महावन है विकराल।
दुखमय सिंह व्याघ्र अति तीक्षण, नख अरु डाढ़ सहित विकराल।।
ऐसे वन में मार्गभ्रष्ट, जीवों को मोक्षमार्ग दर्शक।
हित उपदेशी उपाध्याय गुरु, का मैं वंदन करूँ सतत।।4।।

उग्र-उग्र तप करें त्रयोदश-क्रिया चरित में सदा कुशल।
क्षीण शरीरी धर्मध्यान अरु, शुक्लध्यान में नित तत्पर।।
अतिशय तप लक्ष्मी के धारी, महासाधुगण इस जग में।
महा मोक्षपथगामी गुरुवर, हमको रत्नत्रय निधि दें।।5।।

इस संस्तव से जो जन पंच-परमगुरु का वंदन करते।
वे गुरुतर भव-लता काटकर, सिद्ध सौख्य संपत् लभते।।
कर्मेन्धन के पुंज जलाकर, जग में मान्य पुरुष बनते।
पूर्ण ज्ञानमय परमाह्लादक, स्वात्म सुधारस को चखते।।6।।

–दोहा –

अर्हत् सिद्धाचार्य अरु, पाठक साधु महान।
पंचपरमगुरु हों मुझे, भव - भव में सुखखान।।7।।

अंचलिका (बैठकर)

–दोहा –

भगवन् पंचमहागुरु, भक्ति कायोत्सर्ग।
करके आलोचन विधि, करना चाहूँ सर्व।।1।।

अष्ट महाशुभ प्रातिहार्य, संयुत अर्हंत जिनेश्वर हैं।
अष्ट गुणान्वित ऊर्ध्वलोक, मस्तक पर सिद्ध विराज रहे।।
अठ प्रवचन माता संयुत हैं, श्री आचार्य प्रवर जग में।
आचारादिक श्रुतज्ञानामृत, उपदेशी पाठकगण हैं।।2।।

रत्नत्रय गुण पालन में रत, सर्वसाधु परमेष्ठी हैं।
नितप्रति अर्चूं पूजूँ वंदूँ, नमस्कार मैं करूँ उन्हें।।
दुःखों का क्षय कर्मों का क्षय, होवे बोधि लाभ होवे।
सुगतिगमन हो समाधिमरणं, मम जिनगुण संपति होवे।।3।।

नवदेवता पूजन

–गीता छन्द –

अरिहंत सिद्धाचार्य पाठक, साधु त्रिभुवन वंद्य हैं।
जिनधर्म जिनआगम जिनेश्वर, मूर्ति जिनगृह वंद्य हैं।।
नव देवता ये मान्य जग में, हम सदा अर्चा करें।
आह्वान कर थापें यहाँ, मन में अतुल श्रद्धा धरें।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अथाष्टकं –

गंगानदी का नीर निर्मल, बाह्य मल धोवे सदा।
अंतर मलों के क्षालने को, नीर से पूजूँ मुदा।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर मिश्रित गंध चंदन, देह ताप निवारता।
तुम पाद पंकज पूजते, मन ताप तुरतहिं वारता।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षीरोदधी के फेन सम सित, तंदुलों को लायके।
उत्तम अखंडित सौख्य हेतु, पुंज नवसु चढ़ायके।।

नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चम्पा चमेली केवड़ा, नाना सुगन्धित ले लिये।
भव के विजेता आपको, पूजत सुमन अर्पण किये।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पायस मधुर पकवान मोदक, आदि को भर थाल में।
निज आत्म अमृत सौख्य हेतू, पूजहूँ नत भाल मैं।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर ज्योति जगमगे, दीपक लिया निज हाथ में।
तुम आरती तम वारती, पाऊँ सुज्ञान प्रकाश मैं।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंधधूप अनूप सुरभित, अग्नि में खेऊँ सदा।
निज आत्मगुण सौरभ उठे, हों कर्म सब मुझसे विदा।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर अमरख आम्र अमृत, फल भराऊँ थाल में।
उत्तम अनूपम मोक्ष फल के, हेतु पूजूँ आज मैं।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध अक्षत पुष्प चरु, दीपक सुधूप फलार्घ्य ले।
वर रत्नत्रय निधि लाभ यह, बस अर्घ्य से पूजत मिले।।
नवदेवताओं की सदा जो, भक्ति से अर्चा करें।
सब सिद्धि नवनिधि रिद्धि मंगल, पाय शिवकांता वरें।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा –

जलधारा से नित्य मैं, जग की शांति हेत।
नवदेवों को पूजहूँ, श्रद्धा भक्ति समेत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

नानाविध के सुमन ले, मन में बहु हरषाय।
मैं पूजूँ नव देवता, पुष्पांजली चढ़ाय।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य – **ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

सोरठा – **चिच्चिंतामणिरत्न, तीन लोक में श्रेष्ठ हो।**
गाऊँ गुणमणिमाल, जयवंते वर्तो सदा।।1।।

(चाल-हे दीनबन्धु श्रीपति.....)

जय जय श्री अरिहंत देवदेव हमारे।
जय घातिया को घात सकल जंतु उबारे।।
जय जय प्रसिद्ध सिद्ध की मैं वंदना करूँ।
जय अष्ट कर्ममुक्त की मैं अर्चना करूँ।।2।।

आचार्य देव गुण छत्तीस धार रहे हैं।
दीक्षादि दे असंख्य भव्य तार रहे हैं।।
जैवंत उपाध्याय गुरु ज्ञान के धनी।
सन्मार्ग के उपदेश की वर्षा करें घनी।।3।।

जय साधु अठाईस गुणों को धरें सदा।
निज आत्मा की साधना से च्युत न हों कदा।।
ये पंचपरमदेव सदा वंद्य हमारे।
संसार विषम सिंधु से हमको भी उबारें।।4।।

जिनधर्म चक्र सर्वदा चलता ही रहेगा।
जो इसकी शरण ले वो सुलझता ही रहेगा।।
जिन की ध्वनि पीयूष का जो पान करेंगे।
भव रोग दूर कर वे मुक्ति कांत बनेंगे।।5।।

जिन चैत्य की जो वंदना त्रिकाल करे हैं।
वे चित्स्वरूप नित्य आत्म लाभ करे हैं।।
कृत्रिम व अकृत्रिम जिनालयों को जो भजें।
वे कर्मशत्रु जीत शिवालय में जा बसें।।6।।

नव देवताओं की जो नित आराधना करें।
वे मृत्युराज की भी तो विराधना करें।।
मैं कर्मशत्रु जीतने के हेतु ही जजूँ।
सम्पूर्ण ''ज्ञानमती'' सिद्धि हेतु ही भजूँ।।7।।

–दोहा –

नवदेवों को भक्तिवश, कोटि कोटि प्रणाम।
भक्ती का फल मैं चहूँ, निजपद में विश्राम।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतिधारा, पुष्पांजलिः।

–गीता छंद –

जो भव्य श्रद्धाभक्ति से, नवदेवता पूजा करें।
वे सब अमंगल दोष हर, सुख शांति में झूला करें।।
नवनिधि अतुल भंडार ले, फिर मोक्ष सुख भी पावते।
सुखसिंधु में हो मग्न फिर, यहाँ पर कभी न आवते।।1।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

ढाईद्वीप पूजा

(समुच्चय पूजा)

-अथ स्थापना-शंभु छंद-

अरिहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्वसाधु परमेष्ठी हैं।
जिनधर्म जिनागम जिनप्रतिमा जिनमंदिर सब जग पूजित हैं।।
इन ढाईद्वीप में इक सौ सत्तर कर्मभूमि में ही ये हैं।
इस ही प्रमाण है सिद्धशिला यहाँ से ही मुक्ती पाते हैं।।1।।

-दोहा-

पंचकल्याणक तीर्थ भी, ढाई द्वीप में मान्य।
नमूँ नमूँ मैं भक्तियुत, पाऊँ निज सुख साम्य।।2।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालय-तीर्थंकरसमवसरणपंचकल्याणकतीर्थसर्वसिद्धसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीसार्धद्वयद्वीपसंबंधि-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालय-तीर्थंकरसमवसरणपंचकल्याणकतीर्थसर्वसिद्धसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्रीसार्धद्वयद्वीपसंबंधि-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालय-तीर्थंकरसमवसरणपंचकल्याणकतीर्थसर्वसिद्धसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथ अष्टकं-शंभु छंद

गंगा नदि का शुचि जल लेकर, प्रभु चरण चढ़ाने आये हैं।
भव भव का कलिमल धोने को, श्रद्धा से अति हरषाये हैं।।
ढाईद्वीपों के नव देवों को, नमें कल्याणकतीर्थ नमें।
अकृत्रिम कृत्रिम जिनप्रतिमा, को सिद्धो को हम कोटि नमें।।1।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालय-तीर्थंकरसमवसरणपंचकल्याणकतीर्थसर्वसिद्धेभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हरिचंदन कुंकुम गंध लिये, जिनचरण चढ़ाने आये हैं।
मोहारिताप संतप्त हृदय, प्रभु शीतल करने आये हैं।।ढाई..।।2।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालय-तीर्थंकरसमवसरण-पंचकल्याणकतीर्थ-सर्वसिद्धेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षीराम्बुधि फेन सदृश उज्ज्वल, अक्षत धोकर ले आये हैं।
क्षय विरहित अक्षय सुख हेतु, प्रभु पुंज चढ़ाने आये हैं।।ढाई..।।3।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालय-तीर्थंकरसमवसरण-पंचकल्याणकतीर्थ-सर्वसिद्धेभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

बेला चंपक अरविंद कुमुद, सुरभित पुष्पों को लाये हैं।
मदनारिजयी तव चरणों में, हम अर्पण करने आये हैं।।ढाई..।।4।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालय-तीर्थंकरसमवसरण-पंचकल्याणकतीर्थ-सर्वसिद्धेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पूरणपोली खाजा गूझा, मोदक आदिक बहु लाये हैं।
निज आतम अनुभव अमृत हित, नैवेद्य चढ़ाने आये हैं।।ढाई..।।5।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालय-तीर्थंकरसमवसरण-पंचकल्याणकतीर्थ-सर्वसिद्धेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणिमय दीपक में ज्योति जले, सब अंधकार क्षण में नाशे।
दीपक से पूजा करते ही, सज्ज्ञान ज्योति निज में भासे।।ढाई..।।6।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालय-तीर्थंकरसमवसरण-पंचकल्याणकतीर्थ-सर्वसिद्धेभ्यः मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध विमिश्रित धूप सुरभि, धूपायन में खेते क्षण ही।
कटु कर्म दहन हो जाते हैं, मिलता समरस सुख तत्क्षण ही।।
ढाईद्वीपों के नव देवों, को नमें कल्याणकतीर्थ नमें।
अकृत्रिम कृत्रिम जिनप्रतिमा, को सिद्धो को हम कोटि नमें।।7।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालय-तीर्थंकरसमवसरण-पंचकल्याणकतीर्थ-सर्वसिद्धेभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

एला केला अंगूरों के, गुच्छे अतिसरस मधुर लाये।
परमानंदामृत चखने हित, फल से पूजन कर हर्षाये।।ढाई..।।8।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालय-तीर्थंकरसमवसरण-पंचकल्याणकतीर्थ-सर्वसिद्धेभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत पुष्प चरु, वर दीप धूप फल लाये हैं।
निजगुण अनंत की प्राप्ति हेतु, प्रभु अर्घ्य चढ़ाने आये हैं।।ढाई..।।9।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालय-तीर्थंकरसमवसरण-पंचकल्याणकतीर्थ-सर्वसिद्धेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-उपेन्द्रवज्रा छंद-

त्रैलोक्य शांतीकर शांतिधारा, श्री तीर्थंकरों के पदकंज धारा।
निज स्वांत शांतीहित शांतिधारा, करते मिले हैं भवदधि किनारा।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुरकल्पतरु के वर पुष्प लाऊँ, पुष्पांजलि कर निज सौख्य पाऊँ।
संपूर्ण व्याधी भय को भगाऊँ, शोकादि हरके सब सिद्धि पाऊँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य – **ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-त्रैकालिकनवदेवताभ्यो नमः।**

जयमाला

जय ढाईद्वीप के अर्हत्प्रभु, जय सिद्ध आदि नवदेवों की।
जय जय जिनधर्म जिनागम की, जय जिनप्रतिमा जिनमंदिर की।।
जय स्वयं सिद्ध शाश्वत जिनगृह, चिंतामणि चिंतित फलदाता।
जय कामधेनु सुर कल्पवृक्ष, पारसमणि वांछित फलदाता।।1।।

जय पांच मेरू वक्षारगिरी, गजदन्त कुलाचल के मंदिर।
विजयारध, जम्बू शालमली, तरु के इष्वाकृति के मंदिर।।
मनुजोत्तर पर्वत तक ये त्रयशत, अट्ठानवे जिनालय हैं।
इन सबमें इक सौ आठ, एक सौ आठ जैन प्रतिमाएँ हैं।।2।।

स्वात्मानन्दैक परम अमृत, झरने से झरते समरस को।
जो पीते रहते हैं मुनिगण, वे भी उत्कण्ठित दर्शन को।।
वे ध्यान धुरंधर ध्यान मूर्ति, यतियों को ध्यान सिखाती हैं।
भव्यों को अतिशय पुण्यमयी, अनवधि पीयूष पिलाती हैं।।3।।

मेरु के त्रिभुवनतिलक नाम, जिनमंदिर में सुर जाते हैं।
इक सहस आठ घट क्षीरजलधि, पय से अभिषेक रचाते हैं।।
भावनपति दस व्यंतरें आठ, ज्योतिषपति दो कल्पामर के।
बारह सुरपति मिल इंद्र सभी, बत्तीस जजें जिन रुचि धरके।।4।।

इस ढाईद्वीप के पाँच भरत, पंचैरावत में आर्यखंड।
इनमें चौथे कालों में ही, चौबिस चौबिस तीर्थेश वंद्य।।
ये सर्व अनंतानंतों ही, त्रयकालिक तीर्थंकर मानें।
मैं इनको वंदूँ शीश झुका, ये मेरे जन्म मरण हानें।।5।।

पांचों विदेह के सीमंधर, युगमंधर आदि बीस जिनवर।
ये सतत विहार करें वहाँ पर, मैं नमूँ नमूँ नित अंजलिकर।।
सब इक सौ साठ विदेह, भरत, ऐरावत मिल इक सौ सत्तर।
इन कर्मभूमि में अधिक-अधिक, हो सकते इतने तीर्थंकर।।6।।

इन तीर्थंकर को नित्य नमूं, निज आत्म सुखामृत पा जाऊँ।
इन कर्मभूमि में ही अर्हंत, सिद्ध होते उनको ध्याऊं।।

आचार्य उपाध्याय साधूगण, इन कर्मभूमि में होते हैं।
जिनधर्म जिनागम यहीं रहें, इन वंदन अघमल धोते हैं।।7।।
इन कर्मभूमि में ही मानव, जिनबिंब जिनालय बनवाते।
तीर्थंकर पंच परमगुरु की, प्रतिमा बनवाकर पधराते।।
नवदेव बिंब भी बनवाते, जिनयक्ष यक्षिणी बनवाते।
दिक्पाल क्षेत्रपालों से युत, जिनमंदिर अति शोभा पाते।।8।।

सब कत्रिम जिनमंदिर प्रणमूँ, जिनप्रतिमाओं को नित्य नमूं।
हीरा माणिक रत्नादि घटित, पाषाण आदि जिनबिंब नमूँ।।
अर्हंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय, साधु पंच परमेष्ठी को।
मैं नित्य नमूँ जिनधर्म जिनागम, जिनमंदिर जिनमूर्ती को।।9।।

ढाई द्वीपों के मंदिर तक, मानव विद्याधर जाते हैं।
आकाश गमन ऋद्धीधारी, ऋषिगण भी दर्शन पाते हैं।।
आवो आवो हम भी पूजें, ध्यावें वंदे गुणगान करें।
भव-भव के संचित कर्मपुंज, सब नष्ट करें शिव प्राप्त करें।।10।।

त्रिभुवन चूड़ामणि सिद्धशिला, पैंतालिस लाख सुयोजन की।
त्रयकालिक सिद्ध अनंतानंत, इसी पर तिष्ठें नित्य सभी।।
इस सिद्धशिला को नित्य नमूँ, सब सिद्धों की वंदना करूँ।
निज 'ज्ञानमती' ज्योतिर्माला, पहनूँ फिर मुक्त्यंगना वरूँ।।11।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयपंचकल्याणकतीर्थसर्वसिद्धेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नरसुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.1)

सिद्ध पूजा

अथ स्थापना–शंभु छन्दः

(चाल–श्रीपति जिनवर)

सिद्धी के स्वामी सिद्धचक्र, सब जन को सिद्धी देते हैं।
साधक आराधक भव्यों के, भव-भव के दुःख हर लेते हैं।।
निज शुद्धात्मा के अनुरागी, साधूजन उनको ध्याते हैं।
स्वात्मैक सहज आनंद मगन, होकर वे शिव सुख पाते हैं।।1।।

–दोहा–

सिद्धों का नित वास है, लोक शिखर शुचि धाम।
नमूं नमूं सब सिद्ध को, सिद्ध करो मम काम ।।2।।
मनुज लोक भव सिद्धगण, त्रैकालिक सुखदान।
आह्वानन कर मैं जजूं, यहां विराजो आन ।।3।।

ॐ ह्रीं सार्द्धद्वयद्वीपसंबंधिसकलसिद्धसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं सार्द्धद्वयद्वीपसंबंधिसकलसिद्धसमूह! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं सार्द्धद्वयद्वीपसंबंधिसकलसिद्धसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सिन्नधीकरणं।

–अथाष्टकं–गीता छंद–

क्षीरांबुधी का सलिल उज्ज्वल, स्वर्णझारी में भरूँ।
निज कर्म मल प्रक्षालने को, जिन चरण धारा करूँ।।
कर सप्त प्रकृती घात क्षायिक, शुद्ध समकितवान जो।
नरलोक भव सब सिद्ध, त्रैकालिक जजूँ गुणखान जो।।1।।

ॐ ह्रीं सार्द्धद्वयद्वीपसंबंधिसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर चंदन गंध सुरभित, स्वर्णद्रव सम लायके।
भव ताप शीतल हेतु जिनवर, पाद चर्चूं आयके।।

त्रिभुवन प्रकाशी ज्ञान केवल, सूर्य रश्मीवान जो।
नरलोकभव सब सिद्ध, त्रैकालिक जजूँ गुणखान जो ।।2।।

ॐ ह्रीं सार्द्धद्वयद्वीपसंबंधिसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शशि रश्मि सम उज्ज्वल अखंडित, शुद्ध अक्षत लाय के।
अक्षय सुपद के हेतु जिनवर, अग्र पुंज चढ़ाय के ।।
जगदर्शि केवल दरश संयुत, सिद्ध महिमावान जो।
नरलोक भव सब सिद्ध, त्रैकालिक जजूँ गुणखान जो ।।3।।

ॐ ह्रीं सार्द्धद्वयद्वीपसंबंधिसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मल्ली चमेली वकुल आदिक, पुष्प सुन्दर लाय के।
भवमल्ल विजयी जिन चरण में, हर्ष युक्त चढ़ाय के ।।
जिनराज वीर्य अनंत से युत, कर्म अन्तिम हान जो।
नरलोक भव सब सिद्ध, त्रैकालिक जजूँ गुणखान जो ।।4।।

ॐ ह्रीं सार्द्धद्वयद्वीपसंबंधिसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मिष्ठान्न पूरणपोलिका, लाडू इमरती लाय के।
भव भव क्षुधा से दूर जिनवर, पाद अग्र चढ़ाय के।।
सूक्ष्मत्व गुण संयुक्त फिर भी, सब जगत का भान जो।
नरलोक भव सब सिद्ध, त्रैकालिक जजूँ गुणखान जो ।।5।।

ॐ ह्रीं सार्द्धद्वयद्वीपसंबंधिसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर दीपक ज्योति जगमग, रत्नदीपक में दिपे।
जिन आरती से निज हृदय में, ज्ञान की ज्योती दिपे।।

अवगाहना गुणयुत तथा, दें सर्व को स्थान जो।
नरलोक भव सब सिद्ध, त्रैकालिक जजूँ गुणखान जो ।।6।।

ॐ ह्रीं सार्द्धद्वयद्वीपसंबंधिसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यः मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दश गंध धूप सुगंध लेकर, अगनि में खेऊँ अबे।
सब अष्ट कर्म प्रजाल हेतू, सिद्ध गुण सेवूँ सबे।।
गुण अगुरुलघु से युक्त भी, लोकाग्र पे नित थान जो।
नरलोक भव सब सिद्ध, त्रैकालिक जजूँ गुणखान जो।।7।।

ॐ ह्रीं सार्द्धद्वयद्वीपसंबंधिसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर अमृत फल श्रीफल, सरस अमृत सम लिया।
प्रभु मोक्षफल के हेतु तुम पद, अग्र में अर्पण किया।।
सुख पूर्ण अव्याबाध युत, अतिशय अतीन्द्रियवान जो।
नरलोक भव सब सिद्ध, त्रैकालिक जजूँ गुणखान जो।।8।।

ॐ ह्रीं सार्द्धद्वयद्वीपसंबंधिसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध अक्षत पुष्प नेवज, दीप धूप फलादि ले।
अनुपम अनंतानंत गुणयुत, सिद्ध को अर्चूं भले।।
हैं सिद्धचक्र अनादि अनिधन, परम ब्रह्म प्रधान जो।
नरलोक भव सब सिद्ध, त्रैकालिक जजूँ गुणखान जो ।।9।।

ॐ ह्रीं सार्द्धद्वयद्वीपसंबंधिसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

अचिन्त्य महिमा के धनी, परमानंद स्वरूप।
शांतीधारा करत ही, मिले शांति सुखरूप ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

कमल केतकी मल्लिका, पुष्प सुगन्धित लाय।
तुम पद पुष्पांजलि करूँ, सुखसंपति अधिकाय ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य — **ॐ ह्रीं सार्द्धद्वयद्वीपसंबंधिसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

सकल सिद्ध परमात्मा, निकल अमल चिद्रूप।
गाऊँ तुम जयमालिका, सिद्धचक्र शिव भूप ।।1।।

चाल (हे दीन बंधु श्रीपति.....)

जै सिद्धचक्र मध्यलोक से भये सभी।
जै सिद्धचक्र तीन काल के कहे सभी।।
जै जै त्रिलोक अग्रभाग पे विराजते।
जै जै अनादि औ अनंत सिद्ध सासते।।1।।

जो जंबूद्वीप से अनंत सिद्ध हुए हैं।
क्षारोदधी[1] से भी अनंत सिद्ध हुए हैं।।
जो धातकी सुद्वीप से भी सिद्ध अनंता।
कालोदधि से पुष्करार्ध से भी अनंता।।2।।

इन ढाई द्वीप से हुए जो भूतकाल में।
जो हो रहे हैं और होंगे भाविकाल में।।
इस विध अनंतानंत जीव सिद्ध हुए हैं।
जो भव्य को समस्त सिद्धि अर्थ हुए हैं।।3।।

जो घात मोहनीय को सम्यक्त्व लहे हैं।
ज्ञानावरण को घात पूर्ण ज्ञान लहे हैं।।
कर दर्शनावरण विनाश सर्व दर्शिता।
त्रैलोक्य औ अलोक एक साथ झलकता।।4।।

1. लवण समुद्र।

होते कभी न श्रांत चूंकि वीर्य अनंता।
ये सिद्ध सभी अंतराय कर्म के हंता।।
आयू करम को नाश गुण अवगाहना धरें।
जो सर्व सिद्ध के लिए अवगाहना करें।।5।।

अवकाश दान में समर्थ सिद्ध कहाये।
अतएव एक में अनंतानंत समाये।।
फिर भी निजी अस्तित्व लिये सिद्ध सभी हैं।
पर के स्वरूप में विलीन हो न कभी हैं।।6।।

कर नाम कर्म नाश वे सूक्ष्मत्व गुण धरें।
अर गोत्र कर्म नाश अगुरुलघू गुण वरें।।
वे वेदनी विनाश पूर्ण सौख्य भरे हैं।
निर्बाध अव्याबाध नित्यानंद धरे हैं।।7।।

वे आठ कर्म नाश आठ गुण को धारते।
फिर भी अनंत गुण समुद्र नाम धारते।।
चैतन्य चमत्कार चिदानंद स्वरूपी।
चिंतामणी चिन्मात्र चैत्यरूप अरूपी।।8।।

सौ इंद्र वंद्य हैं त्रिलोक शिखामणी हैं।
सम्पूर्ण विश्व के अपूर्व विभामणी हैं।।
वे जन्म मृत्यु शून्य शुद्ध बुद्ध कहाते।
निर्मुक्त निरंजन सु निराकार कहाते।।9।।

जो सिद्धचक्र की सदा आराधना करें।
संसार चक्र नाश वे शिवसाधना करें।।
मैं भी अनंत चक्र भ्रमण से उदास हूँ।
हो ''ज्ञानमती'' पूर्ण नाथ आप पास हूँ।।10।।

–घत्ता–

जय सिद्ध अनंता, शिवतिय कंता।
भव दुख हन्ता तुम ध्याऊँ।।
जय जय सुख कंदन, नित्य निरंजन।
पूजत ही निज सुख पाऊँ।।11।।

ॐ ह्रीं सार्द्धद्वयद्वीपसंबंधिसकलसिद्धपरमेष्ठिभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नरसुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.2)

सुदर्शनमेरु जिनालय पूजा

अथ स्थापना-गीता छंद

त्रिभुवन भवन के मध्य सर्वोत्तम सुदर्शन मेरु है।
यह प्रथम जंबूद्वीप में, सर्वोच्च मेरु सुमेरु है।।
सोलह जिनालय में जिनेश्वर, मूर्तियाँ हैं सासती।
थापूँ यहाँ उनको जजूँ, वे सर्व दुख संहारती।।1।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिंबसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिंबसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिंबसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथ अष्टकं-अडिल्ल छंद

गंगानदि को प्रासुक जल घट में भरूँ।
जल से पूजा करते सब कलिमल हरूँ।।
मेरु सुदर्शन के सोलह जिनगेह को।
पूजूँ जिनवर बिंब सभी धर नेह को।।1।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिंबेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

गंध सुगंधित अष्ट गंध कर में लिया।
जिन पद चर्चत चाह दाह का क्षय किया।।मेरु.।।2।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिंबेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्ता फलसम तंदुल धवल अखंड हैं।
पुंज धरत जिन आगे होत अनंद है।।मेरु.।।3।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिंबेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरपादप के सुरभित सुमन मंगायके।
कामजयी जिनपाद जजूँ शिर नाय के।।
मेरु सुदर्शन के सोलह जिनगेह को।
पूजूँ जिनवर बिंब सभी धर नेह को।।4।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मोदक बरफी पुआ सरस चरु ले लिया।
क्षुधाव्याधि हर तुम पद में अर्पण किया।।मेरु.।।5।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिंबेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत भर दीपक ज्योति सहित आरति करूँ।
मोह ध्वांत हर जिन अर्चूं भ्रम तम हरूँ।।मेरु.।।6।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिंबेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु वर धूप अग्नि में खेवते।
दुष्ट कर्म अरि दग्ध हुये तुम सेवते।।मेरु.।।7।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिंबेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता काजू द्राक्ष फलों को लाय के।
सरस मोक्ष फल हेतु जजूँ हरषाय के।।मेरु.।।8।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंधादिक अष्ट द्रव्य भर थाल में।
पूजूं अर्घ चढ़ाऊँ नाऊँ भाल मैं।।मेरु.।।9।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

परम शांति के हेतु, शांतिधारा मैं करूँ।
सकल जगत में शांति, सकल संघ में हो सदा।।10।।

शांतये शांतिधारा।

चंपक हर सिंगार, पुष्प सुगंधित अर्पिते।
होवे सुख अमलान, दुख दारिद्र पलायते।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

प्रत्येक अर्घ्य

-दोहा-

सर्वश्रेष्ठ गिरिराज हैं, मेरु सुदर्शन नाम।
चारों वन के जिनभवन, नितप्रति करूँ प्रणाम।।1।।

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-चौबोल छंद-

मेरु सुदर्शन के पृथ्वी पर, भद्रसाल वन रम्य महान।
पूर्व दिशा में जिन मंदिर है, त्रिभुवन तिलक अतुल सुखदान।।
जल फल आदिक अर्घ्य सजाकर, पूजूँ जिनप्रतिमा गुणखान।
रोग शोक भय संकट हर कर, पाऊँ अविचल सौख्य निधान।।1।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयसर्वजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम सुराचल भद्रसाल में, दक्षिण दिश जिनमंदिर जान।
सुर नर किन्नर यक्ष यक्षिणी, विद्याधर गण पूजें आन।।जल.।।2।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितदक्षिणदिक्जिनालयसर्वजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम देवगिरि भद्रसाल में, पश्चिमदिश जिन भवन अनूप।
रत्नत्रय निधि के इच्छुक जन, पूजन करत लहें सुखरूप।।जल.।।3।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितपश्चिमदिक्जिनालयसर्वजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम मेरु के भद्रसाल में, उत्तर दिश जिनराज निकेत।
भव भय दुःख हरण हेतू भवि, नित प्रति पूजें भक्ति समेत।।
जल फल आदिक अर्घ्य सजाकर, पूजूँ जिनप्रतिमा गुणखान।
रोग शोक भय संकट हर कर, पाऊँ अविचल सौख्य निधान।।4।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितउत्तरदिक्जिनालयसर्वजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-रोला छंद-

मेरु सुदर्शन विषैं, सुभग नंदन वन जानो।
सुरनरगण से पूज्य, पूर्व दिक् जिनगृह मानो।।
जल गंधादि मिलाय, अर्घ्य ले पूजों भाई।
रोग शोक मिट जाय, मिले निज संपति आई।।5।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितपूर्वदिग्जिनालयसर्वजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदन वन के मांहि, जिनालय दक्षिण दिश हैं।
नित्य महोत्सव साज, देवगण पूजनरत हैं।।जल.।।6।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितदक्षिणदिग्जिनालयसर्वजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम दिश जिननिलय, मनोहर नंदनवन में।
सुर विद्याधर रहें, सतत भक्तीरत जिन में।।जल.।।7।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितपश्चिमदिग्जिनालयसर्वजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदनवन के उत्तर, जिन मंदिर सुखकारी।
उसमें जिनवर बिंब, दुरितहर मंगलकारी।।जल.।।8।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितदक्षिणदिग्जिनालयसर्वजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-दोहा-

वन सौमनस महान है, मेरु सुदर्शन माहिं।
पूरब दिश में जिन भवन, पूजूँ अर्घ्य चढ़ाहिं।।9।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयसर्वजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वन सौमनस जिनेश गृह, दक्षिण दिशा मंझार।
वसु विधि अर्घ्य संजोय के, पूजों हो भव पार।।10।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितदक्षिणदिक्जिनालयसर्वजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम दिश सौमनस के, स्वर्णमयी जिनधाम।
भक्तिभाव से अर्घ्य ले, पूजों जिनवर धाम।।11।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितपश्चिमदिक्जिनालयसर्वजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरदिश सौमनस में, श्री जिनभवन महान्।
त्रिभुवनतिलक प्रसिद्ध है, जजूँ अर्घ्य ले आन।।12।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितउत्तरदिक्जिनालयसर्वजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-शंभु छंद-

मेरू पर चौथा पांडुकवन, उसके पूरब दिश सुंदर है।
रत्नों की मूर्ति से संयुत, मणिकनकमयी जिनमंदिर हैं।।
जल गंधादिक वसु द्रव्य लिये, नित पूजा कर अर्घ्य करूँ।
संसार जलधि से तिरने को, जिन भक्ती नौका प्राप्त करूँ।।13।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिपाण्डुकवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयसर्वजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पांडुकवन में दक्षिण दिश का, जिन भवन अनूपम कहलाता।
जो दर्शन वंदन करते हैं, उनको यह अनुपम फलदाता।।जल.।।14।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिपाण्डुकवनस्थितदक्षिणदिक्जिनालयसर्वजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पांडुकवन के पश्चिम दिश में, जिन चैत्यालय महिमाशाली।
सुरनर विद्याधर से पूजित, सब ताप हरे गुणमणिमाली।।
जल गंधादिक वसु द्रव्य लिये, नित पूजा कर अर्घ्य करूँ।
संसार जलधि से तिरने को, जिन भक्ती नौका प्राप्त करूँ।।15।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिपाण्डुकवनस्थितपश्चिमदिक्जिनालयसर्वजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पांडुकवन के उत्तरदिश में, शुभ त्रिभुवनतिलक जिनालय है।
नामोच्चारण से पाप दहे, भक्तों के लिए सुखालय है।।जल.।।16।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिपाण्डुकवनस्थितउत्तरदिक्जिनालयसर्वजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य-अडिल्ल छंद

प्रथम मेरु के सोलह जिनगृह नित जजूँ।
पूरण अर्घ्य चढ़ाय पूर्ण सुख को भजूँ।।
काम विजेता जिनवरबिंब मनोज्ञ हैं।
पूजत ही निष्काम बनूँ अतियोग्य मैं।।1।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोलह जिनगृह में जिनप्रतिमा जानिये।
सत्रह सौ अट्ठाइस संख्य बखानिये।।
प्रतिजिनगृह में इक सौ आठ प्रमाण हैं।
पूजूँ मैं रूचिधार मुझे सुखखान है।।2।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनालयमध्यविराजमानएकसहस्रसप्तशत-अष्टाविंशतिजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पांडुकवन के विदिक् में, शिला चार अभिराम।
पूजँ अर्घ चढ़ाय के, मिले स्वात्म विश्राम।।3।।

ॐ ह्रीं पांडुकादिशिलाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य-**ॐ ह्रीं त्रिलोक्यशाश्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

-दोहा-

सर्वोत्तम सर्वोच्च हैं, प्रथम मेरु गिरिराज।
उसकी यह जयमालिका, हर्षित गाऊँ आज।।1।।

-शंभु छंद-

जय मेरु सुदर्शन है अनुपम, सोलह चैत्यालय से सोहे।
अध्यात्म शिरोमणि योगीजन, उनका भी अतिशय मन मोहे।।
उपवन वापी से कूटों से, परकोटों से सुर भवनों से।
मंडित रमणीक महासुन्दर, कांचन मणिमय शुभरत्नों से।।2।।

पृथ्वी पर भद्रसाल वन है, चंपक तरु आदिक से भाता।
है पांचशतक योजन ऊपर, नदंनवन अतिशय सुखदाता।।
इससे साढ़े बांसठ हजार, योजन ऊपर सौमनस वनी।
छत्तीस हजार महायोजन, ऊपर पांडुकवन सौख्यघनी।।3।।

चारों वन के चारों दिश में, अकृत्रिम चैत्यालय मानो।
प्रति मंदिर इक सौ आठ कही, जिन प्रतिमा अतिशययुत जानो।।
इनके दर्शन से घोर महा, मिथ्यात्व तिमिर भी नश जाता।
सम्यग्दर्शन की ज्योति जगे, आत्मा आत्मा को लख पाता।।4।।

भव भव से संचित पाप राशि, इक क्षण में भस्म हुआ करती।
जिनराज चरण की भक्ती ही, भवि के भव भव दुःख को हरती।।
पांडुकवन की विदिशाओं में, पांडुक आदिक हैं चार शिला।
तीर्थंकर के अभिषव जल से, वे पूज्य हुईं सुरवंद्य तुला।।5।।

जय भद्रसाल के जिनमंदिर, जय नंदनवन के जिनगेहा।
जय सौमनसं पांडुकवन के, जिनभवन जजूँ मैं धरनेहा।।
ये मूर्ति अचेतन होकर भी, चेतन को वांछित फल देतीं।
जो पूजें ध्यावें भक्ति करें, उनके सब संकट हर लेतीं।।6।।

-दोहा-

मेरुसुदर्शन की भविक, पूजा करो पुनीत।
मेरुसदृश उत्तुंग फल, लहो शीघ्र ही मीत।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशजिनालयसर्वजिनबिंबेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.3)

सुदर्शनमेरु संबंधी षट् कुलाचल जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–शंभु छंद–

छह कुल पर्वत हिमवन आदिक, उनमें छह जिनवर मंदिर हैं।
यमराज व्यथा निरवारणहित, नित पूजा करत पुरंदर हैं।।
गणधर मुनिगण नितप्रति ध्याते, परमानंदामृत पीते हैं।
वे मोहराज यमराज महामृत्यू राजा भी जीते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितजिनालयस्थसर्वजिन-बिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितजिनालयस्थसर्वजिन-बिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितजिनालयस्थसर्वजिन-बिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अडिल्ल छंद–

हिमवन द्रह को नीर लाय प्रासुक किया।
कर्म कालिमा क्षालन हित धारा दिया।।
हिमवन् आदी छह कुल पर्वत मणिमया।
तापर जिनगृह प्रतिमा पूजों सुख भया।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन में कर्पूर मिलाय सुवासिया।
जिनपद पूजों भव्य सकल अघ नाशिया।।हिमवन्.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल अक्षत धोय लिये मन भावने।
पुंज चढ़ाऊँ जिन सन्मुख सुख पावने।।
हिमवन् आदी छह कुल पर्वत मणिमया।
तापर जिनगृह प्रतिमा पूजों सुख भया।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कमल केतकी चंप चमेली लाइया।
मन प्रफुल्ल कर फुल्ल चढ़ा हित चाहिया।।हिमवन्.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

बालूसाही रसगुल्ला मोदक लिया।
क्षुधापिशाची नाशो, प्रभु अर्पण किया।।हिमवन्. ।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक में कर्पूर जला आरति करूँ।
मोह ध्वांत निरवार सकल आरत हरूँ।।हिमवन्.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप धूपदह में खेऊँ सुरभित भली।
दश दिश महक उठी, तुरतहि आये अली।।हिमवन्.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम्र सेवफल आडू, लीची संतरा।
सरस मधुर फल लाय, पूजहूँ जिनवरा।।हिमवन् ।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वसु विध अर्घ्य बनाय, थाल भर के लिया।
जिन गुणगाय बजाय, अर्घ्य अर्पण किया।।
हिमवन् आदी छह कुल पर्वत मणिमया।
तापर जिनगृह प्रतिमा पूजों सुख भया।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

पद्म सरोवर नीर, सुवरण झारी में भरूँ।
जिनपद धारा देय, भववारिधि से उत्तरूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुवरण पुष्प मंगाय, प्रभु चरणन अर्पण करूँ।
वर्ण गंध रस फास, विरहित जिन पद को वरूँ।।11।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

–सोरठा–

जम्बूद्वीप सुमेरु, दक्षिण उत्तर कुलगिरी।
इनके छह जिनगेह, नितप्रति वंदूँ भाव से।।1।।

इति सुमेरुपर्वतस्य दक्षिणोत्तरकुलगिरिस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–सुगीतिका छंद–

'हिमवान' पर्वत कनकद्युतिमय द्वय तरफ बहुवर्ण का।
वर कूट ग्यारह में कहा, इक सिद्धकूट जिनिंद का।।
जिनराज बिंब सुरत्नमय पूजा करूँ अति चाव से।
संसार खार अपार सागर, तिरूँ भक्ती नाव से।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिहिमवन्पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर्वत 'महाहिमवान्' चांदी वर्ण का सुन्दर दिखे।
द्वय पार्श्व नाना मणि खचित पे एक जिनमंदिर दिखे।।

जिनराज बिंब सुरत्नमय पूजा करूँ अति चाव से।
संसार खार अपार सागर, तिरूँ भक्ती नाव से।।2।।

ॐ ह्रींश्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिमहाहिमवन्पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-सर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पवर्त 'निषध' है तप्त स्वर्णिम वर्ण बहुद्वय पार्श्व है।
ह्रद वेदिका वन कूट नव में एक जिन आवास है।।
जिनराज बिंब सुरत्नमय पूजा करूँ अति चाव से।
संसार खार अपार सागर, तिरूँ भक्ती नाव से।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिनिषधपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-सर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर 'नीलगिरि' वैडूर्य वर्णी द्वय तरफ पंचरंगिमा।
नव कूट में इक जिनभवन, सुर इंद्र पूजे चन्द्रमा।।
जिनराज बिंब सुरत्नमय पूजा करूँ अति चाव से।
संसार खार अपार सागर, तिरूँ भक्ती नाव से।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिनीलपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-सर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रुक्मी' अचल रूपामयी, वर कूट आठों से भरा।
इक कूट में जिनराज गृह, बस दर्श से पातक टरा।।
जिनराज बिंब सुरत्नमय पूजा करूँ अति चाव से।
संसार खार अपार सागर, तिरूँ भक्ती नाव से।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिरूक्मिपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शिखरी' अचल सोने सदृश शुभ कूट ग्यारह नित्य हैं।
वर सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूजतें सब भव्य हैं।।
जिनराज बिंब सुरत्नमय पूजा करूँ अति चाव से।
संसार खार अपार सागर, तिरूँ भक्ती नाव से।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिशिखरिपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

कुल अद्रि छह पे छह सरोवर, कमल भूमय खिल रहे।
क्रम से श्री ह्री धृती कीर्ती, बुद्धि लक्ष्मी महल हैं।।
छह द्रह[1] से गंगा आदि चौदह, आपगा[2] निकली भई।
इन अद्रि[3] पे जिनभवन पूजों, दुरित कीचड़ बह गई।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-सर्वजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परि पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

षट् कुल पर्वत के कहे, षट् मंदिर सुविशाल।
सुर नर खगपति नित जजें, मैं गाऊँ गुणमाल।।1।।

–पद्धड़ी छंद–

जय जय कुल पर्वत के जिनेश, तुम हरो सभी मेरे कलेश।
जय मेरु के दक्षिण प्रधान, हिमवन पर्वत शोभे महान।।2।।
जय ताके पूरब दिशा माहिं, जय सिद्धकूट जिन सद्म पाहिं।
नग बीच पद्म सरवर कहात, ता मध्य कमल मणिमय रहात।।3।।
तामें श्रीदेवी को निवास, उन कमलों पर परिवार वास।
इक लाख और चालिस हजार, इक सौ पंद्रह हैं कमल सार।।4।।
सब पृथ्वीकायिक सुरभिमान, उन सबमें जिनमंदिर महान।
द्रह से त्रय नदियों का निकास, तल में गंगादिक कुंड खास।।5।।
गंगा देवी के महल शीश, राजें जिनप्रतिमा महल शीश।
अभिषेक करत इव नदीधार, ऊपर से पड़ती गंगधार।।6।।

1. सरोवर। 2. नदी। 3. पर्वत

इस विधि ही सब पर्वत मंझार, बहुविध अनुपम रचना अपार।
सबमें जिनबिंब विराजमान, नासाग्र दृष्टि मुख सौम्य जान।।7।।
जय सिंहासन छवि कांतिमान, सुर ढोरें चौंसठ चमर आन।
जय भामंडल द्युति रवि लजाहिं, जय छत्र तीन शशि द्युति लजाहिं।।8।।
जय जय तुम मंगलकरण देव, जय जय सुख संगम करण देव।
मैं वंदूँ तुमको बार बार, प्रभु जन्म मरण मेरो निवार।।9।।

–घत्ता–

जय मुक्ति निशाना, जिनवर धामा, आनन्द मन जयमाल भणे।
सो मंगल पावे नित हरषावे, फेरि न आवे भव वन में ।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व जिनबिम्बेभ्योः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परिपुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.4)

सुदर्शनमेरु संबंधी चार गजदंत जिनालय पूजा

अथ स्थापना–गीताछंद

जगबीच जंबूद्वीप उत्तम, कनक पर्वत मध्य है।
तिस विदिश चारों में कहे, पर्वत सुभग गजदंत हैं।।
उन चार पर हैं चार जिनगृह, यहाँ उनकी अर्चना।
मैं करूँ निर्मल भाव से जिन, भक्ति पूजा वंदना।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्विदिशायां चतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्विदिशायां चतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्विदिशायां चतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथ अष्टकं-गीताछंद

जल पद्मद्रह का लाय उज्ज्वल कनक झारी में भरा।
दे धार जिन पदपद्म को, आनंद रस मन में भरा।।
मुझ चार गति के दुःखनाशन हेतु चारों मंदिरा।
निज ज्ञान दर्शन सौख्यवीरज दे चतुष्टय इंदिरा[1]।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

गोशीर चंदन घिस सुगंधित, भर कटोरी में लिया।
जिन पादपद्म चढ़ाय श्रद्धा भाव से अर्चन किया।।मुझ.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

1. लक्ष्मी

अति धवल तंदुल चंद्र की कांती सदृश भर थाल में।
जिन चन्द्र सन्मुख पुंज धर, नाऊं खुशी से भाल मैं।।
मुझ चार गति के दुःखनाशन हेतु चारों मंदिरा।
निज ज्ञान दर्शन सौख्यवीरज दे चतुष्टय इंदिरा।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मचकुंद चंपक औ कदंबक, पुष्प निज कर से चुने।
जिनराज पद अरविंद को, जजते सभी दुःख को धुने।।मुझ.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

गोक्षीर तंदुल शर्करायुत, फेनि शतछिद्रा[1] बनी।
निज क्षुधारोग विनाश हेतू, पूजहूँ त्रिभुवन धनी।।मुझ.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर कनक दीपक सुरभि घृत, कार्पास बाती जगमगे।
सब दिशा हों उद्योत उससे, जजों जिनपद सुख जगे।।मुझ.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

वर धूपदह में धूप दहते, धूम उड़ता दशदिशा।
वसु कर्म जरते देख कर, मोहारि भगता सब दिशा।।मुझ.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल आम्र अमरख सेव केला, और एला थाल भर।
जिनराज सन्मुख भेंट कर, सिद्धिप्रिया तत्काल वर।।मुझ.8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

1. घेवर।

वर नीर गंधाक्षत सुमन, चरु दीप धूप फलौघ ले।
शुभ अर्घ सों जिनचरण पूजत, पाप अरि सेना टले।।
मुझ चार गति के दुःखनाशन हेतु चारों मंदिरा।
निज ज्ञान दर्शन सौख्यवीरज दे चतुष्टय इंदिरा।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यःअर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल ले भृंग में।
श्रीजिनचरण सरोज, धारा देते भव मिटे।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुरतरु के सुम लेय, प्रभुपद में अर्पण करूँ।
कामदेव मद नाश, पाऊँ आनंद धाम मैं।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-सोरठा–

मेरु सुदर्शन लग्न, विदिशा में गजदंत हैं।
पृथक् पृथक् तिन पूज, जिनगृह अर्घ्य चढ़ायके।।1।।

इति सुदर्शनमेरोर्विदिशायां गजदंतस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

–दोहा–

मेरू के आग्नेय दिश, 'महासौमनस' नाम।
रजतमयी गजदंत यह, सातकूट युत जान।।
मेरु निकट जिनराज गृह, सिद्धकूट पर सिद्ध।
मन वच तन से पूजकर, करूँ काल अरि विद्ध।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः आग्नेयविदिशिमहासौमनसगजदन्तसम्बन्धिसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरू के नैऋत्यदिश 'विद्युत्प्रभ' गजदन्त।
वर्ण तपाये स्वर्णसम, नव कूटहिं शोभंत।।

मेरु निकट जिनराज गृह, सिद्धकूट पर सिद्ध।
मन वच तन से पूजकर, करूँ काल अरि विद्ध।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः नैऋत्यविदिशिविद्युत्प्रभगजदन्तसम्बन्धिसिद्धकूट जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गन्धमादनाचल' कहा, मेरू के वायव्य।
सातकूटयुत स्वर्णसम, पूजे सुर नर भव्य।।मेरुनिकट.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः वायव्यविदिशिगन्धमादनगजदन्तसम्बन्धिसिद्ध-कूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'माल्यवान गजदन्त' है, मेरू के ईशान।
वर्ण रुचिर वैडूर्यमणि, नवकूटों युत मान।।मेरुनिकट.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः ईशानविदिशिमाल्यवानगजदन्तसम्बन्धि-सिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–सोरठा–

चार कहे गजदंत, इनके चारों जिनभवन।
इनमें जो जिनबिंब, उन सबकी पूजा करूँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः चतुर्विदिशायां चतुर्गजदन्तसम्बन्धिचतुःसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परिपुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

गजदंतों पर जिनभवन, शाश्वत बने विशाल।
जिनपद पंकज भ्रमर जन, पढ़ते तिन जयमाल।।1।।

तोटकछंद–(चाल-जयकेवलभानु.....)

जय मेरु सुदर्शन शैल महा, जय ता विदिशा गजदंत कहा।
जय हस्तिन दंत समान कहे, निषधाचल नील सुपर्श रहे।।
शत पंच सुयोजन तुंग कहे, ढिंग मेरु तने परमाण यहे।
निषधाचल नील तने चउ सौ, वर योजन मान सुतुंग कह्यो।।2।।

विस्तार सुयोजन पांच शते, निषधाचल मेरु तने लंबे।
उत नील सुमेरु तके फैले, नदि सीत सितोद गुफा धर ले।।3।।
जिनमंदिर में जिन की प्रतिमा, जय जय जय सिद्धन की उपमा।
जय इंद्र सदा चामर ढुरते, जय तीन सुछत्र सदा फिरते।।4।।
जय आसन रत्न जड़ा प्रभु का, द्युतमंडल शोभ रहा प्रभु का।
जय देवरमा मिल नृत्य करें, जय वाद्य मृदंग धुनी विकरें।।5।।
मुनिध्यान धरें समभाव लिये, वसु कर्म कलंक निमूल किये।
सुर खेचर आवत भक्ति भरे, जल गंध फलादिक पूज करें।।6।।
जय जन्म सुधन्य गिने निज के, भव अल्प करें जिन भक्ति थके।
बस आज मिले तव भक्ति प्रभो, मुझ केवल 'ज्ञानमती' वर दो।।7।।

–घत्ता–

जय जय गुणकारी, सुख संचारी, विपति विदारी यश करणा।
जय मंगलकारी, अधम उधारी, करुणाधारी तुम शरणा।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परिपुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.5)

सुदर्शनमेरु संबंधी जंबूवृक्ष शाल्मलिवृक्ष जिनालय पूजा

अथ स्थापना–गीताछन्द

गिरि मेरु के उत्तर दिशी उत्तरकुरू शोभे अहा।
उसमें सुदिक् ईशान के जंबूतरू राजे महा।।
दक्षिण दिशा में देवकुरु नैऋत्य कोण सुहावनी।
तरु शाल्मलि शुभरत्नमय, सुन्दर दिखे शाखा घनी।।1।।

–दोहा–

दोनों तरु की शाख पर, दो श्री जिनवर गेह।
आह्वानन कर मैं जजूँ, सदा हृदय धर नेह ।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः ईशाननैऋत्यकोणयोः जम्बूशाल्मलिवृक्षसम्बन्धि-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः ईशाननैऋत्यकोणयोः जम्बूशाल्मलिवृक्षसम्बन्धि-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः ईशाननैऋत्यकोणयोः जम्बूशाल्मलिवृक्षसम्बन्धि-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अष्टकं-अडिल्लछंद

सुरगंगा को नीर सुरभि प्रासुक किया।
जिनपद धारा देय, सकल मल क्षय किया।।
जंबू शाल्मलि वृक्ष तने जिनधाम को।
जो पूजें धर प्रीति, लहे शिवधाम को।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजम्बूशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिरि घनसार सुकुंकुम गंध ले।
सिद्धनि के प्रतिबिंब, चरण को चर्च ले।।

जंबू शाल्मलि वृक्ष तने जिनधाम को।
जो पूजे धर प्रीति, लहे शिव धाम को।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजम्बूशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

जल से धौत सुअक्षत मुक्ताफल समा।
पुंज धरूँ जिनसन्मुख भक्ती अनुपमा।।जंबू.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजम्बूशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जुही चमेली कमल केवड़ा फूल ले।
प्रभु के चरण चढ़ाऊँ भव के दुख टले।।जंबू.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजम्बूशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सद्यजात[1] घेवर बावर मोदक घने।
चरु की पूजा नित्य क्षुधा व्याधी हने।।जंबू.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजम्बूशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नदीप की ज्योति दशों दिश तम हरे।
अंतर भेद विज्ञान प्रगट हो भ्रम टरे।।जंबू.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजम्बूशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप अगनि में खेय धूम दशदिश उड़े।
कर्म पुंज प्रज्वले सतत आनंद बढ़े।।जंबू.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजम्बूशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरतरु के परिपक्व सरस फल लाय के।
प्रभु की पूजा करूँ हरष गुण गाय के।।

1. ताजे।

जंबू शाल्मलि वृक्ष तने जिनधाम को।
जो पूजें धर प्रीति, लहे शिवधाम को।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजम्बूशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वारि सुचंदन अक्षत फूल चरू मिले।
दीप धूप शुचि उत्तम फल युत अर्घ्य ले।।जंबू.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजम्बूशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

यमुना सरिता नीर, कंचन झारी में भरा।
जिनपद धारा देत, शांति करो सब लोक में ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

वकुल कमल अरविंद, सुरभित फूलों को चुने।
जिनपद पंकज अर्घ्य, यश सौरभ चहुँदिश भ्रमें।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-सोरठा–

जंबू शाल्मलि वृक्ष, तिनके जिनगृह को जजूँ।
पुष्पांजलि कर नित्य, जो पूजें सो शिव लहें।।1।।

इति जम्बूवृक्षशाल्मलिवृक्षस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–गीता छन्द–

'जम्बूतरू' की उत्तरी शाखा विषे जिनधाम है।
सब देव देवी करें अर्चा, मैं जजूँ इह थान है।।
वर नीर चंदन आदि वसुविध द्रव्य थाली में लिया।
संसार रोग निवार स्वामी अर्घ्य से पूजन किया।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजंबूवृक्षस्य उत्तरशाखायां जिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'द्रुम शाल्मलि' की दक्षिणी, शाखा उपरि जिनगेह है।
योगी सदा ध्याते उन्हें, हम भी जजें धर नेह है।।
वर नीर चंदन आदि वसुविध द्रव्य थाली में लिया।
संसार रोग निवार स्वामी अर्घ्य से पूजन किया।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिशाल्मलिवृक्षस्य दक्षिणशाखायां जिनालय-स्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–दोहा–

जंबू शाल्मलि वृक्ष पर, दो जिनमंदिर सिद्ध।
पूर्ण अर्घ्य ले मैं जजूँ, पाऊँ सौख्य समृद्ध।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिजंबूशाल्मलिवृक्षस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परिपुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–सोरठा–

तरु की शाखा मांहि, रत्नमयी जिनबिंब हैं।
तिनकी यह जयमाल, भक्ति भाव से मैं पढ़ूँ।।1।।

–नरेन्द्र छंद–

जंबूतरु का स्वर्णिम स्थल, पांच शतक योजन है।
इस थल का परकोटा कांचन-मयी मनो मोहन है।।
पीठ आठ योजन का ऊँचा, मध्य माहिं चांदी का।
इस पर जम्बूवृक्ष अकृत्रिम, पृथ्वीमय रत्नों का।।2।।

यह तरु तुंग आठ योजन है, वज्रमयी जड़ जानो।
मणिमय तना हरित मोटाई, एक कोश परमानो।।

तरु की चार दिशाओं में हैं, चार महाशाखायें।
छह योजन की लंबी इतने, अंतर से लहरायें।।3।।

मरकत कर्केतन मूँगा, कंचन के पत्ते उत्तम।
पांच वर्ण रत्नों के अंकुर, फल अरु पुष्प अनूपम।।
इसमें फल जामुन सदृश हैं, कोमल चिकने दिखते।
रत्नमयी हैं फिर भी अद्भुत पवन लगत ही हिलते।।4।।

उत्तर शाखा पर जिनमंदिर, सुरगृह त्रय शाखा पे।
सम्यक्त्वी आदर व अनादर, व्यंतर रहते उन पे।।
तरु को चारों तरफ घेर कर, बारह पद्म वेदियाँ।
उनके अंतराल में तरु की, परिकर वृक्ष पंक्तियां ।।5।।

एक लाख चालीस हजार इक सौ उन्नीस कहाएं।
इन जंबू परिवार वृक्ष पर, सुर परिवार रहायें।।
मेरु की ईशान दिशा में नीलाचल के दाएं।
माल्यवन्त के पश्चिम में, सीता के पूर्व कहाएं।।6।।

तरु स्थल के चारों तरफे, त्रय वन खंड कहाते।
फल फूलों युत सुरमहलों युत, जल वापी युत भाते।।
इस द्रुम के जिनगृह में इक सौ-आठ जिनेश्वर प्रतिमा।
इसी तरह शाल्मली वृक्ष की जानो सारी रचना ।।7।।

शाल्मलि तरु के अधिपति व्यंतर, वेणु वेणुधारी हैं।
ये सुर सम्यक्त्वी जिनमत के, प्रेमी गुणधारी हैं।।
जितने जंबू शाल्मलि तरु हैं, उतने जिनमंदिर हैं।
क्योंकि सभी पर सुर रहते हैं सबमें जिनमंदिर हैं।।8।।

दो चैत्यालय मुख्य अकृत्रिम, हैं स्वतन्त्र दो तरु के।
उनकी अरु सब जिनप्रतिमा की, करूँ वंदना रुचि से।।
सुर किन्नरियां नित गुण गातीं वीणा की लहरों से।
दर्शन करके नर्तन कीर्तन करतीं भक्ति स्वरों से ।।9।।

–घत्ता–

जय जय जिनप्रतिमा अद्भुत महिमा पढ़े सुने जो जयमाला।
जय 'ज्ञानमती' श्री सिद्धिवधू प्रिय सो नर पावे खुशहाला ।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिजंबूशाल्मलिवृक्षस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-सर्वजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परिपुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.6)

सुदर्शनमेरु संबंधी सोलह वक्षारगिरि जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–शम्भुछन्द–

मेरु सुदर्शन के पूरब दिश, गिरि वक्षार बखाने हैं।
सीता नदि के उत्तर-दक्षिण चार-चार ये माने हैं।।
मेरू के पश्चिम विदेह में, आठ अचल वक्षार कहे।
सीतोदा के दक्षिण-उत्तर, चार-चार हैं शोभ रहे।।1।।

–दोहा–

सोलह गिरि वक्षार के, सोलह जिनगृह सिद्ध।
यहाँ थापना विधि करूँ, पूज वरूँ सुख सिद्ध।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबन्धिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्ध-कूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबन्धिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्ध-कूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबन्धिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्ध-कूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टकं-त्रिभंगीछंद

(चाल-तीर्थंकर की धुनि गणधर....)

सीतानदि का जल, सुरभित उज्ज्वल, अमल भाव से मैं लाया।
भरि कंचन कलशा, जिनपद परसा, मन अति हरषा गुण गाया।।
वक्षार गिरी पर, सोलह जिन घर, जिनवर प्रतिमा चरण जजों।
प्रभु करुणासागर, सुख रत्नाकर, शरणागत तुअ शरण भजों।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-सर्वजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

घनसार सुचंदन, षटपद गुंजन, दाह निकन्दन ले आया।
जिनवर पदवन्दन, समरस स्यंदन[1],भव आक्रन्दन छुटवाया।।
वक्षार गिरी पर, सोलह जिन घर, जिनवर प्रतिमा चरण जजों।
प्रभु करुणासागर, सुख रत्नाकर, शरणागत तुअ शरण भजों।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

जल से प्रक्षालित तंदुल सुरभित, शशिकर सदृश भरि लीना।
जिनवर पद सन्निध, पुंज समर्पित, धवल सौख्य हित मैं कीना।।वक्षार.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चम्पादिक सुमना, सुमनस प्रियना, सुरभी करना में लाया।
मधुकर गुंजारे, काम विडारे, जिनपद धारे हरषाया।।वक्षार.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पायस घृत पूआ, फेनी खोवा, ताजे साजे थाल भरे।
जन घ्राण नयन मन, तर्पित व्यंजन, जिनवर सन्निध भेट करें।।वक्षार.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ले दीपक आला, गोघृत डाला, बत्ती ज्वाला ज्योति धरे।
जिनवर की आरति, नित अवतारत, आरत वारत ज्योति करे।।वक्षार.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ले धूप सुगंधित, पाप विखंडित, धूपायन में खेय दिया।
दश दिश महकाते, धूम उड़ाते, कर्म जलाते देख लिया।।वक्षार.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

1. झरना।

दाडिम नारंगी, फल मोसम्बी, अनन्नास भी मैं लाया।
जन मन को प्रियकर, मधुर सरस फल, प्रभु ढिग धर कर सुख पाया।।
वक्षार गिरी पर, सोलह जिन घर, जिनवर प्रतिमा चरण जजों।
प्रभु करुणासागर, सुख रत्नाकर, शरणागत तुअ शरण भजों।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन तंदुल, पुष्प चरूवर, दीप धूप फल ले लीना।
प्रभु अर्घ्य चढ़ाकर, पुण्य बढ़ाकर, पाप नशाकर सुख लीना।।वक्षार.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

सीता नदी सुनीर, जिनपद पंकज धार दे।
वेग हरूँ भवपीर, शांतीधारा शांतिकर।।10।।

शांतये शांतिधारा।

बेला कमल गुलाब, चंप चमेली ले घने।
जिनवर पद अरविंद, पूजत ही सुख सम्पदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

–दोहा–

प्रथम मेरु पूरब अपर, सोलहगिरि वक्षार।
पुष्पांजलि कर पूजते, नाशे विघ्न हजार।।1।।

इति षोडशवक्षारस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-सवैया छन्द–

सीता नदि के उत्तर तट पर, भद्रसाल वेदी के पास।
'चित्रकूट' वक्षार स्वर्णमय, चार कूट से मंडित खास।।
नदी तरफ के सिद्धकूट पर, श्री जिनमंदिर बना विशाल।
जल फल आदिक अर्घ्य बनाकर, पूजन करूँ मिटे जग जाल।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे चित्रकूटवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतानदि के उत्तर तट पर क्रम से 'पद्मकूट' वक्षार।
स्वर्णवर्णमय चार कूट युत, देव देवियाँ करें विहार ।।
नदी तरफ के सिद्धकूट पर श्री, जिनमंदिर बना विशाल।
जल फल आदिक अर्घ्य बनाकर, पूजन करूँ मिटे जग जाल।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे पद्मकूटवक्षार-पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिन कूट' पर जैन भवन में, विद्याधर गण करें विहार।
श्री जिनमूर्ती निरख-निरख कर, तृप्त हुए मन हरष अपार।।नदी.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे नलिनकूट-वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'एकशैल' वक्षार मनोहर सुर वनितायें करें विनोद।
जिनगृह की मुनि करें वंदना, समरसमय मन भरें प्रमोद।।नदी.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे एकशैलकूट-वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतानदि के दक्षिण तट पर, देवारण्य वेदिका पास।
अचल 'त्रिकूट' चार कूटों युत, जिनगृह युत वक्षार सनाथ।।नदी.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे त्रिकूट-वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रम से फिर 'वैश्रवण' कूट है, देव देवियों से भरपूर।
वापी वन उद्यान मनोहर, मुनिगण करें पाप को दूर।।नदी.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे वैश्रवणनाम-वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अंजनात्मा' नाम धराता, गिरि वक्षार सदा शुभकार।
सुर विद्याधर गगन गमनचर, ऋषिगण को भी है सुखकार।।नदी.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे अंजनात्मावक्षारपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ 'अंजन' वक्षार आठवां, योगीजन करते नित ध्यान।
निज आतम परमानंदामृत, अनुभव कर हो रहे महान।।
नदी तरफ के सिद्धकूट पर, श्री जिनमंदिर बना विशाल।
जल फल आदिक अर्घ्य बनाकर, पूजन करूं मिटे जग जाल।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे अंजनवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–शम्भु छन्द–

पश्चिम विदेह सीतोदा के, दक्षिण में भद्रसाल वेदी।
उस सन्निध 'श्रद्धावान' कहा, वक्षार कनकमय पर्वत ही।।
नदि के सन्निध है सिद्धकूट, उसमें शाश्वत चैत्यालय है।
जल गंधादिक से पूजूँ मैं, मेरे हित सौख्य सुधालय है।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे श्रद्धावाननाम-वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा के दक्षिण तट पर, गिरि 'विजटावान्' कहाता है।
वक्षार सदा चउ कूटों युत, सुर नर सबके मन भाता है।।नदि के.।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे विजटावान-वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आशीविष' है वक्षार कहा, इनपे रत्नों की वेदी है।
परकोटे उपवन वापी से, जिनगृह से कर्मन भेदी है।।नदि के.11।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे आशीविष-वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वक्षार 'सुखावह' अति सुन्दर, सुरललना की क्रीड़ा भूमी।
यतिगण के विहरण से पावन, सबको आनंदकारी भूमी।।नदि के.।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे सुखा-वहवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा के उत्तर तट पर शुभ देवारण्य बनी वेदी।
तसु सन्निध 'चन्द्रमाल' पर्वत, जन मन का मोह तिमिर भेदी।।

नदि के सन्निध है सिद्धकूट, उसमें शाश्वत चैत्यालय है।
जल गंधादिक से पूजूँ मैं, मेरे हित सौख्य सुधालय है।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीउत्तरतटे चंद्रमाल-वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वक्षार मनोहर 'सूर्यमाल', रत्नों के भवन सुहाते हैं।
सुरललनाओं की वीणा के तारों से जिनगुण गाते हैं।।नदि के.।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीउत्तरतटे सूर्यमाल-वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर 'नागमाल' वक्षार अचल, अनुपम कांती छिटकाता है।
जिनवर के दर्शन करते ही, सबके अघपुंज नशाता है।।नदि के.।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीउत्तरतटेनागमाल-वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वक्षार सोलवां 'देवमाल', रत्नों की कांति लजाता है।
जिनदेवदेव के गृह में नित, देवों का नृत्य कराता है।।नदि के.16।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीउत्तरतटे देवमाल-वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य-मद-अवलिप्तकपोलछन्द

सोलह गिरि वक्षार उन्हों पर सोलह मन्दिर।
वर सामग्री लाय सतत ही जजें पुरंदर।।
मैं इह पूजूँ भक्ति भाव से अर्घ्य चढ़ाऊँ।
आधि व्याधि भय शोक नाश निज सम्पति पाऊँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्ध-कूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–गीताछन्द–

वक्षार कांचन वर्ण शुभ प्रत्येक पर चउ कूट हैं।
प्रत्येक में जिनभवन अनुपम, शेष त्रय पे सुर रहें।।
ये अचल विस्तृत पांच सौ योजन उदधि तक लम्ब हैं।
कुल अद्रि तक चउ शतक योजन नदि निकट शतपंच हैं।।1।।

–स्रग्विणी छन्द–

जै महामेरु के सोल वक्षार ते।
जै अनादि अनन्ते सदा राजते।।
जै उन्हों पे विराजे जिनेशालया।
जै वहां जैनमूर्ती सुसौख्यालया।।2।।
एक सौ आठ मूर्ती सुप्रत्येक में।
सर्वदा पूजते देव देवी उन्हें।।
कोई तीर्थेश की कीर्ति गाते वहाँ।
कोई धर्मी गुणों को गिनाते वहाँ।।3।।
रत्नमूर्ती मनो मोहनी सोहनी।
सर्व कर्मारिसेना हनी सो घनी।।
देव पूजें बड़ी भक्ति से आय के।
द्रव्य अर्पें सदा स्वर्ग से लाय के।।4।।
जो तुम्हें नाथ पूजें स्व पूजा लहें।
जो तुम्हें माथ नावें नमें सब उन्हें।।
जो तुम्हारे गुणों को सदा गावते।
कीर्ति उनकी सदा देवगण गावते।।5।।
जो तुम्हारे निकट नृत्यते भाव से।
इन्द्र ताकी सभा में नचें चाव से।।
जो तुम्हें चंवर ढोरे बड़े चाव से।
इन्द्र ढोरे सदा चामरे तास के।।6।।

जो धरे शीश पे छत्र थारे प्रभो।
इन्द्र धारें सदा छत्र तापे विभो।।
जो बजावें मृदंगी धुनी झिल्लरी।
इन्द्र बाजे बजावें सदा ता घरी।।7।।
मैं बड़े पुण्य से नाथ पायो तुम्हें।
धन्य है धन्य है या घड़ी धन्य मैं।।
पूजता हूं बड़ी भक्ति श्रद्धा धरे।
केवलज्ञान की नाथ आशा धरे।।8।।

–दोहा–

कनकवर्ण वक्षार की, पूजा रची रसाल।
शाश्वत श्री जिनबिंब को, नितप्रति नाऊँ भाल।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.7)

सुदर्शनमेरु संबंधी चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–दोहा–

मेरु सुदर्शन पूर्व में, पूर्व विदेह बखान।
उसके ही पश्चिम तरफ, अपर विदेह महान।।1।।
दो विदेह में देश सब, सोलह-सोलह जान।
तामध विजयारध लसें, शुभ बत्तीस प्रमाण।।2।।
भरतैरावत क्षेत्र के, दो भूभृत् विजयार्ध।
इन सबमें चौंतीस हैं, श्री जिनभवन महार्घ।।3।।

–सोरठा–

जिनगृह के जिनराज, सबका आह्वानन करूँ।
सफल होय मम काज, आधि व्याधि विनसे सभी ।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः पूर्वापरविदेहभरतैरावतसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः पूर्वापरविदेहभरतैरावतसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरोः पूर्वापरविदेहभरतैरावतसंबंधिचतुस्त्रिंशत्-विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टकं–चाल छन्द

क्षीरोदधि उज्ज्वल नीर, सुवरण कलश भरा।
जिनवर पद पद्म चढ़ाय, मेटो जन्म जरा।।

पूर्वापर क्षेत्र विदेह, भरतैरावत सो।
चौंतिस विजयारध माहिं जिनवरपद परसों।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन केसर घिस लाय, दाह हरे सारी।
पूजों श्री जिनवर पाय, आनंद हो भारी।।
पूर्वापर क्षेत्र विदेह, भरतैरावत सो।
चौंतिस विजयारध माहिं जिनवरपद परसों।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शशि किरणों सम अवदात, अक्षत लाता हूँ।
प्रभु सन्निध पुंज चढ़ाय, जिन गुण गाता हूँ।।
पूर्वापर क्षेत्र विदेह, भरतैरावत सो।
चौंतिस विजयारध माहिं जिनवरपद परसों।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

वर चंपक कंज कदंब, सुमन सुमन प्यारे।
फैले दशदिश सौगन्ध, पूजूँ पद थारे।।
पूर्वापर क्षेत्र विदेह, भरतैरावत सो।
चौंतिस विजयारध माहिं जिनवरपद परसों।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पेड़ा बरफी पकवान, हलुआ थाल भरे।
निज क्षुधा नाशने हेतु, चरु से पूज करें।।
पूर्वापर क्षेत्र विदेह, भरतैरावत सो।
चौंतिस विजयारध माहिं जिनवरपद परसों।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणिमय दीपक उद्योत, जगमग ज्योति जले।
आरति करते निज मोह-मय सब ध्वांत टले।।
पूर्वापर क्षेत्र विदेह, भरतैरावत सो।
चौंतिस विजयारध माहिं जिनवरपद परसों।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु धूप सुगंध, अग्नी संग जरे।
कर कर्म पुंज को भस्म, दशदिश धूम भरे।।
पूर्वापर क्षेत्र विदेह, भरतैरावत सो।
चौंतिस विजयारध माहिं जिनवरपद परसों।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

बादाम, चिरौंजी दाख, नींबू आम लिये।
जिनपद के निकट चढ़ाय, मन आनंद किये।।
पूर्वापर क्षेत्र विदेह, भरतैरावत सो।
चौंतिस विजयारध माहिं जिनवरपद परसों।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध प्रभृति सब लेय, अर्घ बनाया है।
जिन चरणों देत चढ़ाय, पुण्य बढ़ाया है।।
पूर्वापर क्षेत्र विदेह, भरतैरावत सो।
चौंतिस विजयारध माहिं जिनवरपद परसों।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

गंगानदी को नीर, कंचन झारी में भरा।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूं।।10।।

शांतये शांतिधारा।

कमल केतकी फूल, हर्षित मन से लायके।
जिनवर चरण चढ़ाय, सर्व सौख्य संपति बढ़े।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

–दोहा–

प्रथम मेरु पूरब अपर, दक्षिण उत्तर जान।
चौंतिस रूपाचल उपरि, जिनगृह पूजूँ आन।।1।।

इति प्रथममेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छन्द–

सीतानदि के उत्तर तट में, भद्रसालवन पासे।
'कच्छा देश' विदेह बीच में, विजयारध गिर भासे।।
नवकूटों में सिद्ध कूट पर, जिनवर भवन महाना।
ऋषिगण वंदन करने जाते, मैं पूजूँ इह थाना।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे कच्छादेशमध्यस्थित-विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु के पश्चिम उस तट पर, देश 'सुकच्छा' सोहै।
तामध रजताचल अतिसुन्दर, सुर किन्नर मन मोहै।।नव.2।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे सुकच्छादेशमध्य-विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महाकच्छा' कहलाता, रूपाचल ता मध्ये।
विद्याधर ललना किन्नरियां, जिनगुण गातीं तथ्ये।।नव.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे महाकच्छादेशमध्य-विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'कच्छकावती' सुमध्ये रूपाचल सुखकारी।
सुर ललना के वीणा स्वर से, जन जन का मनहारी।।नव.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे कच्छकावतीदेशमध्य-विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश कहा 'आवर्ता' सुन्दर रूपाचल तसु बीचे।
रक्ता-रक्तोदा नदियों से, छह खंड होते नीके।।
नवकूटों में सिद्धकूट पर जिनवर भवन महाना।
ऋषिगण वंदन करने जाते, मैं पूजूँ भवहाना।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे आवर्तादेशमध्यविजयार्ध-पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश कहा 'लांगल आवर्ता' ता मध रूपाचल है।
तीनों कटनी पे वनवेदी वापी जल निर्मल है।।नव.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे लांगलावर्तादेशमध्य-विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दर देश 'पुष्कला' के मधि रूपाचल मन भावे।
उभय तरफ पचपन-पचपन, खग नगरी मन ललचावे।।नव.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे पुष्कलादेशमध्य-विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कलावती' सुहाता, उसमें रजत गिरी है।
विद्याधर की कर्म भूमियाँ, मुक्ती मार्ग पुरी हैं।।नव.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे पुष्कलावतीदेशमध्य-विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–नरेन्द्र छन्द–

पूर्व विदेह विषैं सीता के, दक्षिण तट में माना।
देवारण्य वेदिका सन्निध, 'वत्सादेश' बखाना।।
मध्य रजतगिरि सिद्धकूट पर, जिनमंदिर अभिरामा।
जिनवर चरण कमल हम पूजें, मिले सर्वसुख धामा।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे वत्सादेश-स्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतानदि के दक्षिण तट पर, देश 'सुवत्सा' सोहे।
तीर्थंकर चक्री प्रतिचक्री, हलधर वहँ नित होवें।।

मध्य रजतगिरि सिद्धकूट पर, जिनमंदिर अभिरामा।
जिनवर चरण कमल हम पूजें, मिले सर्वसुख धामा।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सुवत्सादेश-स्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रम से देश 'महावत्सा' में रजताचल है जानो।
गंगा सिन्धू नदियों से भी, छह खंड होते मानो।।मध्य.11।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे महावत्सादेश-स्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'वत्सकावती' वहां नित, कर्मभूमि मन भावे।
भव्य जीवगण कर्म अरी हन, मुक्तिरमा सुख पावें।।मध्य.।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे वत्सकावतीदेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रम्यादेश' आर्यखंड में, असि मषि आदि क्रिया हैं।
क्षत्रिय वैश्य शूद्र त्रयवर्णी, होते सदा जहाँ हैं।।मध्य.।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे रम्यादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुरम्या' शुभविदेह में, देह नाश कर प्राणी।
हो जाते हैं वे विदेह इस, हेतू सार्थक नामी।।मध्य.।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सुरम्यादेश-स्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रमणीया' शुभदेश वहाँ पर तीर्थंकर नित होते।
समवशरण में भव्य जीवगण जिनधुनि सुन मल धोते।।मध्य.।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे रमणीयादेश-स्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'मंगलावती' जहां पर, मुनिगण नित्य विचरते।
चिच्चैतन्य चमत्कारी निज, शुद्धातम में रमते।।

मध्य रजतगिरि सिद्धकूट पर, जिनमंदिर अभिरामा।
जिनवर चरण कमल हम पूजें, मिले सर्वसुख धामा।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे मंगलावतीदेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–अडिल्ल छंद–

अपर विदेह सीतोदहिं इधर में।
भद्रसाल वन पास, जु 'पद्मा' नगरि में।।
मध्य रजतगिरि तापे श्री जिनगेह हैं।
जिनगुण संपत्ति हेतु, जजो धर नेह है।।17।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे पद्मादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपर विदेह सुमाहिं, नदी के अवर में।
'देश सुपद्मा' मध्य आरज खंड में।।मध्य.।।18।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सुपद्मादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महापद्मा' छहखंडों युत सही।
असि मषि आदिक् छह किरिया वहां नित कहीं।।मध्य.।।19।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे महापद्मादेश-स्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पद्मकावती' मनोहर जानिये।
जिन चैत्यालय ठौर ठौर पर मानिये।।मध्य.।।20।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे पद्मकावतीदेश-स्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शंखा' देशविषैं जिनधर्महि एक है।
अन्य धर्म का नाम जहाँ नहिं लेश है।।मध्य.।।21।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे शंखादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिनी ' देश विदेह, कर्मभूमी सदा।
मुनिवर आतम ध्याय कर्म से हों जुदा।।
मध्य रजतगिरि तापे श्री जिनगेह हैं।
जिनगुण संपत्ति हेतु, जजो धर नेह है।।22।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे नलिनीदेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कुमुद' देश के माहिं जिनेश्वर नित रहें।
समवसरण में भविक, धर्म अमृत लहें।।मध्य.।।23।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे कुमुददेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सरित' देश में सदा मुमुक्षूजन बसें।
मोक्ष प्राप्ति की आश धरे तन को कसें।।मध्य.।।24।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सरितदेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–लोलतरोल छंद–

सीतोदा के उत्तर दिक् में, देवारण्य निकट 'वप्रा' में।
बीचोंबीच रूप्यगिरि सोहे, तापर जिनगृह मुनि मन मोहे।।25।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे वप्रादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुवप्रा' आरज खंड में, ईति भीति दुर्भिक्ष न उनमें।
बीचोंबीच रूप्यगिरि सोहे, तापर जिनगृह मुनि मन मोहे।।26।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे सुवप्रादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महावप्रा' सुखदाता, स्वर्ग मोक्ष का सही विधाता।
बीचोंबीच रूप्यगिरि सोहे, तापर जिनगृह मुनि मन मोहे।।27।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे महावप्रादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'वप्रकावती' सुहाता, सुर नर किन्नर के मन भाता।
बीचोंबीच रूप्यगिरि सोहे, तापर जिनगृह मुनि मन मोहे।।28।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे वप्रकावतीदेश-स्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधादेश' विषैं जिनगेहा, उन्हें जजें सुर नर धर नेहा।
बीचोंबीच रूप्यगिरि सोहे, तापर जिनगृह मुनि मन मोहे।।29।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे गंधादेश-स्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुगन्धा' मुक्ति प्रदानी, मुनि तप करें वरें शिवरानी।
बीचोंबीच रूप्यगिरि सोहे, तापर जिनगृह मुनि मन मोहे।।30।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे सुगन्धादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'गंधिला' में जो जन्मे, पूर्वकोटि आयूवर उनमें।
बीचोंबीच रूप्यगिरि सोहे, तापर जिनगृह मुनि मन मोहे।।31।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे गंधिलादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधमालिनी' में होते जो, तनु ऊँचे वर धनुष पांच सौ।
बीचों बीच रूप्यगिरि सोहे, तापर जिनगृह मुनि मन मोहे।।32।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे गंधमालिनीदेश-स्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–चौपाई छंद–

'भरत क्षेत्र' में हैं छह खंड, विजयाद्रि इस आरज खंड।
सिद्धकूट पर श्री जिनधाम, जिनपद पूजूँ करूँ प्रणाम।।33।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिभरतक्षेत्रस्थविजयार्धपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'ऐरावत' मधि रजतगिरीश, तापर सिद्धकूट जिन ईश।
जल गंधादिक अर्घ्य मिलाय, पूजन करूँ मुदित गुण गाय।।34।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थविजयार्धपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-शम्भु छंद-

कनकाचल के पूर्वापर में, बत्तीस रजतगिरि माने हैं।
इक भरत एक ऐरावत के, दो रूप्याचल परधाने हैं।।
इन चौंतिस के सब सिद्धकूट, मणिमय जिनबिंब विराजे हैं।
जल गंधादिक ले पूजत ही, मेरे सब पातक भाजे हैं।।35।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य-**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

-शम्भु छन्द-

जय बत्तिस देश विदेहों के, सब रजतमयी विजयार्ध कहें।
जय भरतैरावत के दो हैं, सब तीन कटनियों सहित रहें।।
इक सौ दश नगरी खेचर की, शाश्वत उन सब पर बनी हुईं।
जय नवकूटों युत उन सबमें, इक सिद्धकूट जिनभवन मयी।।1।।

-स्रग्विणी छन्द-

(चाल-नाथ तेरे कभी.....)

देव त्रैलोक्य के पूर्ण चंदा तुम्हें।
मैं नमूँ मैं नमूँ हे जिनन्दा तुम्हें।।
नाथ! मेरी हरो जन्म व्याधी व्यथा।
मैं सुनाऊँ तुम्हें संसरण की कथा।।2।।

मैं निगोदी रहा काल आनन्त्य ना।
एक इन्द्रीय भू अग्नि वायू बना।।
नाथ! मेरी हरो जन्म व्याधी व्यथा।
मैं सुनाऊँ तुम्हें संसरण की कथा।।3।।

कं वनस्पत्य हूआ सहा दुःख हा।
सूक्ष्म तनधार जन्मा मरा नाथ! हा।।
नाथ! मेरी हरो जन्म व्याधी व्यथा।
मैं सुनाऊँ तुम्हें संसरण की कथा।।4।।

केंचुआ शंख चींटी ततैया हुआ।
जन्म धर धर मुआ जन्म धर धर मुआ।।
नाथ! मेरी हरो जन्म व्याधी व्यथा।
मैं सुनाऊँ तुम्हें संसरण की कथा।।5।।

मैं पशू योनि में जो महा दुख सहा।
नाथ! कैसे कहूँ आप जानो हहा।।
नाथ! मेरी हरो जन्म व्याधी व्यथा।
मैं सुनाऊँ तुम्हें संसरण की कथा।।6।।

देवयोनी मनुजयोनि में भी दुखी।
नारकी जो हुआ तो दुखी ही दुखी।।
नाथ! मेरी हरो जन्म व्याधी व्यथा।
मैं सुनाऊँ तुम्हें संसरण की कथा।।7।।

मैं कहूं क्या प्रभो आप हो केवली।
मोह शत्रू मुझे ये भ्रमावे बली।।
नाथ! मेरी हरो जन्म व्याधी व्यथा।
मैं सुनाऊँ तुम्हें संसरण की कथा।।8।।

मोह को नाश मैं आपके पास में।
नाथ आना चहूँ है यही आस में।।

नाथ! मेरी हरो जन्म व्याधी व्यथा।
मैं सुनाऊँ तुम्हें संसरण की कथा।।9।।

–घत्ता छंद–

रूपाचल जिनभवन तनी जिनराज कहे हैं।
देव इन्द्र धरणेन्द्र सभी से वन्द्य कहे हैं।।
मन वच काय लगाय सदा उनके गुण गाऊँ।
पूजन अर्चन नमन, करूँ भव से छुट जाऊँ।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शनमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालय-स्थसर्वजिनबिंबेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.8)

जम्बूद्वीप भरतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा

स्थापना-गीता छंद

वृषभादि चौबिस तीर्थंकर इस भरत के विख्यात हैं।
जो प्रथित जंबूद्वीप के संप्रति जिनेश्वर ख्यात हैं।।
इन तीर्थंकर के तीर्थ में सम्यक्त्व निधि को पायके।
थापूँ यहाँ पूजन निमित अति चित्त में हरषाय के।।1।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-स्रग्विणी छंद

देवगंगा सलिल स्वर्ण झारी भरूँ।
नाथ पादाब्ज में तीन धारा करूँ।।
श्री वृषभ आदि चौबीस जिनराज को।
पूजते ही लहूँ स्वात्म साम्राज्य को।।1।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

गंध केशर घिसा के कटोरी भरूँ।
आपके पाद पंकज समर्चन करूँ।।श्री वृषभ.।।2।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो चंदनं निर्वपामीतिस्वाहा।

चँद्र की चांदनी सम धवल शालि हैं।
जो जजें पुंज से वे सुकृत शालि हैं।।श्री वृषभ.।।3।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

वुँâद मचवुंâद बेला चमेली लिये।
कामहर नाथ पद में समर्पित किये।।श्री वृषभ.।।4।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पूरिका लड्डुओं से भरूँ थाल मैं।
पूजहूँ आपको क्षुध् व्यथा नाशने।।श्री वृषभ.।।5।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप कर्पूर की ज्योति से पूजते।
ज्ञान उद्योत हो मोह अरि छूटते।।श्री वृषभ.।।6।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप दशगंध ले अग्नि में खेवते।
आत्म सौरभ उठे नाथ पद सेवते।।श्री वृषभ.।।7।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम अंगूर केला अनंनास ले।
नाथ पद पूजते मुक्ति संपति मिले।।श्री वृषभ.।।8।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

तोय गँधादि वसु द्रव्य ले थाल में।
अर्घ्य अर्पण करूँ नायके भाल मैं।।श्री वृषभ.।।9।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

तीर्थंकर परमेश, तिहुंजग शांती कर सदा।
चउसंघशांती हेतु, शांतीधारा मैं करूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-दोहा-

शुद्ध बुद्ध परमात्मा, पाया ज्ञान प्रभात।
परमानंद निजात्म में, मग्न रहें दिन रात।।1।।

इति मंडलोस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

नरेन्द्र छंद –चाल-परं परंज्योति कोटि चंद्रादित्य.....

'वृषभ देव' के चरण कमल को, नित शत इंद्र जजें हैं।
कर्मकालिमा दूर भगा कर, स्वातम तत्त्व भजे हैं।।
मैं भी दृढ़ भक्ती से पूजूँ, कर्म शृंखला टूटे।
प्रभु मुक्ती होने तक मेरा, सम्यक् रत्न न छूटे।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म शत्रु को जीत, 'अजित' जिन, जग में ख्यात हुये हैं।
नाथ आपका आश्रय लेकर बहुजन पार हुये हैं।।मैं.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दृढ़ पुरुषार्थ सफल कर तुमने, भवभय नाश किया है।
इसीलिये इंद्रों ने सार्थक, 'संभव' नाम दिया है।।मैं.।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब जग को आनंदित करने, 'अभिनंदन' भगवंता।
जो धन ध्यावें हृदय कमल में, भवभय व्याधि हरंता।।मैं.।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुमति त्याग कर सुमतिवरण कर, 'सुमति' नाम प्रभु पाया।
मुझको भी सुमती दीजे अब, मैं जग से अकुलाया।।मैं.।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्तीपद्मा से आलिंगित, 'पद्मप्रभु' जग नामी।
जो जन पादपद्म तुम सेते, होते शिवश्री स्वामी।।मैं.।।6।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'सुपार्श्व' के पास आय के, मिटे सकल जग फिरना।
प्रभो आप वच नाव पाय के, होय भवोदधि तिरना।।मैं.।।7।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'चन्द्रनाथ' तुम आस्य चंद्र से, वचनामृत झरता है।
कर्णपुटों से पीते ही तो, हर्षाम्बुधि बढ़ता है।।मैं.।।8।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीचंद्रप्रभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर गण भी प्रभु गुण पाकर, पार नहीं पाते हैं।
'पुष्पदंत' तुम नाम मात्र से, निज आनंद पाते हैं।।मैं.।।9।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपुष्पदंतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह अग्नि से झुलस रहा जग, 'शीतल' शीतल करिये।
नाथ! शीघ्र ही भाक्तिक जन की, सकल भरम बुधि हरिये।।मैं.।।10।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'श्रेयांस' जगत में सबको, श्रेयस्कर हितकारी।
इंद्र नरेन्द्र सभी मिल पूजें, गुण गावें रुचि धारी।।मैं.।।11।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीश्रेयोजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वासुपूज्य' वासवगण पूजित, वसुगुण मुख्य धरे हैं।
सुर किन्नरियाँ वीणा लेके, प्रभु गुणगान करे हैं।।मैं.।।12।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवासुपूज्यनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भावकर्ममल द्रव्य कर्ममल, धोकर 'विमल' हुये हैं।
विमल धाम हेतु मुनिगण भी, तुम पदलीन हुये हैं।।मैं.।।13।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भव 'अनंत' को सर्वनाश कर, नाथ अनंत सुखी हैं।
तुम पद पंकज जो भवि पूजे, होते पूर्ण सुखी हैं।।मैं.।।14।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्म चक्रधर 'धर्म' जिनेश्वर, दशविध धर्म प्रदाता।
मुनिगण सुरगण विद्याधर गण, वंदत पावें साता।।
मैं भी दृढ़ भक्ती से पूजूँ, कर्म शृंखला टूटे।
प्रभु मुक्ती होने तक मेरा, सम्यक् रत्न न छूटे।।15।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शांतिनाथ' तुम पद आश्रय ले, भविजन शांती पाते।
इसी हेतु जग से अकुला कर, तुम शरणागत आते।।मैं.।।16।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चिच्चैतन्य सुधारस दाता, 'कुंथुनाथ' भगवंता।
जो तुम वंदे भवदुख खंडे, चित्सुख आस धरंता।।मैं.।।17।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अरजिनवर' का वंदन करके, सुरनर पुण्य कमाते।
निज कर में निजगुण संपति ले, सब दुख दोष गंवाते।।मैं.।।18।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काम मल्ल औ मोह मल्ल को, मृत्यु मल्ल को चूरा।
'मल्लिनाथ' ने भक्तजनों के, मनवांछित को पूरा।।मैं.।।19।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'मुनिसुव्रत' भगवान् स्वयं में, मुनिव्रत धर भवजीता।
उनके पद चिन्हों पर चलके, अगणित ने यम जीता।।मैं.।।20।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय निधि के स्वामी हैं, 'नमि' तीर्थंकर जग में।
फिर भी सर्व परिग्रह विरहित, मुद्रा नग्न प्रगट में।।मैं.।।21।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नेमिनाथ' ने राजमती तज, मुक्तिवल्लभा चाही।
सरस्वती माता ने उनकी, अनुपम कीर्ती गाई।।मैं.।।22।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कमठ दैत्य के उपसर्गों से, परम सहिष्णु कहाये।
'पारस' नाम मंत्र मन धारें, सहन शक्ति वे पायें।।मैं.।।23।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वर्धमान' अतिवीर वीर प्रभु, सन्मति नाम तुम्हारे।
महावीर प्रभु को जो वंदे, सकल अमंगल टारें।।मैं.।।24।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-

वृषभदेव को आदि ले, महावीर पर्यन्त।
श्री चौबीस जिनेश को, पूजत हो भव अंत।।25।।

शांतये शांतिधारा।दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य – **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

-दोहा-

चिन्मय चिंतामणि रतन, तीन भुवन के ईश।
गाऊँ तुम जयमालिका, नमूँ नमूँ नत शीश।।1।।

-पृथ्वी छंद-

जिनेन्द्र! तुम शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध अविकार हो।
जिनेन्द्र! तुम वर्णहीन बिनमूर्ति साकार हो।।
निराभरण हो तथापि जग के अलंकार हो।
अनंतगुण पुंजभूत फिर भी निराकार हो।।1।।

अनंत शुचिदर्श से सकल लोक अवलोकते।
अनंत वर ज्ञान से सकल भव्य संबोधते।।
अनंत निज शक्ति से श्रम न हो कदाचित् तुम्हें।
अनंत वर सौख्य से अमित काल तृप्ती तुम्हें।।2।।

न चक्षु न हि कर्ण घ्राण न हि स्पर्शनेंद्रिय तुम्हें।
न जीभ अतएव जिन अतीन्द्रिय स्वमुख तुम्हें।।
न शब्द रस गंध वर्ण विषयादि स्पर्श ना।
न क्रोध मद छद्म लोभ रति द्वेष संघर्ष ना।।3।।

न कर्म नोकर्म नाथ न हि भाव कर्मादि हैं।
न बंध न हि आस्रवादि नहि शल्य बाधादि हैं।।
न रोग शोकादि नाथ न हि जन्म मरणादि हैं।
न क्लेश न हि इष्ट निष्ट वीयोग योगादि हैं।।4।।

स्वयं परम तृप्त नाथ परमैक परामातमा।
स्वयं स्वयंभू स्वतः सुख स्वरूप सिद्धातमा।।
अमूर्तिक विभो तथापि चिनमूर्ति चिंतामणी।
अपूर्व तुम कल्पवृक्ष त्रैलोक्य चूड़ामणी।।5।।

अनंत भव सिंधु से तुरत नाथ! तारो मुझे।
अनंत दुःख अब्धि से जिनपते! उबारो मुझे।।
प्रभो मुझ समस्त दोष अब तो क्षमा कीजिये।
स्व 'ज्ञानमति' नाथ शीघ्र करके कृपा दीजिये।।6।।

-घत्ता-

वृषभादि जिनेश्वर, मुक्तिवधूवर, सुखसंपतिकर तुमहिं नमूँ।
निज आतम शुचिकर, सम्यक् निधिधर, फेर न भव वन बीच भ्रमूँ।।7।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्य वर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.9)

जम्बूद्वीप ऐरावत क्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा

स्थापना-अडिल्ल छंद

ऐरावत के वर्तमान जिनराज हैं।
भव वारिधि से तारण तरण जिहाज हैं।।
भक्ति भाव से करूँ यहाँ उन थापना।
पूजूँ भक्ति बढ़ाय करूँ हित आपना।।1।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-रोला छंद

सुरगंगा को नीर, कंचनकलश भराऊँ।
जिनवर चरण सरोज, पूजत कर्म नशाऊँ।।
चौबीसों जिनराज, तुम पदपद्म जजूँ मैं।
आतम अनुभव पाय, परमानंद भजूँ मैं।।1।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिरि घनसार, केशर संग घिसाऊँ।
तीर्थंकर पदकंज, पूजत दाह मिटाऊँ।।चौबीसों.।।2।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षीरोदधि के फेन, सम उज्ज्वल तंदुल हैं।
परम पुरुष को पूज, होता सुख मंजुल है।।
चौबीसों जिनराज, तुम पदपद्म जजूँ मैं।
आतम अनुभव पाय, परमानंद भजूँ मैं।।3।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्पवृक्ष के पुष्प, सुरभित वरण वरण के।
कामजयी परमेश, चरण जजूँ रुचि धरके।।चौबीसों.।।4।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मधुर सरस पकवान, भर भर थाल लिया मैं।
क्षुधा रोग हर नाथ, पूजत सौख्य लिया मैं।।चौबीसों.।।5।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत दीपक की ज्योति, बाहर तिमिर हरे है।
तुम पद पूजत शीघ्र, मन का मोह टरे है।।चौबीसों.।।6।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु वर धूप, अग्नी संग जलाऊँ।
कर्म कलंक विदूर, आतम शुद्ध बनाऊँ।।चौबीसों.।।7।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता पूग बदाम, फल अखरोट चढ़ाऊँ।
फल से जिनवर पूज, सर्वोत्तम फल पाऊँ।।चौबीसों.।।8।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंधादिक द्रव्य, लेकर अर्घ्य बनाऊँ।
भवविजयी जिनपाद, पूजत पाप नशाऊँ।।चौबीसों.।।9।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-दोहा-

कर्म मलीमस आत्मा, प्रभु तुम भक्ति प्रसाद।
शुद्ध बुद्ध होवे तुरत, अतः नमूँ तुम पाद।।1।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-पद्धड़ी छंद-

जिन 'बालचन्द्र' त्रैलोक्यनाथ, गणईस भजें नित नमित माथ।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीबालचन्द्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु 'सुव्रत' तीर्थंकर महेश, तुमको ध्यावें मुनिगण अशेष।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुव्रतजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'अग्निसेन' जिनदेव आप, भविजन के हरते सकल ताप।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअग्निसेनजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'नंदिसेन' के पाद कंज, योगी गण वंदत कर्म भंज।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनन्दिसेनजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर 'श्रीदत्त' पदारविंद, जजते ही मिटता सकल द्वंद्व।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीदत्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर 'व्रतधर' हो श्रेष्ठ चंद्र, भविमन आल्हादक श्रेष्ठ मंत्र।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीव्रतधरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'सोमचन्द्र' अद्भतु दिनेश, अज्ञान तिमिर को हरें शेष।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसोमचन्द्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीमन 'धृतिदीर्घ' अपूर्व तेज, जनमन का तत्क्षण हरें खेद।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधृतिदीर्घजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन 'शतायुष्य' सब कर्मचूर, भक्तों के संकट करें दूर।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशतायुष्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर 'विवसित' अद्भुत महान्, सुरकिन्नर गावें कीर्तिगान।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविवसितजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'श्रेयान' जिनेश्वर मुक्तिकांत, वंदन से हरते मोहध्वांत।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीश्रेयोजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन 'विश्रुतजल' भवजलधिनाव, जो ध्यावें पावें शुद्धभाव।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।12।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविश्रुतजलजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन 'सिंहसेन' तीर्थेश आप, भाक्तिकजन के सब हरो पाप।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।13।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसिंहसेनजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'उपशांत' जिनेश्वर सुनो टेर, हरिये भव भव का सकल फेर।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।14।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीउपशांतजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नाथ! 'गुप्तशासन' जिनेश, मेरे हरिये सब रोग द्वेष।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।15।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीगुप्तशासनजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर 'अनंतवीरज' महान्, गुणमणिरत्नों की अतुल खान।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।16।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअनंतवीर्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'पार्श्व' जिनेश्वर देवदेव, भवसंकट करिये तुरत छेव।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।17।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपार्श्वजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर 'अभिधान' सुबोध पुंज, इंद्रादि नमें धर रत्नपुंज।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।18।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअभिधानजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'मरुदेव' तीर्थकर सूर्य तुल्य, भविजनमनपंकज करें फुल्ल।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।19।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमरुदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर 'श्रीधर' त्रैलोक्यदेव, शिवलक्ष्मी संयुत परमदेव।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।20।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री-श्रीधरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन 'शामकंठ' की दिव्यवाणि, भव वल्ली काटन को कृपाणि।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।21।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशामकंठजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन 'अग्निप्रभ' भवदाहदूर, भविजन भव अग्नी शमन पूर।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।22।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअग्निप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'अग्निदत्त' जिनदेवदेव, शिवकांता इच्छुक करें सेव।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।23।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअग्निदत्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'वीरसेन' भगवान् आप, निज स्वात्मसुधा पीकर अपाप।
शिवपद के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूं सदा श्रद्धा समेत।।24।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवीरसेनजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-

श्री चौबीस जिनेश, सकल अमंगल को हरें।
पूरे सौख्य हमेश, पूजूँ परण अर्घ्य ले।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीबालचन्द्रादिवीरसेनपर्यंततचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

-दोहा-

तीनलोक की संपदा, करें हस्तगत भव्य।
तुम गुण माला गाय के, पूरें सब कर्तव्य।।1।।

चाल-हे दीनन्धु.....

जैवंत मुक्तिकंत देवदेव हमारे।
जैवंत भक्त जंतु भवोदधि से उबारे।।
हे नाथ! आप जन्म के छह मास ही पहले।
धनराज रत्नवृष्टि करें मातु के महलें।।1।।

माता की सेव करतीं श्री आदि देवियाँ।
अद्भुत अपूर्व भाव धरें सर्व देवियां।।
जब आप मात गर्भ में अवतार धारते।
तब इंद्र सपरिवार आय भक्ति भार से।।2।।
प्रभु गर्भ कल्याणक महाउत्सव विधि करें।
माता पिता की भक्ति से पूजन विधि करें।।
हे नाथ! आप जन्मते सुरलोक हिल उठे।
इंद्रासनों के कंप के आश्चर्य हो उठे।।3।।
इंद्रों के मुकुट आप से ही आप झुके हैं।
सुरकल्पवृक्ष हर्ष से ही फूल उठे हैं।।
वे सुरतरु स्वयमेव सुमन वृष्टि करे हैं।
तब इंद्र आप जन्म जान हर्ष भरे हैं।।4।।
तत्काल इंद्र सिंहपीठ से उतर पड़ें।
प्रभु को प्रणाम करके बार बार पग पड़े।।
भेरी करा सब देव का आह्वानन करे हैं।
जन्माभिषेक करने का उत्साह भरे हैं।।5।।
सुरराज आ जिनराज को सुरशैल ले जाते।
सुरगण असंख्य मिलके महोत्सव को मनाते।
जब आप हो विरक्त देव सर्व आवते।
दीक्षा विधी उत्सव महामुद से मनावते।।6।।
जब घातिया को घात ज्ञानसंपदा भरें।
तब इंद्र आ अद्भुत समवसरण विभव करें।।
तुम दिव्य वच पियूष को पीते असंख्यजन।
क्रम से करें वे मुक्ति वल्लभा का अलिंगन।।7।।
जब आप मृत्यु जीत मुक्ति धाम में बसे।
सिद्धयंगना के साथ परमानंद सुख चखें।।
सब इंद्र आ निर्वाण महोत्सव मनावते।
प्रभु पंचकल्याणक पती को शीश नावते।।8।।

हे नाथ! आप कीर्ति कोटि ग्रंथ गा रहे।
इस हेतु से ही भव्य आप शरण आ रहे।।।
मैं आप शरण पायके सचमुच कृतार्थ हूँ।
बस 'ज्ञानमती' पूर्ण होने तक ही दास हूँ।।9।।

-दोहा-

पंचमगति के हेतु मैं, नमन करूँ पंचांग।
परमानंद अमृत अतुल, सौख्य भरो सर्वांग।।10।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.10)

जम्बूद्वीप विहरमाण तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना-गीता छंद

इस प्रथम जंबूद्वीप बीचे पूर्व अपर विदेह हैं।
इस मध्य बत्तिस देश में शुभ कर्मभूमि सदैव हैं।।
भगवान सीमंधर व युगमंधर व बाहु सुबाहुजी।
ये श्रीविहार करें वहाँ आह्वानन कर मैं जजूँ जी।।1।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुचतुस्तीर्थंकरसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुचतुस्तीर्थंकरसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुचतुस्तीर्थंकरसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-चाल नंदीश्वर पूजा

सीतानदि शीतल नीर, प्रभुपद धार करूँ।
मिट जाये भव भव पीर, आतम शुद्ध करूँ।।
श्री विहरमाण जिनराज, मेरी अर्ज सुनो।
दे दीजे मुझ साम्राज, मैं तुम चरण नमो।।1।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुचतुस्तीर्थंकरेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिरि गंध सुगंध, प्रभु चरणों चर्चूं।
मिल जावे आत्म सुगंध, स्वारथवश अर्चूं।।श्री.।।2।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुचतुस्तीर्थंकरेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

कौमुदी शालि के पुंज, नाथ! चढ़ाऊँ मैं।
जिन आत्म सौख्य अखंड, अर्चत पाऊँ मैं।।
श्री विहरमाण जिनराज, मेरी अर्ज सुनो।
दे दीजे मुझ साम्राज, मैं तुम चरण नमो।।3।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुचतुस्तीर्थंकरेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

वरमौलसिरी व गुलाब, पुष्प चढ़ाऊँ मैं।
प्रभु मिले आत्मगुण लाभ, आप रिझाऊँ मैं।।श्री.।।4।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुचतुस्तीर्थंकरेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

लाडू पेड़ा पकवान, नाथ! चढ़ाऊँ मैं।
कर क्षुधा वेदनी हान, निजसुख पाऊँ मैं।।श्री.।।5।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुचतुस्तीर्थंकरेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक की ज्योति अखंड, आरति करते ही।
मिल जावे ज्योति अमंद, निजगुण चमकें ही।।श्री.।।6।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुचतुस्तीर्थंकरेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

वर धूप अग्नि में खेय, सुरभि उड़ाऊँ मैं।
प्रभु पद पंकज को सेय, समसुख पाऊँ मैं।।श्री.।।7।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुचतुस्तीर्थंकरेभ्यः धूप निर्वपामीति स्वाहा।

केला एला बादाम, फल से पूजूँ मैं।
पाऊँ निज में विश्राम, भव से छूटूँ मैं।।श्री.।।8।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहुचतुस्तीर्थंकरेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वसु अर्घ रजत के पुष्प, थाल भराय लिया।
रत्नत्रय से मन तुष्ट, आप चढ़ाय दिया।।श्री.।।9।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपस्थपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितसीमंधरयुगमंधरबाहुसुबाहु-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

नाथ! पाद पंकेज, जल से त्रयधारा करूँ।
अतिशय शांती हेत, शांतीधारा विश्व में।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार गुलाब, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।
मिले आत्मसुखलाभ, जिनपद पंकज पूजते।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ

-दोहा-

जंबूद्वीप विदेह में, विहरमाण जिनराज।
पुष्पांजलि कर पूजते, सरें सर्व जिनकाज।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-शंभु छंद-

श्री मेरु सुदर्शन के पूरब विदेह सीता के ऊपर तट।
है पुंडरीकिणी पुरी पिता, श्रेयांस सती माता विश्रुत।।
वृष चिन्ह सहित श्री सीमंधर, भगवान अभी भी राजे हैं।
मैं उनको अर्घ चढ़ाकर के, पूजूँ आतम सुख भासे हैं।।1।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिपूर्वविदेहक्षेत्रस्थपुण्डरीकिणीपुरीमध्यसमवसरण-स्थित-सीमंधरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मेरु सुदर्शन के पूरब, विदेह सीता नदि दक्षिण में।
दृढ़रथ पितु मात सुतारा से, जन्में प्रभु विजयानगरी में।।

गज चिन्ह सहित श्री 'युगमंधर' तीर्थंकर समवसरण में हैं।
हम पूजें बहुविध भक्ति लिये, सबके ही लिय शरण ये हैं।।2।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिपूर्वविदेहक्षेत्रस्थविजयनगरीमध्यसमवसरणस्थित-युगमंधरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस जम्बूद्वीप अपर विदेह, सीतोदा नदि के दक्षिण में।
शुभ पुरी सुसीमा के राजा, उन रानी से भगवन् जन्में।।
मृगचिंह सहित 'श्रीबाहु' आप, विहरण कर भविजन हरसाते।
हम पूजें अर्घ चढ़ा करके, प्रभु धर्मामृत तुम बरसाते।।3।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिपश्चिमविदेहक्षेत्रस्थसुसीमानगरीमध्यसमवसरण-स्थित-श्रीबाहुजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस जंबूद्वीप अपर विदेह, सीतोदा नदि के उत्तर में।
हैं पुरी अयोध्या के नरपति, उनकी रानी से प्रभु जन्में।।
तीर्थेश 'सुबाहु' शतइंद्रों, वंदित कपि चिन्ह सहित राजें।
हम पूजें अर्घ चढ़ा करके, सब रोग शोक दारिद भाजें।।4।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिपश्चिमविदेहक्षेत्रस्थअयोध्यापुरीमध्यसमवसरण-स्थित-श्रीसुबाहुजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-चौपाई-

पूर्वापर बत्तीस विदेह, चार तीर्थंकर नित विहरेय।
पूजूँ पूरण अर्घ चढ़ाय, सब दुख संकट जांय पलाय।।1।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थसीमंधरादिचतुस्तीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

अनंगशेखर छंद

नमो नमो जिनेंद्रदेव! आप सौख्यरूप हो,
अनंत दिव्य ज्ञान से समस्त लोक भासते।
नमो नमो जिनेन्द्रदेव आप चित्स्वरूप हो,
अनंत दिव्य चक्षु से समस्त विश्व लोकते।।1।।

नमो जिनेन्द्र देव आप सर्व शक्तिमान हो,
अनंत वस्तु देखते तथापि श्रांत हों नहीं,
नमो जिनेन्द्रदेव! आपमें अनंत गुण भरे,
गणीन्द्र भी गिने तथापि पार पावते नहीं।।2।।

प्रभो असंख्य भव्य जीव आपकी शरण गहें,
अनादि के अनंत दुःख वार्धि से स्वयं तिरें।
असंख्य जीव मन वश न आप पास आवते,
स्वयं हि वे अपार भव अरण्य में सदा फिरें।।3।।

अनेक जीव दृष्टि रत्न पाय के निहाल हों,
अनेक जीव तीनरत्न पाय मालामाल हों।
अनेक जीव आप भक्ति में विभोर हो रहे,
अनेक जीव मृत्यु को पछाड़ पुण्यशालि हो रहे।।4।।

मुनींद्रवृंद हाथ जोड़ शीश नाय नायके,
पुनःपुनः नमें तथापि तृप्ति ना लहें कभी।
सुरेंद्रवृंद अष्ट द्रव्य लाय अर्चना करें,
सुदिव्य रत्न को चढ़ाय तृप्ति ना लहें कभी।।5।।

नरेन्द्रवृंद भक्ति में विभोर नृत्य भी करें,
सुरांगना जिनेन्द्र भक्ति गीत गा रहीं वहाँ।
खगेन्द्रवृंद गीत गा संगीत वाद्य को बजा,
खगांगना के साथ नाथ! अर्चना करें वहाँ।।6।।

जिनेन्द्र! आपकी सभा असंख्य भव्य से भरी,
तथापि क्लेश ना किसी को ये प्रभाव आपका।
निरक्षरी ध्वनी खिरे सभी के कर्ण में पड़े,
सभी समझ रहें स्वयं प्रभो! प्रभाव आपका।।7।।

सुभव्य जीव ही सुनें गुनें निजात्म तत्त्व को,
अपूर्व तेज आपका न कोई पार पा सकें।
जयो जयो जयो प्रभो! अनंत ऋद्धिपूर्ण हो,
करो मुझे निहाल नाथ! आप भक्त जान के।।8।।

-दोहा-

सीमंधर युगमंधरा, बाहु सुबाहु जिनेश।
नमूँ 'ज्ञानमति' हेतु मैं, हरो सर्व भव क्लेश।।9।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थसीमंधरादिचतुस्तीर्थंकरेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.11)

जम्बूद्वीपस्थ नवदेवता पूजा

अथ स्थापना-गीता छंद

इस प्रथम जंबूद्वीप में सब कर्मभू चौंतीस हैं।
अर्हंत सिद्धाचार्य पाठक साधु यहाँ जगदीश हैं।।
जिनधर्म जिनआगम जिनेश्वर बिंब जिनमंदिर यहाँ।
पूजूँ इन्हें आह्वानन कर त्रयरत्न निधि मिलती यहाँ।।1।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं- नरेन्द्र छंद

सरयू नदि का शीतल जल ले जिनपद धार करूँ मैं।
साम्य सुधारस शीतल पीकर भव भव त्रास हरूँ मैं।।
कर्मभूमि के नवदेवों को पूजत निज सुख पाऊँ।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग के सब दुख शीघ्र नशाऊँ।।1।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्व-साधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीरी केशर चंदन घिस जिनपद में चर्चूं मैं।
मानस आगंतुक त्रयविध ताप हरो अर्चूं मैं।।कर्म.।।2।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मोती सम उज्जवल अक्षत के प्रभु नवपुंज चढ़ाऊँ।
जिनगुण मणि को प्रगटित करके फेर न भव में आऊँ।।
कर्मभूमि के नवदेवों को पूजत निज सुख पाऊँ।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग के सब दुख शीघ्र नशाऊँ।।3।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्व-साधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जुही मोगरा सेवंती वासंती पुष्प चढ़ाऊँ।
कामदेव को भस्मसात् कर आतम सौख्य बढ़ाऊँ।।कर्म.।।4।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्व-साधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घेवर फेनी लड्डू पेड़ा रसगुल्ला भर थाली।
तुम्हें चढ़ाऊँ क्षुधा नाश हो भरें मनोरथ खाली।।कर्म.।।5।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्व-साधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्ण दीप में ज्योति जलाऊँ करूँ आरती रुचि से।
मोह अंधेरा दूर भगे सब ज्ञान भारती प्रगटे।।कर्म.।।6।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्व-साधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप दशांगी अग्निपात्र में खेवत उठे सुगंधी।
कर्म जले सब सौख्य प्रगट हो फैले सुयश सुगंधी।।कर्म.।।7।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्व-साधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आडू लीची सेव संतरा आम अनार चढ़ाऊँ।
सरस मधुर फल पाने हेतू शत शत शीश झुकाऊँ।।कर्म.।।8।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्व-साधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंधादिक अर्घ बनाकर सुवरण पुष्प मिलाऊँ।
भक्ति भाव से गीत नृत्य कर प्रभु को अर्घ चढ़ाऊँ।।कर्म.।।9।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

यमुना सरिता नीर, प्रभु चरणों धारा करूँ।
मिले निजात्म समीर, शांतीधारा शं करे।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुरभित खिले सरोज, जिन चरणों अर्पण करूँ।
निर्मद करूँ मनोज, पाऊँ जिनगुण संपदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-दोहा-

पहले जंबूद्वीप में, कर्मभूमि चहुँदिक्क।
नवदेवों को नित जजूँ, पुष्पांजलि कर नित्त।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-शंभु छंद-

मेरू पर्वत के पूरब में, वन भद्रशाल की वेदी है।
उस निकट देश 'कच्छा' विदेह, नदि पर्वत से छह भेदी है।।
मधि आर्य खंड में तीर्थंकर, मुनिगण नित विहरण करते हैं।
नव देव वहाँ पर नित्य रहें, पूजत ही नव निधि भरते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपूर्वविदेहकच्छादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर देश 'सुकच्छा' छह खंड में, शुभ आर्यखंड सुर मन मोहे।
वहाँ जिनवर मुनिगण नित विहरें, जिनधर्म जिनागम नित होहैं।।

नरपति मानव जिनवर मूर्ती, जिनमंदिर नित बनवाते हैं।
हम पूजें इन नव देवों को, ये नवनिधि रिद्धि दिलाते हैं।।2।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपूर्वविदेहसुकच्छादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वहाँ देश 'महाकच्छा' छह खंड, उसमें आरज खंड शोभ रहा।
जिनवर के समवसरण दिखते, साधूगण से मन मोह रहा।।
जिनधर्म प्रवर्ते जिनवाणी, जिनमंदिर जिन प्रतिमायें हैं।
हम पूजें अर्घ चढ़ा करके, ये निज संपत्ति दिलाये हैं।।3।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपूर्वविदेहमहाकच्छादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वहाँ देश 'कच्छावती' दिपे, आरज खंड में तीर्थंकर हों।
श्री पंच परमगुरु पूज्य वहाँ, जिनधर्म जिनागम हितकर हों।।
जिनचैत्य जिनालय रत्नों के, सुर नर बनवातें रहते हैं।
हम पूजें अर्घ चढ़ा करके, ये निज संपत्ति दिलाये हैं।।4।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपूर्वविदेहकच्छकावतीदेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है 'आवर्ता' देश अधिक सुन्दर, वहाँ शाश्वत कर्मभूमि रहती।
वर आर्य खंड में तीर्थंकर, मुनिगण से पूज्य दुःख हरती।।
जिनचैत्य जिनालय अति सुन्दर, सुर नर बनवाते रहते हैं।
हम पूजें अर्घ चढ़ा करके, ये साम्य सुधारस भरते हैं।।5।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपूर्वविदेहआवर्तादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है देश 'लांगलावर्ता' शुभ, उस मध्य आर्य खंड शोभे है।
वहाँ पर केवलि श्रुतकेवलि मुनि, जिनधर्म जिनागम शोभे हैं।।जिनचैत्य.।।6।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपूर्वविदेहलांगलावर्तादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वहाँ देश 'पुष्कला' छह खंडों में, आर्यखंड अति प्यारा है।
तीर्थंकर आदि महापुरुषों से, पूज्य सतत सुखकारा है।।जिनचैत्य.।।7।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपूर्वविदेहपुष्पकलादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वहाँ देश 'पुष्कलावती' सुखद, उस आर्यखंड में धर्म दिपे।
तीर्थंकर केवलि विहरण नित करते रहते निज कर्म खिपें।।जिनचैत्य.।।8।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपूर्वविदेहपुष्कलावतीदेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता नदि के दक्षिण दिश में 'वस्सा' विदेह कहलाता है।
इसके मधि आर्यखंड सुंदर नित धर्मसुधा बरसाता है।।जिनचैत्य.।।9।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपूर्वविदेहवत्सादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यहाँ देश 'सुवत्सा' पूरब में, छह खंड मध्य आरजखंड है।
तीर्थंकर केवलि मुनि विहरें, जिनधर्म जिनागम संतत हैं।।जिनचैत्य.।।10।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपूर्वविदेहसुवत्सादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यहाँ देश 'महावत्सा' विदेह, चौथा ही काल सतत वर्तें।
तीर्थंकर विहरें रिद्धिधारि, मुनिगण हैं भवि जिनवर अर्चें।।जिनचैत्य.।।11।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपूर्वविदेहमहावत्सादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यहाँ देश 'वत्सकावती' मध्य, शुभ आर्यखंड जन मन मोहे।
जिनवर गणधर मुनिगण विहरें, दर्शन से पाप खंड होहैं।।जिनचैत्य.।।12।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपूर्वविदेहवत्सकावतीदेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है 'रम्या' देश विदेह रम्य, छह खंड में आर्य खंड सुंदर।
केवलि चारणऋद्धी मुनिगण, नित विहरें भक्ति करों सुर नर।।जिनचैत्य.।।13।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपूर्वविदेहरम्यादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वरदेश 'सुरम्या' पूरब में, इक आर्य खंड में कर्मभूमि।
तीर्थंकर मुनिगण नित होते, भवि प्राप्त करें नित मुक्ति भूमि।।
जिनचैत्य जिनालय अति सुन्दर, सुर नर बनवाते रहते हैं।
हम पूजें अर्घ चढ़ा करके, ये साम्य सुधारस भरते हैं।।14।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपूर्वविदेहसुरम्यादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रमणीया' देश विदेह वहाँ, शाश्वत, ही कर्मभूमि रहती।
तीर्थंकर साधूगण होते, नहिं ईति भीति वहाँ हो सकती।।जिनचैत्य.।।15।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपूर्वविदेहरमणीयादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीदेह 'मंगलावती' देश, वहाँ पूर्वकोटि उत्तम आयु।
जिनवर मुनिगण से पावन भू, पणशतक धनू ऊँची काय[1]।।जिनचैत्य.।।16।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपूर्वविदेहमंगलावतीदेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चाल-शेर

पश्चिमविदेह भद्रसाल वेदि के निकट।
'पद्मा' विदेहदेश आर्य खंड से प्रगट।।
तीर्थेश आदि पंचगुरु नित्य वहाँ हैं।
जिनबिंब जिनालय जजूँ जितने भि वहाँ।।17।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपश्चिमविदेहपद्मादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम विदेह देश 'सुपद्मा' सुमान्य है।
इस आर्य खंड में जिनेश विद्यमान हैं।।तीर्थेश.।।18।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपश्चिमविदेहसुपद्मादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. शरीर।

वीदेह 'महापद्मा' के आर्य खंड में।
नवदेव देव रहते मुनिवंद्य विश्व में।।तीर्थेश.।।19।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपश्चिमविदेहमहापद्मादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर 'पद्मकावती' विदेह आर्यखंड में।
सुरवृंद से भि पूज्य पुण्य नर वहाँ जन्मे।।तीर्थेश.।।20।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपश्चिमविदेहपद्मकावीदेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शंखा' विदेह देश में सम्यक्त्व का झरना।
जिनदेव देव की वहाँ लेते सभी शरना।।तीर्थेश.।।21।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपश्चिमविदेहशंखादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिना' विदेह देश में पाखंड ना दिखे।
भविजन सदा जिनदेव देव रूप को निरखें।।तीर्थेश.।।22।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपश्चिमविदेहनलिनादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कुमुदा' विदेह देश में श्रावक सदा रहें।
पूजा व दान शील व उपवास रत रहें।।तीर्थेश.।।23।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपश्चिमविदेहकुमुदादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम विदेह 'सरित' देश खंड छह वहाँ।
मधि आर्यखंड में भविक जिनभक्त हैं वहाँ।।तीर्थेश.।।24।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपश्चिमविदेहसरितदेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वप्रा' विदेह देश में जिनअर्चना सदा।
सुरगण भी वहाँ आय के उत्सव करें मुदा।।तीर्थेश.।।25।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपश्चिमविदेहवप्रादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

पश्चिम विदेह देश 'सुवप्रा' सुशोभता।
छह खंड मध्य आर्यखंड चित्त मोहता।।
तीर्थेश आदि पंचगुरु नित्य वहाँ हैं।
जिनबिंब जिनालय जजूँ जितने भि वहाँ हैं।।26।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपश्चिमविदेहसुवप्रादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विदेह 'महावप्रा' के आर्य खंड में।
नित जैनधर्म वर्ते भवि कर्म को हने।।तीर्थेश.।।27।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपश्चिमविदेहमहावप्रादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर 'वप्रकावती' विदेह आर्य खण्ड में।
मिथ्यात्व वेषधारी नहिं एक भी उनमें।।तीर्थेश.।।28।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपश्चिमविदेहवप्रकावतीदेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधा' विदेह देश में छह खंड शोभते।
नित आर्य खंड में वहाँ मुनि कर्म धोवते।।तीर्थेश.।।29।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपश्चिमविदेहगंधादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम विदेह देश 'सुगंधा' महान है।
इस मध्य आर्य खंड सर्व सौख्य खान है।।तीर्थेश.।।30।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपश्चिमविदेहसुगंधादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विदेह 'गंधिला' विषे छह खंड बने हैं।
इस आर्य खण्ड में मुनीन्द्र धर्म भणे हैं।।तीर्थेश.।।31।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपश्चिमविदेहगंधिलादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर 'गंधमालिनी' विदेह देश सुहाना।
छह खंड मध्य एक आर्य खंड बखाना।।तीर्थेश.।।32।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिपश्चिमविदेहगंधमालिनीदेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-गीता छंद-

इस प्रथम जंबूद्वीप में दक्षिण दिशी वर 'भरत' है।
छह खंड में इक आर्य खंड यहं काल छह वर्तन्त हैं।।
चौथे सुयुग में तीर्थंकर केवलि ऋषीगण विहरते।
युग पांचवे तक धर्म जिनवरधाम प्रतिमा भवि जजें।।33।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिदक्षिणदिग्भरतक्षेत्रस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस द्वीप में उत्तर दिशी है क्षेत्र ऐरावत कहा।
छह खंड आरज खंड में जब काल चौथा हो वहाँ।।
तीर्थेश चारणमुनि तभी विहरें जगत् कलिमल हरें।
युग पांचवे तक धर्म जिनगृह बिंब पूजत सुख भरें।।34।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिउत्तरदिग्ऐरावतक्षेत्रस्थितआर्यखंडेअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-

अर्हंत सिद्धाचार्य पाठक साधु पण परमेष्ठि हैं।
जिनधर्म जिन आगम जिनेश्वर बिंब जिनगृह इष्ट हैं।।
नव देवता ये मान्य जग में हम सदा पूजें इन्हें।
नवनिद्धि रिद्धि समृद्ध दाता नित्यप्रति वंदूँ इन्हें।।1।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितत्रैकालिक-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कच्छा सुकच्छा आदि में नित आर्यिकायें विहरतीं।
इस भरत आरजखंड में बाह्य यादि साध्वी हो चुकीं।।
तबसे व पंचमकाल अंतिम तक श्रमणियां होयेंगी।
ऐरावतारज खंड की साध्वी जजत अघ धोयेंगी।।2।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितत्रैकालिक-आर्यिकाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस द्वीप में तीर्थंकरों के पंच कल्याणक सदा।
भू पर्वतादी पूज्य पावन तीर्थ होते शर्मदा।।

गणधर मुनीश्वर के यहाँ ज्ञान मुक्ति स्थल हुये।
इन क्षेत्र को मैं नित्य पूजूं नित्य मंगल परिणये।।3।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थिततीर्थंकरगणधरमुनिगण-पंचकल्याणकादितीर्थक्षेत्रेभ्यःपूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

-नरेन्द्र छंद-

जय जय श्री अरहंतदेव जय सिद्ध प्रभू सुखकारी।
जय जय सूरी पाठक साधू भव भव दुख परिहारी।।
जय जिनधर्म जिनेश्वर वाणी जय जिनबिंब जिनालय।
नव देवों को नित्य नमूँ मैं ये हैं सर्वसुखालय।।1।।

जंबूद्वीप का भरत क्षेत्र है पणशत छब्बिस योजन।
छह खंडों में आर्य खंड इक यहाँ काल परिवर्तन।।
चौथे युग में अर्हंतादिक नवों देव रहते हैं।
पंचम युग में आचार्यादिक सात देव रहते हैं।।2।।

ऐरावत में भरतक्षेत्र सम सर्व व्यवस्था मानी।
बत्तीस क्षेत्र विदेहों में नित वर्ते जिनवर वाणी।।
कच्छादेश विदेह दो सहस दो सौ बारह योजन।
भरतक्षेत्र से चतुर्गुणाधिक सब विदेह हैं उत्तम।।3।।

चौंतिस आर्यखंड में इक-इक उपसागर हैं मानें।
यहाँ भरत के उपसागर उपनदियाँ बहुत बखानें।।
कर्मभूमि में मनुज धर्म कर स्वर्ग मुक्ति पद पाते।
रत्नत्रय से निजनिधि पाकर शाश्वत सुख पा जाते।।4।।

शुभ से पुण्यास्रव पापास्रव अशुभ भाव से होता।
इससे आठ कर्म बंध जाते फल पाते दुख होता।।

कोई ज्ञान प्रशंसा करते उसमें ईर्ष्या होती।
जानबूझ कर ज्ञान छिपावें तब निन्हव का दोषी।।5।।

नहीं बताना ज्ञान अन्य को यह मात्सर्य दुखारी।
ज्ञानध्यान में विघ्न डालना अन्तराय है भारी।।
अन्य प्रकाशित ज्ञान रोककर आसादन कर देना।
सत्यवान में दोष लगा उपघात दोष कर देना।।6।।

ज्ञान विषय में इन कार्यों से ज्ञानावरण बंधे हैं।
दर्शन विषयक इन कार्यों से दर्शनराज चिपके हैं।।
हे! प्रभु मुझ पर कर्मशत्रु ये प्रतिक्षण आते रहते।
रुक जाते फिर समय पायकर ज्ञान दरस हैं ढकते।।7।।

नाथ! इन्हीं से मैं अज्ञानी पूर्ण ज्ञान नहिं प्रगटे।
प्रभो! युक्ति ऐसी दे दीजे 'ज्ञानमती' बन चमकें।।
केवलज्ञान स्वभावी आत्मा केवलदर्श स्वभावी।
नाथ! आपकी कृपा प्राप्त कर बनूँ निजात्म स्वभावी।।8।।

-दोहा-

इंद्र वंद्य नवदेवता, कर्मभूमि में सिद्ध।
अन्य जगह बस दो रहें, जिनगृह जिनवरबिंब।।9।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितअर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधु-जिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.12)

धातकीखण्ड द्वीप इष्वाकार जिनालय पूजा

-अथ स्थापना-शंभुछंद-

वर द्वीप धातकी के दक्षिण, उत्तर में इष्वाकार कहे।
ये द्वीप धातकी को पूरब, पश्चिम दो खंड में बांट रहे।।
इन पर्वत पर दो जिनमंदिर, जिनप्रतिमा का आह्वान करूँ।
सुरपति खगपति चक्री पूजित, जिनप्रतिमा का गुणगान करूँ।।1।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपसंबंधिदक्षिणोत्तरद्वयइष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपसंबंधिदक्षिणोत्तरद्वयइष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपसंबंधिदक्षिणोत्तरद्वयइष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

-अथाष्टकं-

क्षीरोदधि का पयसम[1] जल ले, कंचन कलशा भर लाया हूँ।
निज आत्म करम मल धोने को, प्रभु धारा देने आया हूँ।।
इष्वाकाराचल के दो हैं, जिनमंदिर अतिशय गुणधारी।
इनको पूजत ही परमानंद, आतम अनुभव हो सुखकारी।।1।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपसंबंधि-इष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयज चंदन केशर घिस के, तुम चरण चढ़ाने आया हूँ।
आत्यंतिक शांति हेतू मैं, भवज्वाल बुझाने आया हूँ।।

---

1. दूध समान।

इष्वाकाराचल के दो हैं, जिनमंदिर अतिशय गुणधारी।
इनको पूजत ही परमानंद, आतम अनुभव हो सुखकारी।।2।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपसंबंधि-इष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

कामोद श्यामजीरी तंदुल, कलमों को धोकर लाया हूँ।
अक्षय सुखमय शुद्धात्म हेतु, प्रभुपुंज चढ़ाने आया हूँ।।इष्वा.।।3।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपसंबंधि-इष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरतरु के सुरभित विविध सुमन, सुमनस मनहर मैं लाया हूँ।
प्रभु काम बाण विध्वंस हेतु, तुम चरण चढ़ाने आया हूँ।।इष्वा.।।4।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपसंबंधि-इष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पूरणपोली पूरी खाजे, नुकती लड्डू मैं लाता हूँ।
निजक्षुधा व्याधि के नाश हेतु, चरणों के निकट चढ़ाता हूँ।।इष्वा.।।5।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपसंबंधि-इष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गोघृत भर कंचन दीपशिखा, दश दिश अंधेर भगा देती।
दीपक ज्योती से यजते ही, अज्ञान अंधेर मिटा देती।।इष्वा.।।6।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपसंबंधि-इष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु धूप सुगंधित ले, अग्नी में खेने आया हूँ।
कर्मों को जला जला करके, दश दिश में धूम उड़ाया हूँ।।इष्वा.।।7।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपसंबंधि-इष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

एला केला अंगूर आम, पिस्ता किसमिस बादाम लिया।
शिवफल की आशा से जिनवर, तुम सन्मुख में फल चढ़ा दिया।।

इष्वाकाराचल के दो हैं, जिनमंदिर अतिशय गुणधारी।
इनको पूजत ही परमानंद, आतम अनुभव हो सुखकारी।।8।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपसंबंधि-इष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत पुष्प चरू, वरदीप धूप फल लाता हूँ।
वर हेमपात्र में अर्घ्य सजा, प्रभु निकट चढ़ाने आता हूँ।।इष्वा.।।9।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपसंबंधि-इष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

कनक भृंग में मिष्ट जल, सुरगंगा समश्वेत।
जिनपद धारा देत ही, भव भव को जल देत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

वकुल सरोरुह मालती, पुष्प सुगंधित लाय।
पुष्पांजलि अर्पण करूँ, सुख संपति अधिकाय।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

दुतिय धातकी द्वीप, दक्षिण उत्तरदिश विषें।
इष्वाकृति नग दोय, ताके जिनगृह पूजहूँ।।1।।

इति धातकीखण्डद्वीपसंबंधि-*इष्वाकारनगस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।*

–शम्भु छंद–

वर द्वीप धातकी के दक्षिण, लवणोदधि कालोदधि छूता।
नग इष्वाकार सहस योजन, विस्तृत अरु चार शतक ऊँचा।।
यह लंबा चार लाख योजन, कनकाभ[1] कूट चउ इस पे हैं।
इस सिद्धकूट में जिनमंदिर, हम अर्घ्य चढ़ाकर जजते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपसंबंधि-दक्षिणदिग्-इष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. सुवर्णमयी।

वर द्वीप धातकी उत्तर में, लवणोदधि कालोदधि छूता।
गिरि इष्वाकृति योजन हजार, विस्तृत अरु चार शतक ऊँचा।।
यह चार लाख योजन लंबा, स्वर्णाभ चार कूटों युत है।
इक सिद्धकूट में जिनमंदिर, हम अर्घ्य चढ़ाकर पूजत हैं।।2।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपसंबंधि-उत्तरदिग्-इष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-दोहा-

द्वीप धातकी खंड में, दक्षिण उत्तर माहिं।
इष्वाकृति गिरि के युगल, जिनगृह पूज रचाहिं।।1।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपसंबंधि-दक्षिणोत्तरदिग्संस्थित-इष्वाकारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलि।

*जाप्य-***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

-सोरठा-

इष्वाकार गिरीन्द्र, इन पे जिनगृह शाश्वते।
तिनमें श्री जिनबिंब, मैं गाऊँ गुणमालिका।।1।।

जय जय श्री जिन सिद्धायतनं, भविजन को सिद्धि प्रदाता हो।
जय स्वयं सिद्ध शाश्वत भगवन्, मुनिजन के मुक्ति विधाता हो।।
जय जय गुणरत्नाकर स्वामी, जो तुमको नित प्रति ध्याते हैं।
वे तुम भक्ती नौका चढ़कर, भववारिधि से तिर जाते हैं।।2।।
इष्वाकृतिनग पर सिद्धकूट, उनमें जिनप्रतिमा राजे हैं।
जो उनकी पूजा भक्ति करें, वे भववल्ली को काटे हैं।।
पर्वत के दोनों भागों में, तट वेदी वन पंक्ती शोभें।
धनु पांच शतक विस्तृत स्वर्णिम, ऊँची दो कोस बहुत शोभें।।3।।
इन भित्ति सदृश वेदी के द्वय, भागों में वनखंड शोभ रहे।
जो तोरण पुष्करिणी वापी-युत जिनभवनों से रम्य कहें।।

वन खंडों में सुरमहल बने, तोरण रत्नों से शोभित हैं।
ऐसे ही पर्वत के ऊपर, तट वेदी औ वन पंक्ती हैं।।4।।
ये पर्वत अतिशय रम्य कहे, सुवरण कांती से चमके हैं।
इन पर जो चार कूट माने, त्रय में व्यंतर सुर बसते हैं।।
इक सिद्धकूट में जिनमंदिर, जो अकृत्रिम कहलाता है।
कांचन मणि रत्नों से निर्मित ध्वज पंक्ती को लहराता है।।5।।
जिनगृह को घेरे परकोटे, हैं तीन कनकमय रत्न जड़े।
उनके अंतर में दशविध ध्वज, अरु कल्पतरू रमणीय बड़े।।
वर मानस्तम्भ रतन निर्मित, सिद्धों की प्रतिमा वंद्य वहाँ।
मानस्तम्भों के दर्शन से, सच मान गलित हो जाय वहाँ।।6।।
ये जिनमंदिर शिवललना के, शृंगार विलाससदन[1]माने।
भविजन हेतू कल्याण भवन, पुण्यांकुर सिंचन घन[2] माने।।
इनमें हैं इक सौ आठ कहीं, जिनप्रतिमा रतनमयी जानो।
मुझ 'ज्ञानमती' को रत्नत्रय, सम्पत्ति देवें यह सरधानो।।7।।

-घत्ता-

जय जय जिनचंदा, सुख के कंदा, शिवतियकंता नाथ तुम्हीं।
जय तुम गुण गाऊँ, दुरित नशाऊँ, फेर न आऊँ चहुंगति ही।।8।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपसंबंधि-दक्षिणोत्तरदिक्स्थितेष्वाकारपर्वतस्थित-सिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

1.घर। 2. मेघ।

(पूजा नं.13)

विजयमेरु पूजा

अथ स्थापना-दोहा

पूर्व धातकी खंड में, विजयमेरु अभिराम।
तिसमें सोलह जिनभवन, हैं शाश्वत गुणधाम।।1।।

जिनवर प्रतिमा मणिमयी, शिवसुखफल दातार।
आह्वानन विधि से यहाँ, पूजूँ अष्ट प्रकार।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपस्थविजयमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयजिनबिंबसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपस्थविजयमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयजिनबिंबसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपस्थविजयमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयजिनबिंबसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं- चामर छंद

क्षीरसिंधु नीर लाय स्वर्णभृंग में भरूँ।
श्री जिनेन्द्र पद में चढ़ाय कर्म मल हरूँ।।
मेरुविजय के जिनेन्द्र गेह को यहाँ जजूँ।
स्वात्मसिद्धि हेतु मैं जिनेन्द्र बिंब को भजूँ।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपस्थविजयमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयजिनबिंबेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टगंध अतिसुगंध हेमपात्र में लिये।
नाथ पाद अर्च के समस्त दाह नाशिये।।मेरु.।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपस्थविजयमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयजिनबिंबेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चंद्रकांति के समान श्वेत शालि लाइया।
नाथ पाद के समीप पुंज को चढ़ाइया।।
मेरुविजय के जिनेन्द्र गेह को यहाँ जजूँ।
स्वात्मसिद्धि हेतु मैं जिनेन्द्र बिंब को भजूँ।।3।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपस्थविजयमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयजिनबिंबेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पारिजात मोगरा जुही गुलाब लाइया।
कामनाश हेतु आप पाद में चढ़ाइया।।मेरु.।।4।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपस्थविजयमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयजिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मालपूप खज्जिकादि शर्करा विमिश्र ले।
भूख व्याधि नाशहेतु आपको समर्पित ले।।मेरु.।।5।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपस्थविजयमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयजिनबिंबेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णपात्र में संजोय दीप आरती करूँ।
भेदज्ञान को प्रकाश ज्ञान भारती वरूँ।।मेरु.।।6।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपस्थविजयमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयजिनबिंबेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्निपात्र में सदा सुगंध धूप खेवते।
पापपुंज को जलाय स्वात्मसौख्य सेवते।।मेरु.।।7।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपस्थविजयमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयजिनबिंबेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सेव आम और अनार लाय थाल में भरे।
मोक्षफल निमित्त आज आप अर्चना करें।।मेरु.।।8।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपस्थविजयमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयजिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीरगंध अक्षतादि लेय अर्घ्य थाल में।
तीन रत्न प्राप्ति हेतु पूजहूँ त्रिकाल में।।मेरु.।।9।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपस्थविजयमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

परमशांति के हेतु, शांतीधारा मैं करूँ।
सकल विश्व में शांति, सकल संघ में हो सदा।।10।।

शांतये शांतिधारा।

चंपक हरसिंगार, पुष्प सुगंधित अर्पते।
होवे सुख अमलान, दुख दारिद्र पलायते।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

अथ प्रत्येक अर्घ

-सोरठा-

शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध, जिनवर प्रतिमा मैं जजूँ।
निज आतम कर शुद्ध, पाऊँ परमानंद मैं।।1।।

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-नरेन्द्र छंद-

विजय मेरु के पृथ्वी तल पर, भद्रशाल वन सोहे।
उसमें पूरबदिशि जिनमंदिर, सुरनरगण मन मोहे।।
जल फल आदिक अर्घ्य सजाकर, अर्चूं जिनगुण गाके।
नरसुर के सुख भोग अंत में, बसूँ मोक्षपुर जाके।।1।।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिभद्रशालवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु के भद्रशाल में, दक्षिणदिश जिनधाम।
शाश्वत जिनवर बिंब मनोहर, अतुल अमल अभिरामा।।जल फल.।।2।।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिभद्रशालवनस्थितदक्षिणदिक्जिनालयजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुतिय मेरु के भद्रशाल में, पश्चिम दिश जिनगेहा।
जिनप्रतिमा को सुरपति नरपति, वंदे भक्ति सनेहा।।
जल फल आदिक अर्घ्य सजाकर, अर्चूं जिनगुण गाके।
नरसुर के सुख भोग अंत में, बसूँ मोक्षपुर जाके।।3।।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिभद्रशालवनस्थितपश्चिमदिक्जिनालयजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजय सुराचल भद्रशाल में, उत्तरदिश जिनधामा।
भवविजयी की प्रतिमा उनमें, जजत लहें शिवधामा।।जल फल.।।4।।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिभद्रशालवनस्थितउत्तरदिक्जिनालयजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चाल छंद-नन्दीश्वर पूजा

श्री विजय मेरुवरशैल, जजतें अघ नाशें।
नंदनवन पूरब जैन, मंदिर अति भासे।।
यतिगण जिन ध्यान लगाय, आतम शुद्ध करें।
मैं जजूँ सर्व जिनबिंब, कर्म कलंक हरें।।5।।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिनंदनवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस मेरू दक्षिण माहिं, नंदन वन प्यारा।
जिनभवन अनूपम ताहिं, सब जग में न्यारा।।यतिगण.।।6।।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिनंदनवनस्थितदक्षिणदिक्जिनालयजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदनवन पश्चिम माँहिं, जिन मंदिर भावे।
इस ही मेरू पर इंद्र, परिकर सह आवें।।यतिगण.।।7।।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिनंदनवनस्थितपश्चिमदिक्जिनालयजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर दिश नंदन रम्य, जिनवर आलय है।
इस विजय मेरु के मध्य, धर्म सुधालय है।।यतिगण.।।8।।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिनंदनवनस्थितउत्तरदिक्जिनालयजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-कुसुमलता छंद-

विजयमेरु नंदनवन ऊपर, वन सौमनस कहा सुखकार।
अकृत्रिम जिनभवन पूर्वदिश, सुर किन्नर मन हरत अपार।।
मैं पूजूँ जिनबिंब मनोहर, मन वच तन कर अर्घ्य चढ़ाय।
रोग शोक भय आधि उपाधी, सब भव व्याधी शीघ्र पलाय।।9।।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु सौमनस वनी के, दक्षिण दिश जिन भवन विशाल।
गर्भालय में मणिमय प्रतिमा, भविजन पूजन करत त्रिकाल।।मैं पूजूँ.।।10।।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितदक्षिणदिक्जिनालयजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम दिश सौमनस वनी में, जिनवर सदन मदन मद हार।
मृत्युंजय[1] की प्रतिमा उनमें, मुनिगण वंदत मुद मनधार।।मैं पूजूँ.।।11।।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितपश्चिमदिक्जिनालयजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु सौमनस रम्यवन, उसमें उत्तर दिश मंझार।
श्रीजिनमंदिर में जिनप्रतिमा, नितप्रति वंदूं बारम्बार।।मैं पूजूँ.।।12।।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितउत्तरदिक्जिनालयजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-चौपाई छंद-

विजयमेरु पांडुकवन जानो, पूरब दिश जिनभवन बखानो।
सुरपति खगपति नित्य जजें हैं, हम भी अर्घ्य चढ़ाय भजे हैं।।13।।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिपाण्डुकानस्थितपूर्वदिक्जिनालयजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस पांडुकवन दक्षिण जानो, शाश्वत श्री जिनभवन महानो।
सुरललना जिनवर गुण गावें, हम भी पूजें जिनपद ध्यावें।।14।।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिपांडुकानस्थितदक्षिणदिक्जिनालयजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. आयुकर्म से रहित जिनेश्वर।

इस वन में पश्चिम दिश माहीं, जिनगृह सम उत्तम कुछ नाहीं।
किन्नरियाँ वीणा स्वर साजें, हम भी पूजें सब अघ भाजें।।15।।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिपांडुकानस्थितपश्चिमदिक्जिनालयजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु पांडुकवन साहे, जिनवर भवन सबन मन मोहें।
देव देवियाँ जिनपद पूजें, हम भी यहाँ तुम्हें नित पूजें।।16।।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसम्बन्धिपांडुकानस्थितउत्तरदिक्जिनालयजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य-दोहा

सोलह जिनवर भवन हैं, विजयमेरु के नित्य।
अर्चूं पूरण अर्घ्य ले, पूर्ण सौख्य हो नित्य।।1।।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसंबंधिषोडशजिनालयेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनगृह के जिनबिंब को, नमूँ भक्ति मन लाय।
सत्रह सौ अठबीस हैं, पूजूँ अर्घ चढ़ाय।।2।।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसंबंधिषोडशजिनालयमध्यविराजमानएकसहस्रसप्तशताष्टाविंशति-जिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु पांडुकवन विदिक्, पांडुकशिलादि चार।
नमूँ नमूँ जिनवर न्हवन, पूत शिला सुखकार।।3।।

ॐ ह्रीं विजयमेरुसंबंधिपांडुकवनविदिक्पांडुकादिशिलाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

-शंभु छंद-

यह विजयमेरु चौरासि सहस, योजन उत्तुंग कहाता है।
वन भद्रसाल से पंचशतक, योजन पर नंदन आता है।।

योजन साढ़े पचपन हजार, ऊपर सौमनस सुहाता है।
योजन अट्ठाइस सहस जाय, पांडुकवन सबको भाता है।।1।।

-दोहा-

इसमें सोलह जिनभवन, त्रिभुवनतिलक महान।
उनमें जिनप्रतिमा विमल, नमूँ नमूँ गुण खान।।2।।

चाल-हे दीनबंधु.....

देवाधिदेव श्री जिनेन्द्रदेव हो तुम्हीं।
अनादि औ अनंत स्वयंसिद्ध हो तुम्हीं।।
हे नाथ! तुम्हें पाय मैं महान हो गया।
सम्यक्त्व निधि पाय, मैं धनवान हो गया।।3।।

रस गंध फरस रूप से मैं शून्य ही कहा।
इस मोह से ही मेरा संबंध ना रहा।।हे नाथ.।।4।।

ये द्रव्यकर्म आत्मा से बद्ध नहीं है।
ये भावकर्म तो मुझे छूते भी नहीं हैं।।हे नाथ.।।5।।

मैं एकला हूं शुद्ध, ज्ञान दरश स्वरूपी।
चैतन्य चमत्कार, ज्योति पुंज अरूपी।।हे नाथ.।।6।।

मैं नित्य हूँ, अखंड हूँ, आनंद धाम हूँ।
शुद्धात्म हूँ, परमात्म हूँ, त्रिभुवन ललाम हूँ।।हे नाथ.।।7।।

मैं पूर्ण विमल ज्ञान, दर्श वीर्य स्वभावी।
निज आत्मा से जन्य, परम सौख्य प्रभावी।।हे नाथ.।।8।।

परमार्थ नय से मैं तो सदा शुद्ध कहाता।
ये भावना ही एक सर्वसिद्धि प्रदाता।।हे नाथ.।।9।।

व्यवहारनय से यद्यपी, अशुद्ध हो रहा।
संसार पारावार में ही, डूबता रहा।।हे नाथ.।।10।।

फिर भी तो मुझे आज मिले आप खिवैया।
निज हाथ का अवलम्ब दे, भव पार करैया।।हे नाथ.।।11।।

मैं आश यही लेके नाथ पास में आया।
अब वेग हरो जन्म व्याधि, खूब सताया।।हे नाथ.।।12।।

हे दीन बंधू शीघ्र ही निज पास लीजिये।
भव सिंधु से निकाल, मुक्तिवास दीजिये।।हे नाथ.।।13।।

-घत्ता छंद-

जय जय सुखकंदा, अमल अखंडा, त्रिभुवन कंदा तुमहि नमूँ।
जय 'ज्ञानमतिय' मम, शिवतिय अनुपम, तुरत मिलावो नित प्रणमूँ।।14।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपस्थविजयमेरुसंबंधिषोडशजिनालयसर्वजिनबिंबेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.14)

विजयमेरु संबंधी षट्कुलाचल जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–गीता छंद–

श्री विजयमेरु दक्षिणोत्तर, षट् कुलाचल जानिये।
तिन पूर्व दिश में षट् जिनालय, जैनप्रतिमा मानिये।।
सम्यक्त्व निर्मल हेतु मैं, प्रभु आपको थापूँ यहाँ।
हे नाथ! भक्तों पर कृपा, करके तुरत आवो यहाँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–अडिल्ल छंद–

सुरगंगा को उज्ज्वल नीर भराइये।
आप पूज जन्मादिक ताप मिटाइये।।
षट् कुलपर्वत के जिनगृह जिनबिंब को।
रत्नत्रय निधि हेतु जजों जगवंद्य को।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट गंध वर गंध सुगंधित लाइये।
आप पूज शोकादिक ताप मिटाइये।।षट्.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अमल अखंडित सुरभित तंदुल लाइये।
पाप पुंज क्षय हेतू, पुंज चढ़ाइये।।
षट् कुलपर्वत के जिनगृह जिनबिंब को।
रत्नत्रय निधि हेतु जजों जगवंद्य को।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

वकुल केतकी कमल पुष्प बहु लाइये।
भवहर जिनपद पूज, कामशर दाहिये।।षट्.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मालपुआ सोहाल गिंदोड़ा लाइये।
आप चरण को पूज, स्वात्मसुख पाइये।।षट्.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णदीप तम हारि वर्तिका ज्वालिये।
मोहध्वांत नश जाय दीप अवतारिये।।षट्.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सित चंदन मिल धूप, हुताशन में जले।
आप निकट ही दुष्ट, कर्म शत्रू जलें।।षट्.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम बिजौरा श्रीफल पिस्ता थाल में।
फल तुम चरण चढ़ाकर नाऊँ भाल मैं।।षट्.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत सुम चरु दीपक सजे।
धूप फलों में रत्न मिला तुम पद जजें।।
षट् कुलपर्वत के जिनगृह जिनबिंब को।
रत्नत्रय निधि हेतु जजों जगवंद्य को।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

पद्म सरोवर नीर कंचन झारी में भरूँ।
जिनपद धारा देय, भव वारिधि से उत्तरूं।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुवरण पुष्प मंगाय, प्रभु चरणन अर्पण करूँ।
वर्ण गंध रस फास, विरहित निजपद को वरूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

द्वीप धातकी पूर्व में, षट् कुलगिरि जिनधाम।
पूजन हेतू मैं करूं, पुष्पांजलि इत ठाम।।1।।

इति श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छंद–

द्वीपधातकी में 'हिमवन गिरि' कांचन कांती धारे।
बीच सरोवर पद्म तास में, कमल मणीमय सारे।।
मध्य कमल पर 'श्रीदेवी' हैं, नग पर कूट सुग्यारे।
पूर्व दिशागत सिद्धकूट पर, जिनपद पूजों सारे।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधि-हिमवत्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु दक्षिण 'महहिमवन' रजत वर्ण तामें हैं।
महापद्मद्रह मध्य कमल में, 'ह्रीदेवी' यामें हैं।।

नग पर आठ कूट में इक पर, चैत्यालय सुखकारी।
अर्घ्य चढ़ाकर जिनपद पूजें, गुण गावे नर नारी ।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधि-महाहिमवत्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु दक्षिण 'निषधाचल', तप्त स्वर्ण छवि मोहे।
द्रह तिगिञ्छ तामध्य कमल में, 'धृतिदेवी' अति सोहे।।
गिरि पर हैं नवकूट एक के, सिद्धकूट मंदिर में।
मृत्युजयी श्री जिनप्रतिमा को, पूजत ही सुख क्षण में।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधि-निषधकुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु उत्तर 'नीलाचल', छवि वैडूर्यमणी है।
बीच केसरी द्रह कमलों में, मध्य 'कीर्तिदेवी' है।।
नवकूटों में सिद्धकूट पर, जिनगृह में जिनप्रतिमा।
अर्घ्य चढ़ाकर जजूँ निरन्तर, भवविजयी जिनप्रतिमा।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधि-नीलकुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु उत्तर 'रुक्मीगिरि', रजतवर्ण छवि छाजे।
पुण्डरीक द्रह मध्य कमल में, 'बुद्धीदेवी' राजे।।
कूट आठ में सिद्धकूट पर जिनमंदिर मन भावे।
कामजयी जिनप्रतिमा पूजे, इन्द्र देवगण आवें।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधि-रुक्मिकुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु के उत्तर 'शिखरी', पर्वत कांचन छवि है।
महापुण्डरीकहिं ह्रद कमलों, में 'लक्ष्मी' निवसत हैं।।
ग्यारह कूट उन्हों में इक पर, जिनवरनिलय बखानो।
अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति भाव से, पूजूँ मैं दुःख हानो।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधि-शिखरिपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-

षट् कुलगिरि के जिनभवन, रत्नमयी जिनबिंब।
पूर्ण अर्घ्य ले पूजिये, हरो करम अरिदंभ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिन-बिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य-*ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबभ्यो नमः।

जयमाला

-त्रिभंगी छंद-

षट्कुलगिरि मनहर, सबमें सरवर, सरवर में बहु कमल खिले।
कमलनि में सुरगृह, उनमें जिनगृह, पूजत ही मन कमल खिले।।
जय जय जिनप्रतिमा, अंतक हरना, पाप पुंज अंधेर टले।
पाई मैं साता, मेटि असाता, हुआ पुण्य बहु ढेर भले।।1।।

-नाराच छंद-

नमो नमो जिनेश तो पदारविंद भक्ति तें।
मुनीन्द्रवृन्द तोहि ध्याय कर्म कालिमा हने।।
अनाथनाथ! भक्त की सदा सहाय कीजिये।
प्रभो मुझे भवाब्धि तें अबे निकाल लीजिये।।2।।

अनंत ज्ञान दर्श वीर्य सौख्य से सनाथ हो।
अनादि हो अनंत हो प्रसिद्धि सिद्धि नाथ हो।।अनाथ.।।3।।

अनादि मोह वृक्ष के लिये तुम्हीं कुठार हो।
प्रधान राग द्वेष शत्रु के लिये प्रहार हो।।अनाथ.।।4।।

महान रोग शोक कष्ट को महौषधी तुम्हीं।
अनिष्ट योग इष्ट का वियोग दुख हरो तुम्हीं।।अनाथ.।।5।।

तुम्हीं अनेक व्याधि हेतु सर्व श्रेष्ठ वैद्य हो।
तुम्हीं विषापहार मन्त्र हो मणी विशेष हो।।
अनाथनाथ! भक्त की सदा सहाय कीजिये।
प्रभो मुझे भवाब्धि तें अबे निकाल लीजिये।।6।।

महान तेज पुंज हो अनंत सौख्य धाम हो।
असंख्य जीव सौख्य हेतु एक ही प्रधान हो।।अनाथ.।।7।।

हुआ जु कष्ट भक्त पे तबे सहाय तूँ करी।
प्रभो! अबेर क्यों अबे, बताइये इसी घरी।।अनाथ.।।8।।

मुनीश मानतुंग ने जिनेश! भक्ति तें किया।
तुम्हीं तो नाथ! यतिपती कि काट दीनि बेड़ियाँ।।अनाथ.।।9।।

तुम्हें हि ध्याय अग्नि कुण्ड में गिरी थी जानकी।
हुआ अपार नीर औ खिले सरोज भी तभी।।अनाथ.।।10।।

तुम्हें सुध्याय लाख गेह माहिं पांडवा सभी।
सुरंग मार्ग से बचे न अग्नि भी जला सकी।।अनाथ.।।11।।

मनोवती जु आप ध्याय आप दर्श पा लिया।
तुम्हें ही ध्याय द्रौपदी ने शील रत्न राखिया।।अनाथ.।।12।।

मनोरमा ने आप ध्याय वज्र द्वार खोलिया।
तुम्हें हि ध्याय अंजना ने सर्व कष्ट धो लिया।।अनाथ.।।13।।

गिनाऊँ मैं कहाँ तके अनन्त जीव राशि को।
सु आपके प्रताप वे तिरे भवाम्बु राशि को।।अनाथ.।।14।।

अनंत तीर्थ आप पाद के तले कहें मुनी।
इसी निमित्त आप की सहाय चाहते मुनी।।अनाथ.।।15।।

सुज्ञानमती मो करो निजैक संपदा भरो।
अनंत दुःख सिंधु से निकाल मुक्ति में धरो।। अनाथ.।।16।।

–घत्ता–

अकृत्रिम जिननाथ तनी यह वर जयमाला।
मन वच काय लगाय पढ़ें जो भव्य त्रिकाला।।
ऋद्धि सिद्धि भरपूर रहे तावे घर माहीं।
'ज्ञानमती' वर बुद्धि भरें नव निद्धि सदा ही।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.15)

विजयमेरु संबंधी चार गजदंत जिनालय पूजा

–दोहा–

विजयमेरु विदिशा विषै, कहें चार गजदंत।
तिनमें चारों जिननिलय, कहे अनादि अनंत।।1।।
तिनके श्री जिनबिंब जे, सर्व द्वंद्व हरतार।
मैं विधिवत पूजन करूँ, त्रिजगवंद्य भरतार।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह!अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–चामरछन्द–

(चाल–पार्श्वनाथ देव सेव.....)

दुग्धसिंधु के समान, स्वच्छ नीर लाइये।
पूजते जिनेन्द्रपाद, दाह को मिटाइये।।
चार गजदंत के, जिनेन्द्र सद्म मैं जजूँ।
सर्व ऋद्धि सिद्धिदायि, जैनबिंब मैं जजूँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंकुमादि गंध से जिनेन्द्र पाद पूजिये।
सर्व मोहताप नाश, शान्त चित्त हूजिये।।चार.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सोमरश्मि के समान, अक्षतों को लाइये।
अक्षयी अनंददायि, पुंज को चढ़ाइये।।
चार गजदंत के, जिनेन्द्र सद्म मैं जजूँ।
सर्व ऋद्धि सिद्धिदायि, जैनबिंब मैं जजूँ।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पारिजात मालती, गुलाब पुष्प लाइये।
मार मल्लहारि देव, पूज सौख्य पाइये।।चार.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

व्यंजनादि ओदनादि सर्पि से मिलाइये।
आप पूजते क्षुधादि रोग को मिटाइये।।चार.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णदीप में कपूर, ज्योति को जलाइये।
आरती करेय मोह, ध्वांत को भगाइये।। चार.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप ले दशांग अग्नि, संग में जराइये।
अष्ट कर्म भस्म धूम, शीघ्र ही उड़ाइये।।चार.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सेव आम्र निंबुकादि, थाल में भराइये।
आप चर्ण को चढ़ाय, सर्व सौख्य पाइये।।चार.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अंबु गंध अक्षतादि, दिव्य अर्घ्य लीजिये।
चर्ण में चढ़ाय के, अनर्घ्य राज्य कीजिये।।
चार गजदंत के, जिनेन्द्र सद्म मैं जजूँ।
सर्व ऋद्धि सिद्धिदायि, जैनबिंब मैं जजूँ।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल ले भृंग में।
श्रीजिन चरण सरोज, धारा देते भव मिटे।।10।।शांतये शांतिधारा।

सुरतरु के सुम लेय, प्रभुपद में अर्पण करूँ।
कामदेव मदनाश, पाऊं आनंद धाम मैं।।11।।दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

विजयमेरु चारों विदिश, चार कहे गजदंत।
तिनके जिनमंदिर जजूँ पुष्पांजली करंत।।1।।

इति श्रीविजयमेरुसंबंधिगजदंतस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छंद–

विजयमेरु आग्नेय कोण में, 'सौमनस्य' गजदंता।
रौप्यमयी वह सातकूट में, सिद्धकूट अघहंता।।
जिनमंदिर में श्रीजिनप्रतिमा, भानु समान विभासें।
अर्घ लेय मैं जजूँ मुदित मन, ज्ञान भानु परकासे।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिसौमनसगजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु नैऋत्य कोण में, 'विद्युतप्रभ' गजदंता।
तप्तकनक छवि नवकूटों में, सिद्धकूट चमकंता।।जिन.2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिविद्युत्प्रभगजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु वायव्य कोण में 'गंधमादनी' सोहे।
कांचन समद्युति सात कूट युत, सिद्धकूट मन मोहे।।
जिनमंदिर में श्रीजिनप्रतिमा, भानु समान विभासें।
अर्घ लेय मैं जजूँ मुदित मन, ज्ञान भानु परकासे।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिगंधमादनगजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु ईशान कोण में, 'माल्यवान' गजदंता।
नवकूटों युत सिद्धकूट धर, नीलम छवि छलकंता।।जिन.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिमाल्यवानगजदंतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–नरेन्द्र छंद–

दुतियमेरु के चारों विदिशा, गजदंतनि जिनधामा।
इन्द्र चक्रि धरणीन्द्र मुनीन्द्रा, वंदत हैं शिवकामा।।जिन.।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिविदिशायां चतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वत जिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

–सोरठा–

गजदंताचल चार, तिनके श्रीजिनभवन में।
जिनवर बिंब महान, तिनकी गुणमाला कहूँ।।1।।

–पद्धड़ी छन्द–

हे नाथ आप त्रैलोक्य वंद्य, त्रिभुवन के स्वामी इन्द्रवंद्य।
तुम ज्योतिरूप मंगल स्वरूप, तुम निर्विकार परमात्म रूप।।2।।
भविजनमन कुमुद विकास चन्द्र, हे नाथ तुम्हीं भुवनैकचन्द्र।
मुनिगण हृदयाम्बुज सूर्यनाथ, शिवरमणी को कीयो सनाथ।।3।।

तुम दरस ज्ञान सुख वीर्यवान, तुम अतुल अमल अनुपम निधान।
तुम हो अनंत गुण पुंज ईश, गणधर गुणधर तुम नाय शीश।।।4।।
तुम गुणरत्नाकर देवदेव, तुम करुणा सागर देवदेव।
तुम जन्म मृत्यु अरि जीत लीन, सब रोग शोक बाधा विहीन।।5।।
सब क्षुधा तृषादिक दुःख खान, तुम कर्म शत्रु जीते महान।
तुम मूर्ति रहित भी मूर्तिमान, तुम देहरहित भी कांतिमान।।6।।
तुम शुद्ध बुद्ध ज्ञायक अखंड, भवसिंधु भव्य तारन तरंड।
तुम अविचल आनंद कंद धाम, मेरी भव बाधा हरो आन।।7।।
तुम बिंब अचेतन रत्नसार, फिर भी वांछित फल दे अपार।
उपदेश नहीं देवे कदापि, शिवमार्ग प्रकट करती तथापि।।8।।
ये आदि अन्त से शून्य जान, भविजन को शिव सुख हेतु भानु।
सब वीतराग छविमान बिंब, सब सौम्य मूर्ति द्युतिमान बिंब।।9।।
जिनप्रतिमा वंदों बारबार, सब सिद्धों को नित नमस्कार।
हे नाथ! हरो मेरे कलेश, मुझ को निजपद देवो महेश।।10।।

–घत्ता–

जय गजदंताचल, जिनगृह निरमल, जय जय हे त्रैलोक्यपती।
जय मंगलकारी, कर्मविदारी, जय तुम ध्यावें 'ज्ञानमती'।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरोः गजदन्ताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.16)

विजयमेरु संबंधि धातकी शाल्मलिवृक्ष जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–नरेन्द्र छंद–

विजयमेरु के उत्तरकुरु में, वृक्ष धातकी सोहे।
इसी मेरु के देवकुरू में, शाल्मलि तहँ मन मोहे।।
इनकी एक एक शाखा पर, जिनमंदिर सुखकारी।
इन दो मंदिर की जिनप्रतिमा, पूजो अघतमहारी।।1।।

–दोहा–

तरु के सब जिनराज की, आह्वानन विधि ठान।
आवो आवो नाथ! अब, करो सकल दुःख हान।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षसंबंधीद्वयजिनालयस्थ सर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षसंबंधीद्वयजिनालयस्थ-सर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षसंबंधीद्वयजिनालयस्थ-सर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–नाराच छंद–

हिमाद्रि गंगनीर लाय, स्वर्ण भृंग में भरूँ।
जिनेश पादपद्म धार, देत ही तृषा हरूँ।।
तरु तने जिनेन्द्र को, सुरेन्द्र पूजते वहाँ।
महान भक्ति भाव धार, मैं जजूँ उन्हें यहाँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सुगंध अष्टगंध लेय, हर्ष भाव ठानिये।
जिनेश पादपद्म चर्च, मोह ताप हानिये।।

तरू तने जिनेन्द्र को सुरेन्द्र पूजते वहां।
महान भक्ति भाव धार मैं जजूं उन्हें यहाँ।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

कमोद जीरिका अखंड, शालि धान्य लाइये।
सुपुंज आप पास दे, अखंड सौख्य पाइये।।तरू तने.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

गुलाब कुन्द पारिजात पुष्प अंजली लिये।
जिनेश पाद पूज कामदेव को हनीजिये।।तरू तने.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सुमिष्ट फेनि लाडु व्यंजनादि भांति भांति के।
जिनेशपाद पूजते, भगे क्षुधा पिशाचि के।।तरू तने.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अखंड ज्योतिवान दीप स्वर्ण पात्र में जले।
जिनेन्द्र पाद पूजते हि, मोहध्वांत भी टले।।तरू तने.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशांग धूप लेय अग्नि पात्र में सुखेइये।
जिनेश सन्निधी तुरंत कर्म भस्म देखिये।।तरू तने.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

इलायची लवंग दाख औ बदाम लाइये।
जिनेश को चढ़ाय मुक्तिवल्लभा को पाइये।।

तरू तने जिनेन्द्र को सुरेन्द्र पूजते वहां।
महान भक्ति भाव धार मैं जजूं उन्हें यहाँ।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलादि अष्ट द्रव्य लेय अर्घ्य को बनाइये।
अनर्घ्य सौख्य हेतु नित्य नाथ को चढ़ाइये।।तरू तने.।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

यमुना सरिता नीर कंचन झारी में भरा।
जिनपद धार देय, शांति करो सब लोक में।।10।।शांतये शांतिधारा।

वकुल कमल अरविंद, सुरभित फूलों को चुने।
जिनपद पंकज अर्प्य, यश सौरभ चहुंदिश भ्रमे।।11।दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

वृक्ष धातकी शाल्मली,पूर्वधातकी माहिं।
उनके जिनगृह नित जजूँ, पुष्पांजली चढ़ाहिं।।1।।

इति विजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छन्द–

विजयमेरु ईशान कोण में, वृक्ष आंवले जैसा।
तरु की उत्तर गत शाखा पर, जिनगृह अनुपम वैसा।।
यतिपति वंदित जिनवर प्रतिमा, कलिमल नाश करे हैं।
पूजन करते भविजन मिलकर, यम का पाश हरे हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु नैऋत्य कोण में, शाल्मली द्रुम भारी।
इसकी दक्षिणगत शाखा पे, जिन मंदिर भवहारी।।

गणधर भी नित ध्याते रहते, मन में उन प्रतिमा को।
जनम जनम अघ नाशन हेतू, हम भी पूजे उनको।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

*पूर्णार्घ्य दोहा–***पूर्वधातकी खंड में धातकी शाल्मलि वृक्ष।**
इनके श्री जिनभवन को, पूजूँ कर मन स्वच्छ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

–नरेन्द्र छंद–

विजयमेरु ईशानदिशा में वृक्ष धातकी सोहे।
नैऋत दिश में वृक्ष शाल्मलि सुरगण का मन मोहे।।
इक इक के परिवार तरू दो, लाख सहस अस्सी हैं।
दो सौ अड़तिस इतने सबमें, प्रतिमा शाश्वतकी हैं।।1।।

–नाराच छंद–

जिनेश बिंब एक सौ सुआठ सर्व वृक्ष में।
प्रमुख्यता धरे महान एक ही तरु इमें।।
नमो नमो जिनेश तोहि धर्म के स्वरूप हो।
कलंक पंक क्षालने सदा सुतीर्थ रूप हो।।2।।

अनादि हो अनन्त हो प्रसिद्ध सिद्ध रूप हो।
दयाल धर्मपाल तीन काल एक रूप हो।।
नमो नमो जिनेश तोहि धर्म के स्वरूप हो।
कलंक पंक क्षालने सदा सुतीर्थ रूप हो।।3।।

अलोक लोक में प्रधान तीन लोक नाथ हो।
अनेक रिद्धि के धनी सुभक्ति के सनाथ हो।।

नमो नमो जिनेश तोहि धर्म के स्वरूप हो।
कलंक पंक क्षालने सदा सुतीर्थ रूप हो।।4।।

महान दीप्तिमान मोहशत्रु को कृपान हो।
प्रसन्न सौम्य आस्य[1] हो पवित्र हो पुमान हो ।।
नमो नमो जिनेश तोहि धर्म के स्वरूप हो।
कलंक पंक क्षालने सदा सुतीर्थ रूप हो।।5।।

दिनेश[2] तें विशेष तेज की महान राशि हो।
कुमोदनी भवीक हेतु वें सुधानिवास[3] हो।।
नमो नमो जिनेश तोहि धर्म के स्वरूप हो।
कलंक पंक क्षालने सदा सुतीर्थ रूप हो।।6।।

भवाब्धि डूबते तिन्हें तुम्हीं सुकर्णधार हो।
गुणौघ[4] रत्न के समुद्र सार में सु सार हो।।
नमो नमो जिनेश तोहि धर्म के स्वरूप हो।
कलंक पंक क्षालने सदा सुतीर्थ रूप हो।।7।।

दोहा– **तुम गुण गण मणि अगम हैं, को गण पावे पार।**
जो गुण लव कंठहिं धरे, सो उतरे भव पार।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।

।।इत्याशीर्वादः।।

1. मुख। 2. सूर्य। 3. चंद्र। 4.गुण समूह।

(पूजा नं.17)

विजयमेरु के सोलह वक्षार पर्वत जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–गीता छंद–

श्रीविजयमेरू पूर्व पश्चिम, पूर्व अपर-विदेह हैं।
इनमें कहे वक्षार सोलह, तास में जिनगेह हैं।।
उनमें सुरासुर वंद्य प्रतिमा, भविक कल्मष परिहरें।
थापूँ उन्हें इत आय तिष्ठो, भक्ति से पूजन करें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थितषोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थितषोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थितषोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–सखी छंद–

(चाल–सुनिये जिन अरज.....)

बहु युग से तृषा सतायो, इस हेतू जल ले आयो।
वक्षाराचल जिन प्रतिमा, पूजूँ उन अद्भुत महिमा।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मुझको भवताप तपायो, इस कारण गंध घिसायो।
वक्षारगिरी जिन पूजें, सब कर्म शत्रु दल धूजें।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मोतीसम तंदुल लाये, प्रभु आगे पुंज चढ़ाये।
वक्षार अचल जिनप्रतिमा, पूजूँ सिद्धन की उपमा।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सौगंधित सुमन[1] लिये हैं, जिनवर पद यजन किये हैं।
वक्षार नगन[2] जिन सोहें, पूजूँ मैं सब सुख हो हैं।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत मिश्रीयुत पकवाना, जिनपद पूजन अघ हाना।
वक्षार अचल जिनगेहा, पूजन से हो गतदेहा।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गोघृत दीपक में भरके, जिन पूजूँ आरति करके।
वक्षार गिरी जिन देवा, पूजत भ्रम तम हर लेवा।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दश गंध अगनि में डालें, सब क्रूर करम भी हालें।
वक्षार नगों पे प्रतिमा, पूजत होवे फल सुषमा।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता बादाम चिरोंजी, फल ले प्रभु पूज करो जी।
वक्षार अचल जिन मूर्ती, पूजत ही शिवफल पूर्ती।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंधादिक बहु लाये, सुवरण के थाल भराये।
वक्षार अचल जिनप्रतिमा, पूजत सुख होय अनुपमा।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. पुष्प। 2.पर्वत पर ।

–सोरठा–

सीतानदी सुनीर जिनपद पंकज धार दे।
वेग हरूँ भव पीर, शांतीधारा शांतिकर।।10।।

शांतये शांतिधारा।

बेला कमल गुलाब, चंप चमेली ले घने।
जिनवर पद अरविंद, पूजत ही सुखसंपदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

पूर्व धातकी खंड में, पूरब अपर विदेह।
सोलह गिरि वक्षार के, जिनगृह जजूँ सनेह।।1।।

इति श्रीविजयमेरुसंबंधिषोडशवक्षारस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

छन्द जोगीरासा–(चाल–इह विध राज करे नरनायक....)

पूर्व विदेह नदी सीता के, उत्तरतट वक्षारा।
भद्रसाल वेदी सन्निध में, 'चित्रकूट' सुखकारा।।
उस पर जिनमंदिर है सुन्दर, जजत पुरंदर देवा।
मैं भी जिनप्रतिमा को पूजूँ, होवे भव दुःख छेवा।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थचित्रकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रम से 'पद्मकूट' नामक है, गिरि वक्षार सुहाना।
मुनिगण उस पर ध्यान धरत हैं, पावत सौख्य महाना।।
उस पर जिनमंदिर है सुन्दर, जजत पुरंदर देवा।
मैं भी जिनप्रतिमा को पूजूँ, होवे भव दुःख छेवा।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थपद्मकूटवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिनकूट' वक्षार तीसरा, सब जन मन को प्यारा।
इस पर चार कूट उनमें से,सिद्धकूट अघ हारा।।

उस पर जिनमंदिर है सुन्दर, जजत पुरंदर देवा।
मैं भी जिनप्रतिमा को पूजूँ, होवे भव दुःख छेवा।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थनलिनकूटवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'एकशैल' वक्षार बगीचे बावड़ियों से सोहे।
देव देवियाँ खेचर खेचरनी किन्नर मन मोहे।।
उस पर जिनमंदिर है सुन्दर, जजत पुरंदर देवा।
मैं भी जिनप्रतिमा को पूजूँ, होवे भव दुःख छेवा।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थएकशैलवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–चौपाई–

सीता नदि के दक्षिण तास, देवारण्य वेदिका पास।
नाम 'त्रिकूट' कहा वक्षार, तापर जिनगृह पूजूँ सार।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थत्रिकूटवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है 'वैश्रवण' दुतिय वक्षार, तापर सिद्धकूट मनहार।
तामें जिनगृह में जिनबिंब, अर्घ्य चढ़ाय जजूँ तज डिंभ।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थवैश्रवणनामवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अंजन' है तीजा वक्षार, वन वेदी सुर महल अपार।
तापर जिनगृह में जिनराज, अर्घ्य चढ़ाय लहूँ शिवराज।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थअंजनवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अञ्जनात्मा' है वक्षार, तापर मुनिगण करत विहार।
इस पर जिनमंदिर अभिराम, जिनमूरति को करूँ प्रणाम।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थांजनात्मावक्षारपर्वतस्थितसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–जोगीरासा–

द्वीप धातकी अपरविदेहा, सीतोदा तट दायें।
भद्रसाल सन्निध वक्षारा, 'श्रद्धावान' कहाये।।
उस पर सिद्धकूट में जिनगृह, जिनप्रतिमा मनहारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाकर मैं नित, रोग शोक भयहारी।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थश्रद्धावानवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'विजटावान' दुतिय वक्षारा, सुर किन्नर चितहारी।
ऋषिगण विचरण करते रहते, परमानंद विहारी।।
उस पर सिद्धकूट में जिनगृह, जिनप्रतिमा मनहारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाकर मैं नित, रोग शोक भयहारी।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थविजटावानवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आशीविष' वक्षार तीसरा, तापर उपवन वेदी।
सुर गण के प्रासाद मनोहर, मुधर पवन श्रमछेदी।।
उस पर सिद्धकूट में जिनगृह, जिनप्रतिमा मनहारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाकर मैं नित, रोग शोक भयहारी।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थआशीविषवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ वक्षार'सुखावह' चौथा, अतिरमणीय सुहाता।
चार कूट हैं मन को भाते, त्रय सुरगृह सुखदाता।।
उस पर सिद्धकूट में जिनगृह, जिनप्रतिमा मनहारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाकर मैं नित, रोग शोक भयहारी।।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुखावहवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–चौपाई–

द्वीप धातकी अपर विदेह, सीतोदा उत्तर तट येह।
देवारण्य निकट वक्षार, 'चंद्रमाल' पर जिनगृह सार।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थचंद्रमालवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सूर्यमाल' दूजा वक्षार, तापर जिनवर गृह सुखकार।
तामें सुरनर नत जिनबिंब, मैं पूजूँ सिद्धन प्रतिबिंब।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसूर्यमालवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नागमाल' तीजा वक्षार, सुर खग मुनिगण करत विहार।
भवविजयी श्री जिनवर धाम, पूजन करूँ लहूँ शिवधाम।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थनागमालवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'देवमाल' चौथा वक्षार, दर्शनीय उत्तम गिरि सार।
तापर मदनजयी जिनगेह, जिनप्रतिमा को जजूँ सनेह।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थदेवमालवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–विष्णुपद छंद–

दीप धातकी में हैं सोलह, पर्वत वक्षारा।
स्वर्णमयी सब चार कूट, युत अनुपम भंडारा।।
तीन कूट पर देव देवियाँ, रहते सुख पाते।
नदी निकट कूटों पर जिनगृह, यजते अघ जाते ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः ।**

जयमाला

–दोहा–

विजयमेरु पूरब अपर, सोलह गिरि वक्षार।
जयमाला जिनगेह की, पढ़ूँ हरष उर धार।।1।।

रोला छंद–

जय जय गिरि वक्षार, क्षेत्र विदेहनि माहीं।
सब सुवरण द्युतिमान, चउ चउ कूट कहाहीं।।
जय जय श्री सिद्धकूट, सब पे शोभ रहे हैं।
तामें श्री जिनेगह, अनुपम दीप रहे हैं।।2।।
जय जय शाश्वत बिंब, इक सौ आठ सभी में।
जय जय वे उत्तुंग, कर[1] दो सहस सभी में।।
सुर युगलों की मूर्ति, चौंसठ हैं जिनपासी।
चंवर लिये कर माहिं, मानों चंवर ढुरासी।।3।।
तीन छत्र शोभंत, भामंडल छवि भारी।
खर नर नारी आय, जिन पूजें सुखकारी।।
घंटा की ध्वनि होत, घन घन घन प्रिय लागे।
बहु फूलन की माल, लटकें दिश महका के।।4।।
भृंग कलश आदर्श[2], चमर ध्वजा व्यजना[3] है।
छत्र तथा सुप्रतिष्ठ[4], मंगल द्रव्य गिना है।।
मंगल द्रव्य सुआठ, मंगलकारी मानो।
प्रत्येक इक सौ आठ, इक इक प्रभु को जानो।।5।।
श्रीदेवी श्रुतदेवि, ये तो रत्नमयी हैं।
वर सर्वाण्ह सुयक्ष, सनत्कुमार सही हैं।।
ये चारों इक एक, मूर्ती पासे तिष्ठें।
शाश्वत रचना येह, उस श्रद्धा धर नीके।।6।।
जिनमंदिर के माहिं, सुवरण की मालायें।
झारी दर्पण चक्र, चामर आदि बतायें।।

1. दो हजार हाथ। 2. दर्पण। 3. पंखा। 4.ठोना।

मुख्य द्वार द्वय भाग, रत्नन की मालायें।
चार हजार प्रमाण, जिन आगम यह गायें।।7।।
इनके बीच अनादि, सुवरण की मालायें।
बारह सहस प्रमाण, श्री यतिवृषभ[1] बतायें।।
रत्न खचित बत्तीस, सहस सु पूरण कलशे।
चौबिस सहस प्रमाण, धूप सुघट सुवरण से।।8।।
लघु द्वय द्वारे माहिं रत्नन सुवरण माला।
धूप घटों में धूप, खेते सुरगण आला।।
इत्यादिक रमणीय, रचना बहुत कही है।
जिनपद पूजें इन्द्र, चक्री आदि सही है।।9।।
हम भी जिनपद पूज, अतिशय पुण्य कमावें।
जन्म-जन्म के पाप, इक क्षण माहिं गमावें।।
सुरपद वांछा नाहिं, नहिं कुछ फल की वांछा।
निज पद दीजे मोहि, एक यही मुझ याञ्चा।।10।।

–घता–

जय जय जिनदेवा, करमन छेवा, पढ़े सुने तुम जयमाला।
सो ज्ञानमती धर, हो शिवतिय वर, सुख पावे शाश्वत काला।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

1. तिलोयपण्णत्ति ग्रन्थकर्त्ता श्री यतिवृषभाचार्य।

(पूजा नं.18)

विजयमेरु संबंधी चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–जोगीरासा छंद–

विजयमेरु के पूर्व अपर में, बत्तिस क्षेत्र विदेहा।
तिनके मध्य रजतगिरि सोहें, तिनपे श्रीजिनगेहा।।
भरतैरावत में जिनगृहयुत, रजत गिरी सरधाना।
चौंतिस रजताचल जिनप्रतिमा, मैं थापूँ इह थाना।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–चाल-नंदीश्वर पूजा–

गंगा जल शीतल स्वच्छ कंचन भृंग भरों।
जिनवर पद सरसिज पूज, तृष्णा दाह हरों।।
चौंतिस रजताचल माहिं, जिनगृह मनहारी।
सब रिद्धि सिद्धि सुख देत, पूजों अघ हारी।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

वर अष्ट गंध घिस लाय, सुरभित भृंग नचें।
मम मोह ताप हर हेतु जिनवर पद चरचें।।चौंतिस.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अति उत्तम उज्ज्वल शालि, तंदुल थाल भरे।
अक्षय अनुपम सुख हेतु, प्रभु ढिग पुंज करें।।

चौंतिस रजताचल माहिं, जिनगृह मनहारी।
सब रिद्धि सिद्धि सुख देत, पूजों अघ हारी।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मचकुंद कदंब गुलाब, नाना वर्ण धरें।
पूजत ही जिनपद पद्म, काम कलंक हरें।।चौंतिस.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

खाजे ताजे पकवान, मालपुआ लाये।
जिनपद कमलों को पूज, रोगक्षुधा जाये।।चौंतिस.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत दीप कपूर जलाय जगमग ज्योति जले।
अज्ञान महातम नाथ, तुम पद पूज टले।।चौंतिस.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

वरधूप हुताशन संग जलते धूम करे।
जिनवर पद सन्निध पाय, बहुविध कर्म जरें।।चौंतिस.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता किसमिस अंगूर, आम अनार लिये।
जिनपद पूजत ही नित्य, अनुपम सुफल किये।।चौंतिस.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फल वसु द्रव्य सजाय, रत्न मिलाय लिया।
जिनवर पद पूजत आय, सौख्य अनर्घ्य लिया।।

चौंतिस रजताचल माहिं, जिनगृह मनहारी।
सब रिद्धि सिद्धि सुख देत, पूजों अघ हारी।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

गंगनदी को नीर, तुम पद धारा मैं करूँ।
जिनपद धारा देत, शांति करो सब लोक में।।10।।

शांतये शांतिधारा।

वकुल कमल अरविंद, सुरभित फूलों को चुने।
जिनपद पंकज अर्प्य, यश सौरभ चहुंदिश भ्रमें।।11।।

परिपुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

–दोहा–

विजयमेरु के चार दिश, चौंतिस गिरि विजयार्ध।
उनके चौंतिस जिनभवन, पूजूँ नित्य कृतार्थ।।1।।

इति श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

चौबोल छंद (चाल–मेरी भावना)

'कच्छा' देश विदेह कहाता, उसके मधि रूपाद्रि रहे।
रक्ता रक्तोदा नदियों से, कच्छा के छहखंड कहे।।
आर्यखंड मधि 'क्षेमा' नगरी जिसमें तीर्थंकर रहते।
रजतगिरी[1] के जिनमंदिर को, अर्घ चढ़ाकर हम यजते।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थकच्छादेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुकच्छा' आर्य खंड में, 'क्षेमपुरी' है श्रेष्ठ मही।
तीर्थंकर चक्री आदिक से, जिनमंदिर से शोभ रही।।

1. विजयार्ध।।

देश मध्य के रजतगिरी पर, जिन चैत्यालय धर्म मही।
उसमें सब प्रतिमा को पूजूँ अर्घ्य चढ़ाकर भक्ति सही।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसुकच्छादेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महाकच्छा' में रूपाचल नवकूटों सहित कहा।
उसके सिद्धकूट में जिनगृह, प्रतिमा यजते पाप दहा।।
इस विदेह के आर्य खंड के, मध्य 'अरिष्टापुरी' महा।
नितप्रति केवलि श्रुतकेवलि मुनि, ऋषिगण विचरण करे वहाँ।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थमहाकच्छादेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'कच्छकावती' मध्य में, विजयारधगिरि रजत समा।
तीन कटनियों से खग नगरी, इक सौ दश से श्रेष्ठतमा।।
इस विदेह के आर्य खंड में, कही 'अरिष्टपुरी' सुखदा।
विजयारध के सिद्धकूट को, पूजत नहिं हो दुःख कदा।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थकच्छकावतीदेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश रम्य 'आवर्ता' उसमें, रजतगिरी अतिशय महिमा।
उसके सिद्धकूट पर जिनगृह, इक सौ आठ जैन प्रतिमा।।
आर्य खंड 'खड्गा' नगरी के, मुनिगण भी वहाँ दर्श करें।
हम भी अर्घ्य चढ़ाकर पूजें, गर्भवास के दुःख हरें।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थावर्तादेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'लांगलावर्ता' उसमें, रजताचल शुभ राज रहा।
इस पर सिद्धकूट मंदिर है, सुर असुरों से पूज्य कहा।।
आर्यखंड 'मंजूषा' नगरी, ताके नर नारी रुचि से।
अकृत्रिम जिनप्रतिमा पूजें, जिनवर गुण गाते मुद से।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थलांगलावर्तादेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कला' में रूपाचल, उस पर शुभ नव कूट कहे।
सिद्धकूट पर जिनमंदिर में, अनुपम प्रतिमा शुद्ध रहे।।
आर्यखंड 'औषधि' नगरी के, सब जग भक्ति सहित भजते।
हम सब अर्घ्य चढ़ाकर जिनपद, पूजा कर सब दुःख तजते।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थपुष्कलादेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कलावती' मध्य में, रजतगिरी जन मन हरती।
उसके सिद्धकूट जिनगृह की, सुर ललना कीर्तन करती।।
'पुंडरीकिणी' नगरी जन भी, विद्याबल से गमन करें।
हम भी यहीं अर्घ्य अर्पण कर, श्रद्धा से नित नमन करें।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थपुष्कलावतीदेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–जोगीरासा छन्द–

'वत्सादेश' विदेह कहाता, तामधि विजयारध है।
उसपे सिद्धकूट चैत्यालय, जिनवरबिंब अनघ[1] हैं।।
इस विदेह में पुरी 'सुसीमा', आर्यखंड मधि मानी।
वहँ के जन पूजें जिनवर को, मैं भी पूजन ठानी।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थवत्सादेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुवत्सा' के मधि सुन्दर, रजतगिरी शाश्वत है।
सिद्धकूट जिनमंदिर उस पर, मुनिगण नित ध्यावत हैं।।
इस विदेह में पुरी 'कुंडला' आर्यखंड मधि मानी।
वहँ के जन पूजें जिनवर को, मैं भी पूजन ठानी।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसुवत्सादेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महावत्सा' मधि सुन्दर, रूपाचल नव कूटा।
सिद्धकूट में श्री जिनमंदिर, पूजत ही अघ छूटा।।

---

1. निर्दोष।

इस विदेह में 'अपराजितपुरि' आर्यखंड में मानी।
वहँ के जन पूजें जिनवर को, मैं भी पूजन ठानी।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थमहावत्सादेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'वत्सकावती' मध्य में, रजताचल मन भावें।
सिद्धकूट में जिनचैत्यालय, पूजन कर सुख पावे।।
इस विदेह में 'प्रभंकरापुरि' आर्यखंड में मानी।
वहँ के जन पूजें जिनवर को, मैं भी पूजन ठानी।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थवत्सकावतीदेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रम्यादेश' विदेह तास मधि, रजतगिरी अति सोहे।
सिद्धकूट में जिनप्रतिमा को पूजत ही सुख होहे।।
'अंकावति' नगरी विदेह में, आर्यखंड में मानी।
वहँ के जन पूजें जिनवर को, मैं भी पूजन ठानी।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थरम्यादेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुरम्या' तामधि उज्ज्वल' रूपाचल मन भाना।
सिद्धकूट में जिनबिंबों को, जजते पातक हाना।।
'पद्मावती' पुरी क्षेत्तर में, आर्यखंड मधि मानी ।।
वहँ के जन पूजें जिनवर को, मैं भी पूजन ठानी।।।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसुरम्यादेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश कहा 'रमणीया' सुन्दर, तामधि रजतगिरी है।
सिद्धकूट की जिनवर प्रतिमा, जजते दुःख हरी हैं।।
इस विदेह में 'शुभापुरी' है, आर्यखंड में मानी।
वहँ के जन पूजें जिनवर को, मैं भी पूजन ठानी।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थरमणीयादेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'मंगलावती' अनूपम, रजताचल तामें है।
सिद्धकूट जिनदेव सदा ही, दुख दरिद्र हाने हैं।।
इस विदेह पुरि 'रत्नसंचया' आर्यखंड में मानी।
वहँ के जन पूजें जिनवर को, मैं भी पूजन ठानी।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थमंगलावतीदेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काव्य छंद-(चाल-अहो जगत गुरुदेव.....)

'पद्मादेश' विदेह, तामधि रजत गिरी है।
उस पर श्रीजिनगेह, पूजत पाप हरी है।।
पद्मा आरजखंड, 'अश्वपुरी' नगरी है।
ताके जन से वंद्य, जिनपद पूज करी है।।17।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थपद्मादेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुपद्मा' माहिं, रजताचल मन भाना।
उस पर जिनवर धाम, पूजत पाप पलाना।।
आरजखंड सुमध्य, 'सिंहपुरी' नगरी है।
ताके जन से वंद्य, जिनपद पूज करी है ।।18।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुपद्मादेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'महापद्मा है देश, रूपाचल ता माहीं।
उसके श्रीजिनबिंब, जजते पाप नशाहीं।।
आरजखंड सुमध्य, 'महापुरी' नगरी हैं।।
ताके जन से वंद्य, जिनपद पूज करी है।।19।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थमहापद्मादेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पद्मकावति', रूपाचल अभिरामा।
सिद्धकूट के माहिं, पूजत हूँ जिनधामा।।

आरजखंड सुमध्य, 'विजयापुरि' नगरी है।।
ताके जन से वंद्य, जिनपद पूज करी है।।20।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थपद्मकावतीदेशमध्यविजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शंखादेश' विदेह, विजयारध गिरि माना।
सिद्धकूट जिनगेह, पूजत ही सुख दाना।।
आरजखंड सुमध्य, शुभ 'अरजा' नगरी है।।
ताके जन से वंद्य, जिनपद पूज करी है।।21।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थशंखादेशमध्यविजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिनादेश' विदेह, रूपाचल मन भावे।
तापर जिनवरगेह, पूजत शोक नशावे।।
आरजखंड सुमध्य, शुभ 'विरजा' नगरी है।।
ताके जन से वंद्य, जिनपद पूज करी है।।22।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थनलिनादेशमध्यविजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कुमुदादेश' महान, रूपाचल अति सोहे।
तापर श्रीजिनधाम, पूजत ही सुख होवे।।
आरजखंड सुमध्य कही 'अशोकपुरी' है।
ताके जन से वंद्य, जिनपद पूज करी है।।23।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थकुमुदादेशमध्यविजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सरिता' देश महान, रूपाचल वर जानो।
ताके जिनगृह माहिं, जिनपद पूजन ठानो।।
आरजखंड सुमध्य, 'वीतशोक' नगरी है।।
ताके जन से वंद्य, जिनपद पूज करी है।।24।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसरितादेशमध्यविजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–गीता छंद–

'वप्रा' विदेह सुमाहिं सुन्दर, रजतगिरि मनभावना।
नवकूट में इक कूट पर है, जिनभवन अति पावना।।
इस देश आरजखंड में, 'विजयापुरी' अति सोहनी।
ताके जनों से पूज्य जिनवर, मूर्ति पूजूँ मोहनी।।25।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थवप्रादेशमध्यविजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुविदेह 'सूवप्रा' मधी है, रजतगिरि उत्तम कहा।
तापे जिनालय में रतनमय, बिंब का अतिशय महा।।
इस देश आरजखंड में, पुरि 'वैजयंती'' सोहनी।।
ताके जनों से पूज्य जिनवर, मूर्ति पूजूँ मोहनी।।26।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुवप्रादेशमध्यविजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ देश 'महवप्रा' सुहाता, तास में विजयार्ध है।
उसपे जिनेश्वर मूर्तियों को, महामुनिगण ध्यात हैं।।
इस देश आरजखंड में नगरी 'जयंती' सोहनी।
ताके जनों से पूज्य, जिनवर मूर्ति पूजूँ मोहनी।।27।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थमहावप्रादेशमध्यविजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ देश 'वप्रीकावती' में, रूप्यगिरि सुन्दर कहा।
ऋषिगण विचरते हैं सदा, जिनवर सदन मनहर रहा।।
इस देश आरजखंड में, 'अपराजिता' पुरि सोहनी।।
ताके जनों से पूज्य जिनवर, मूर्ति पूजूँ मोहनी।।28।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थवप्रकावतीदेशमध्यविजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वरदेश 'गंधा' बीच में, विजयार्ध अनुपम शासता।
किन्नरगणों के गीत से, जिनवर भवन नित भासता।।

इस देश आरजखंड में, 'चक्रापुरी' अति सोहनी।।
ताके जनों से पूज्य जिनवर, मूर्ति पूजूँ मोहनी।।29।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थगंधादेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ देश 'सूगंधा' मधी है, रजतगिरि रूपामयी।
विद्याधरों की पंक्तियाँ, जिनवर भवन पूजें सही।।
इस देश आरजखंड में, 'खड्गापुरी' है सोहनी।।
ताके जनों से पूज्य जिनवर, मूर्ति पूजूँ मोहनी।।30।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुगंधादेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ देश 'गंधीला' मधी है, रजतगिरि अति सोहना।
गंधर्व सुरगण पूजते हैं, जिनभवन मन मोहना।।
इस देश आरजखंड में, नगरी 'अयोध्या' सोहनी।।
ताके जनों से पूज्य जिनवर, मूर्ति पूजूँ मोहनी।।31।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थगंधिलादेशमध्यविजयार्धपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ 'गंधमालिनि' देश में, विजयार्ध गिरि सुन्दर कहा।
उस पर जिनेश्वर बिंब को, नित जजें सुर किन्नर अहा।।
इस देश आरजखंड में, नगरी 'अवध्या' सोहनी।
ताके जनों से पूज्य जिनवर, मूर्ति पूजूँ मोहनी।।32।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थगंधमालिनीदेशमध्य-विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–नरेन्द्रछंद–

'भरतक्षेत्र' में हिमगिरि से गंगा सिन्धू उदगमतीं।
रूपाचल की गुफा तले से बाहर होकर बहतीं।।
आर्यखंड के मध्य 'अयोध्या' तीर्थंकर जिन होते।
रजताचल के जिनगृह जिनवर, बिंब जजतसुख होते।।33।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिभरतक्षेत्रस्थविजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिखरी से रक्ता रक्तोदा, नदियाँ निकलें जानो।
विजयारध की गुफा तले से, बाहर आती मानों।।
आर्यखंड के मध्य 'अयोध्या', पुरुष शलाका होते ।
विजयारध के जिनमंदिर को, पूजत ही मल धोते ।।34।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थविजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

पूरब पश्चिम कहे विदेहा, तिनके बत्तिस जानो।
दक्षिण उत्तर भरतैरावत के, दो रजताचल मानो।।
इन चौंतिस के चौंतिस जिनगृह, रत्नमयी जिनप्रतिमा।
पूरण अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ, इनकी अतिशय महिमा।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–सोरठा–

जय जय गिरि विजयार्ध, जय जिनचैत्यालय नमूँ।
जय जय श्री जिनबिंब, नमूँ सदा भव दुःख हरो।।1।।

–शम्भु छंद–

श्री विजयमेरु पूर्वापर में, बत्तिस शुभ क्षेत्र बखाने हैं।
उन सबमें शाश्वत रचना है, नित करमभूमि ही माने हैं।।
इक क्षेत्र में कोटी छ्यानवें हैं, पुर ग्राम रतनगृहयुत माने।
हैं नगर पछत्तर सहस रम्य, सोलह सु हजार खेट माने।।2।।
कर्वट चौंतीस हजार कहे, और चार हजार मटंब कहे।
पत्तन अड़तालिस सहस तथा, निन्यानवे सहस द्रोणमुख हैं।।

संवाहन चौंतिस सहस दुर्ग-अटवी अट्ठाइस सहस कहीं।
हैं छप्पन अंतरद्वीप सात सौ, कुक्षिनिवास प्रसिद्ध सही।।3।।

रत्नाकर छब्बिस सहस सदा, रत्नों की खान बखाने हैं।
नानाविध उपवन खंड तथा, वापी पुष्करिणी माने हैं।।
त्रयवर्णी क्षत्रिय वैश्य शूद्र, वहाँ सतत जनमते रहते हैं।
ईती भीती दुर्भिक्ष महामारी आदिक नहिं कहते हैं।।4।।

अतिवृष्टि अनावृष्टी नहिं है, वहाँ सुखकर मेघ बरसते हैं।
ब्रह्मा विष्णू चंडी मुंडी शिव के मंदिर नहिं दिखते हैं।।
धर्माभासी मिथ्यादृष्टी, पाखंडी वहँ नहिं होते हैं।
कोई कोई जन वहँ पर भी, बस भाव मिथ्यात्वी होते हैं।।5।।

नर नारी की उत्कृष्ट आयु, इक पूर्व कोटि बरसों तक है।
है आयु जघन अंतर्मुहूर्त, मध्यम में बहुविध भेद रहें।।
तन ऊँचाई कर दो हजार, वे कर्मभूमि के वासी हैं।
कोई दीक्षा ले कर्मकाट, होते शिवपुर के वासी हैं।।6।।

कच्छा आदिक सब क्षेत्रों में, बस यही व्यवस्था मानी है।
हैं सभी क्षेत्र में रजतगिरी, दो दो नदियाँ परधानी हैं।।
इन सबमें छह-छह खंड हुए, हैं पाँच खंड नर म्लेच्छों के।
हों आर्यखंड में तीर्थंकर, चक्री हलधर[1] आदिक होते।।7।।

रजताचल पर खेचर[2] नगरी, पचपन-पचपन द्वय बाजू में।
खेचर खेचरनी विद्या से, नित गमन करे दिश दासू[3] में।।
सब रूपाचल हैं रजतमयी, त्रयकटनी औ नव कूट कहें।
इक सिद्धकूट नदि के सन्निध, उसमें शाश्वत जिनधाम रहें।।8।।

श्री विजयमेरु के दक्षिण में, है भरत क्षेत्र शुभ नाम धरे।
इसमें रजताचल पूर्व सदृश, इक सिद्धकूट जिनधाम खरे।।
छह खंड बीच आरजखंड में, षट्काल परावर्तन होते।
तीर्थंकर आदिक महापुरुष, त्रेसठ चौथे युग में होते।।9।।

1. बलभद्र । 2. विद्याधर। 3. दशों।

श्री विजयमेरु उत्तरदिश में, ऐरावत क्षेत्र कहा जाता।
इसके मधि रजताचल ऊपर, इक शाश्वत जिनगृह सुखदाता।।
इसमें भी काल परावर्तन, बस चौथे में तीर्थंकर हों।
चक्री आदिक त्रेसठ जन सब, चौथे युग में जगमान अहो।।10।।

–घत्ता–

जय जय रूपागिरि, चौंतिस मंदिर, जय जिनवर तुम जयमाला।
जो पढ़े पढ़ावे सो जन पावे, 'ज्ञानमती' श्री गुणमाला।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीविजयमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्रजताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-सर्वजिनबिंबेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.19)

पूर्व धातकीखण्ड भरतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना-नरेन्द्र छंद

पूर्वधातकी भरतक्षेत्र में, वर्तमान जिनदेवा।
विजयमेरु के दक्षिणदिश में, सुरनरकृत पद सेवा।।
इन चौबीसों तीर्थंकर को, भक्ति भाव से ध्याऊँ।
आह्वाननविधि पूजा करके, निजआतम सुख पाऊँ।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर-समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर-समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर-समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-स्रग्विणी छंद

सिंधु को नीर ले स्वर्ण झारी भरूँ।
नाथ के पाद में तीन धारा करूँ।।
इंद्रशतवंद्य तीर्थेश को नित जजूँ।
रत्न सम्यक्त्व पा भव भ्रमण से बचूँ।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

गंध सौगंध्य चंदन घिसाऊँ सही।
नाथपद पूजते पूर्ण साता लही।।इंद्रशत.।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शालि सुंदर शशीकांति सम लायके।
पुंज धर पूजहूँ नाथ गण गाय के।।इंद्रशत.।।3।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंद मंदार मल्ली सुमन लाइया।
कामजेता प्रभू अर्च सुख पाइया।।
इंद्रशतवंद्य तीर्थेश को नित जजूँ।
रत्न सम्यक्त्व पा भव भ्रमण से बचूँ।।4।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मुद्ग लड्डू इमरती भरे थाल में।
भूख व्याधी रहित नाथ पूजूँ तुम्हें।।इंद्रशत.।।5।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप की लौ बहिर्ध्वांत नाशे सदा।
आपको पूजते भेदविज्ञानदा।।इंद्रशत.।।6।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप ले अग्नि में नित्य खेऊं सही।
आत्मशुद्धी करूँ पाउं निज की मही।।इंद्रशत.।।7।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम्र अंगूर अखरोट काजू लिये।
नाथ को पूजते सौख्य संपत् लिये।।इंद्रशत.।।8।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीर गंधादि वसु द्रव्य थाली भरे।
अर्घ्य से अर्चते सर्वव्याधी टरे।।इंद्रशत.।।9।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-दोहा-

धर्मचक्र के अधिपती, त्रिभुवन पति जिनराज।
सुमन चढ़ाकर पूजहूँ, नमूं नमूं नतमाथ।।1।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-रोला छंद-

नाथ 'युगादीदेव', सब देवन के देवा।
त्रिभुवन के तुम देव, भव्य करें नित सेवा।।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, प्रभुपद शीश नमाऊँ।
सर्व मनोरथ त्याग, रत्नत्रय निधि पाऊँ।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीयुगादिदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'सिद्धांतजिनेन्द्र', अंतक को चकचूरा।
जो जन पूजें नित्य, पावें सुख भरपूरा।।पूजूँ.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसिद्धांतजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'महाईश' के नाथ, कामजयी बलधरी।
तुम पद पूजें नित्य, वे निजपद अधिकारी।।पूजूँ.।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमहेशनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'परमार्थ' जिनेश, परम पुरुष तुम ध्याते।
भविजन भक्ति समेत, पूजत कर्म नाशते।।पूजूँ.।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपरमार्थनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ 'समुद्धर' देव, जग उद्धार किया है।
जिनने पूजा आप, सौख्य अपार लिया है।।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, प्रभुपद शीश नमाऊँ।
सर्व मनोरथ त्याग, रत्नत्रय निधि पाऊँ।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसमुद्धरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'भूधरनाथ' जिनेश, सब जीवन हितकारी।
वाणी मधुर पियूष, पीकर हो सुखकारी।।पूजूँ.।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीभूधरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'उद्योत' जिनेंद्र, केवल सूर्य तुम्हीं हो।
मुनिमन के प्रद्योत, करते नित्य तुम्हीं हो।।पूजूँ.।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीउद्योतजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आर्जव' जिनवर आप, ऊर्ध्वगती को पाई।
किन्नर गण तुम कीर्ति, गाते हैं सुखदाई।।पूजूँ.।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीआर्जवजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अभयनाथ' भगवान्, अभयदान दें सबको।
सब जीवन प्रतिपाल, नमूँ नमूँ चरणन को।।पूजूँ.।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअभयनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अप्रकंप' तीर्थेश, जब तुम जन्म लिया है।
इंद्रासन तत्काल कम्पित हो गया है।।पूजूँ.।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअप्रकंपजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'पद्मनाथ' भगवान्, तुम पद बसती पद्मा।
जो पूजें धर प्रीत, पावें अनुपम सद्मा।।पूजूँ.।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपद्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'पद्मनंदि' जिनदेव, तुम पदपद्म जजें जो।
मृत्यु मल्ल को मार, निज शिवसद्म भजें सो।।पूजूँ.।।12।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपद्मनंदिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ 'प्रियकंर' आप, वाणी प्रियहित करणी।
कर्म पुटों से भव्य, पीते भव दुःखहरणी।।पूजूँ.।।13।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीप्रियकंरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सुकृतनाथ' जिनेंद्र, अतुल पुण्य निधि तुम हो।
जो जन तुम पद भक्त, उनके भ्रम का क्षय हो।।पूजूँ.।।14।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुकृतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'भद्रनाथ' जिनदेव, कर्मबली के जेता।
हित उपदेशी आप, विश्व तत्त्व के वेत्ता।।पूजूँ.।।15।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीभद्रनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनीचंद्र' भगवान्, मुनिगण तुम गुण गावें।
निज आतम का ध्यान, करके शिवपुर जावें।।पूजूँ.।।16।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमुनिचन्द्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'पंचमुष्टि' जिनराज, मोह मल्ल को जीता।
पंच परावृत नाश, हुये भविकजन मीता।।पूजूँ.।।17।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपंचमुष्टिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ 'त्रिमुष्टि' जिनेश, जन्मजरा मृति नाशा।
केवल रवि को पाय, लोकालोक प्रकाशा।।पूजूँ.।।18।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीत्रिमुष्टिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'गांगिक' जिननाथ, शीतल गंगनदीसम।
जो करते तुम सेव, पावें सौख्य अनूपम।।पूजूँ.।।19।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीगांगिकनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'गणनाथ' प्रधान, गणधर वंदन करते।
कर्मअरी को हान, निजपद मंडन करते।।पूजूँ.।।20।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीगणनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'सर्वांग जिनेश', तुम सम रूप न जग में।
इंद्र सहस कर नेत्र, फिर भी तृप्त न मन में।।पूजूँ.।।21।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसर्वांगदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'ब्रह्मेन्द्र' अधीश, आतम गुण में राचें।
ब्रह्मानंद पियूष, पीकर भवदुःख नाशे।।पूजूँ.।।22।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीब्रह्मेन्द्रनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'इंद्रदत्त' भगवान, इंद्र करें तुम भक्ती।
जो तुम आश्रय लेय, पावें अनुपम शक्ती।।पूजूँ.।।23।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीइंद्रदत्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'श्री नायक' जिननाथ, करुणासिंधु तम्हीं हो।
करो कृपा मुझनाथ, भवरुज वैद्य तुम्हीं हो।।पूजूँ.।।24।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनायकनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य-दोहा

धर्मनाथ के नाथ तुम, धर्मचक्रधर धीर।
पूरण अर्घ्य चढ़ायके, पाऊँ मैं भवतीर।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीयुगादिदेवादिनायकनाथपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

-शंभु छंद-

जय जय तुम वाणी कल्याणी, गंगाजल से भी शीतल है।
जय जय शमगर्भित अमृतमय, हिमकण से भी अतिशीतल है।।
चंदन औ मोती हार चंद्रकिरणों से भी शीतलदायी।
स्याद्वादमयी प्रभु दिव्यध्वनी, मुनिगण को अतिशय सुखदायी।।1।।

वस्तू में धर्म अनंत कहे, उन एक एक धर्मों को जो।
यह सप्तभंगि अद्भुत कथनी, कहती है सात तरह से जो।।

प्रत्येक वस्तु में विधि निषेध, दो धर्म प्रधान गौण मुख से।
वे सात तरह से हों वर्णित, नहिं भेद अधिक अब हो सकते।।2।।
प्रत्येक वस्तु है अस्ति रूप, औ नास्ति रूप भी है वो ही।
दो ही है उभय रूप समझो, फिर अवक्तव्य है भी वो ही।।
वो अस्तिरूप और अवक्तव्य फिर नास्ति अवक्तव भंग धरे।
फिर अस्ति नास्ति और अवक्तव्य, ये सात भंग हैं खरे खरे।।3।।

स्वद्रव्य क्षेत्र औ काल भव, इन चारों से वस्तु अस्तिमयी।
परद्रव्य क्षेत्र कालादि से, वो ही वस्तू नास्तित्व कही।।
दोनों का क्रम से कहना हो, तब अस्तिनास्ति यह भंग कहा।
दोनों का युगपत कहने से, हो अवक्तव्य यह तुर्य कहा।।4।।

अस्ती औ अवक्तव्य क्रम से, यह पंचम भंग कहा जाता।
नास्ती औ अवक्तव्य छट्ठा, यह भी है क्रम से बन जाता।।
क्रम से कहने से अस्ति नास्ति, और युगपत अवक्तव्य मिलके।
यह सप्तम भंग कहा जाता, बस कम या अधिक न हो सकते।।5।।

इस सप्तभंगमय सिन्धू में, जो नित अवगाहन करते हैं।
वे मोह रागद्वेषादिरूप, सब कर्म कालिमा हरते हैं।।
वे अनेकांतमय वाक्य सुधा, पीकर आतमरस चखते हैं
फिर परमानंद परमज्ञानी, होकर शाश्वत सुख भजते हैं।।6।।

मैं निज अस्तित्व लिये हूँ नित, मेरा पर में अस्तित्व नहीं।
मैं चिच्चैतन्य स्वरूपी हूँ, पुद्गल से मुझ नास्तित्व सही।।
इस विधि निज को निज के द्वारा, निज में ही पाकर रम जाऊँ।
निश्चय नय से सब भेद मिटा, सब कुछ व्यवहार हटा पाऊँ।।7।।

भगवन्! कब ऐसी शक्ति मिले, श्रुतदृग से निज को अवलोकूँ।
फिर स्वसंवेद्य निज आतम को, निज अनुभव द्वारा मैं खोजूँ।।

संकल्प विकल्प सभी तज के, बस निर्विकल्प मैं बन जाऊँ।
फिर केवल 'ज्ञानमती' से ही, निज को अवलोकूँ सुख पाऊँ।।8।।

-दोहा-

वर्तमान चौबीस जिन, नमूँ आप पदपद्म।
हरो अमंगल विघ्नघन, हो मुझ अपुनर्जन्म।।9।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखण्डद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.20)

पूर्वधातकीखण्डद्वीप ऐरावतक्षेत्र वर्तमानकालीन तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना-गीता छंद

वर पूर्वधातकि द्वीप में, शुभ क्षेत्र ऐरावत कहा।
तीर्थेश संप्रति काल के, मैं पूजहूँ नितप्रति यहाँ।।
समता रसिक योगीश गण, नित वंदना उनकी करें।
आह्वानना विधि से सतत, हम अर्चना उनकी करें।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकर समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकर समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकर समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-नाराच छंद

सिंधु नीर से जिनेन्द्र पाद पद्म पूजिये।
स्वात्म कर्मपंक धोय पूर्ण शुद्ध हूजिये।।
वर्तमान तीर्थनाथ वंदना सदा करूँ।
धर्मशुक्ल ध्यान हेतु अर्चना मुदा करूँ।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा। निर्वपामीति

चंदनादि गंध से जिनेश चर्ण चर्चिये।
मोहताप ध्वंस के अपूर्व शांति अर्जिये।।वर्तमान.।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

धौत स्वच्छ श्वेत शालि पुंज को रचाइये।
स्वात्म सौख्य ले अखंड पाप को नशाइये।।
वर्तमान तीर्थनाथ वंदना सदा करूँ।
धर्मशुक्ल ध्यान हेतु अर्चना मुदा करूँ।।3।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मोगरा जूही गुलाब वर्ण वर्ण के लिये।
कामदेव के जयी जिनेश चर्ण में दिये।।वर्तमान.।।4।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

गूझिया इमरतियां बनाय थाल में भरें।
पूर्ण तृप्त आपको चढ़ाय व्याधियों हरें।।वर्तमान.।।5।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपवर्तिका जले समस्त ध्वांत को हरे।
पूजते तुम्हें प्रभो अपूर्व ज्योति को करे।।वर्तमान.।।6।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप गंध युक्त अग्निपात्र में जलाय हूँ।
पाप कर्म को जलाय पुण्यराशि पाय हूँ।।वर्तमान.।।7।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

संतरा अनार सेव औ बदाम भी लिये।
मोक्ष सौख्य हेतु नाथ! आपको चढ़ा दिये।।वर्तमान.।।8।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

तोय गंध शालि पुष्प आदि अष्ट द्रव्य ले।
तीन रत्न हेतु अर्घ्य से जजूँ भले।।वर्तमान.।।9।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-दोहा-

ज्ञान दरश सुखवीर्यमय, गुण अनंत विलसंत।
सुमन चढ़ाकर पूजहूँ, हरूँ सकल जगफंद।।1।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-दोहा-

नाथ! 'अपश्चिम' आपको, जो पूजें धर प्रीत।
परमानंद स्वरूप को, लहें बने शिवमीत।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअपश्चिमजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'पुष्पदंत जिनराज का, अद्भुत रूप प्रसिद्ध।
इंद्र सहस दृग कर निरख, तृप्ति न पावे नित्त।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अर्ह' जिनेश्वर आपने, मोह अरी का अंत।
पहुँचे झट शिवधाम में, मैं पूजूँ भगवंत।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअर्हंजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय को पूर्ण कर, 'श्रीचरित्र' जिनराज।
मुक्तिरमा के पति हुये, पूज लहूँ शिवराज।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीचरित्रनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सिद्धानंद' जिनेन्द्र को, वंदे त्रिभुवन भव्य।
जजूँ सिद्धि के हेतु मैं, पूरें मुझ कर्त्तव्य।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसिद्धानंदजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्त परमस्थान को, पाया 'नंदगदेव'।
परमानंद प्रकाश हित, करूँ आप पद सेव।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनंदगजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'पद्मकूप' जिनदेव हैं, पद्मालिंगित देह।
जो जन पूजें भक्ति से, होते शीघ्र विदेह।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपद्मकूपजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'उदयनाभि' जिनराज ने, जीव समास समस्त।
बतलाकर रक्षा करी, पूजूं उन्हें प्रशस्त।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीउदयनाभिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रूक्मेंदु' जिनराज हैं, षट् पर्याप्ति विहीन।
चिन्मूरति विनमूर्ति को, नमूँ करें दुख क्षीण।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीरूक्मेंदुजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'कृपाल' तीर्थेश का, तीर्थ तीर्थ उनहार।
जो नितप्रति अर्चा करें, उतरें भव दधि पार।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकृपालुजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री प्रौष्ठिल जिनदेव ने, प्रबल कर्म अरिघात।
भविजन को संबोधिया, पूज भरूँ सुख सात।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीप्रौष्ठिलजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'सिद्धेश्वर' भव्यजन, सिद्धी में सुनिमित्त।
अर्घ्य चढ़ाकर मैं जजूँ, लहूँ स्वात्मसुख नित्त।।12।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसिद्धेश्वरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अमृतेंदु' जिन आपके, वचनामृत सुखकार।
परमौषधि हैं जन्मरुज, हरें जजूँ पद सार।।13।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअमृतेंदुजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'स्वामिनाथ' तीर्थेश की, भक्ति कल्पतरु सिद्ध।
मैं पूजूं नित भाव से, पाऊं सौख्य समृद्ध।।14।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीस्वामिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'भुवनलिंग' जिनवर तुम्हें, पूजें त्रिभुवन भव्य।
त्रिभुवनमस्तक पर पहुँच, हो जाते कृतकृत्य।।15।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीभुवनलिंगजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर श्री 'सर्वरथ', परमारथ सुखदेत।
श्रद्धा से मैं नित जजूँ, सर्वसिद्ध सुखहेत।।16।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसर्वरथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'मेघनंद' जिनराज हैं, परमामृत के मेघ।
मैं पूजूँ नित चाव से, अजर अमर पद हेत।।17।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमेघनंदजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदिकेश आनंदघन, गणधर गण सुख हेत।
मैं पूजूँ आनंद से, अनुपम आनंद हेत।।18।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनंदिकेशजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर 'हरिनाथ' के, गुण अनंत श्रुतमान्य।
पूजूँ मैं निज सौख्य हित, सकल विश्व सन्मान्य।।19।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीहरिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'अधिष्ठ' जिनराज का, केवलज्ञान महान।
दर्पणवत् उसमें सतत, झलके सकल जहान।।20।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअधिष्ठजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शांतिकदेव' जिनेन्द्र ने, किये स्वदोष प्रशांत।
पूर्णशांति के हेतु मैं, जजूँ मुक्ति के कांत।।21।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशांतिकदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नंदीस्वामिन'! जो तुम्हें, नित पूजे धर प्रीत।
अनुपम निज आनंदमय, पावें धाम पुनीत।।22।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनंदीस्वामिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कुंदपार्श्व' जिनदेव ने, पूर्ण सुयश विस्तार।
भविजन को शिवपथ कहा, जजूँ सार में सार।।23।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकुंदपार्श्वजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ 'विरोचन' विश्व में, पूजित परम जिनेश।
मैं पूजूँ शुद्धात्म हित, त्रिकरणशुद्धि समेत।।24।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविरोचनजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-दोहा-

सप्तपरमस्थान गत, चौबीसों जिनराज।
पूजूँ पूरण अर्घ्य ले, लहूँ पूर्ण साम्राज।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअपश्चिमादिविरोचनपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

-दोहा-

ध्यानामृत पीकर भये, मृत्युंजय प्रभु आप।
गाऊँ तुम जयमालिका, हरो सकल संताप।।1।।

-शंभु छंद-

जय जय तीर्थंकर शिवसुख कर, जय जय अनवधि गुणसार हो।
जय जय सुखज्ञान अतींद्रियधर, जय जय अनुपम रत्नाकर हो।।

तुमने मृत्युंजय बनने का, सबको सुखकर उपदेश कहा।
जिसने तुम आज्ञा को पाला, उसने मृत्यु का क्लेश दहा।।2।।

संन्यास विधी के तीन भेद, जो पंडित मरण कहे जाते।
प्रायोपगमन इंगिनीमरण औ भक्तप्रतिज्ञा कहलाते।।
जिसमें निज से पर के किंचित्, उपकार नहीं वह पहला है।
जिसमें निज से वैयावृत्ती, पर से नहिं हो वह मंझला है।।3।।

जो श्रेष्ठ संहनन के धारी, वे ही इनको कर सकते हैं।
हैं आज हीन संहनन तीन, इसलिये नहीं बन सकते हैं।।
बस भक्तप्रतिज्ञा का आश्रय, इस युग के मुनिगण लेते हैं।
बारह वर्षों की उच्च अवधि, लेकर ही विधिवत् सेते हैं।।4।।

अड़तालिस मुनि परिचर्या रत, निर्यापक बन सेवा करते।
वह क्षपक मुनि संन्यास निरत, होकर जिनवचनों से वरतें।।
क्रम क्रम से भोजन त्याग करे, वह अंत समय जल भी छोड़े।
तन से बिल्कुल निर्मम होकर, आतम से ही नाता जोड़े।।5।।

सबसे ही क्षमा कराकर पुन, स्वयमेव क्षमा परिणाम धरे।
संपूर्ण कषायों को तजकर, उत्तम संन्यास अपूर्व करे।।
इस विध कषाय औ काय उभय, को कृश करते तन को छोड़े।
वह सात आठ भव से ज्यादा, नहिं ले यम की फांसी तोड़े।।6।।

भगवन्! तुम भक्ती से ऐसी, शक्ती मुझ में भी आ जावे।
संन्यासविधी से मरण करूँ, बस पुनर्जनम सब नश जावे।।
मैं मृत्यु को उत्सव समझूँ, समतारस अमृत को पीऊं।
क्षुध आदि व्याधि से खेद न हो, अपने में अनुभव रस पीऊं।।7।।

बचपन से लेकर अब तक जो, मैंने पुण्यार्जित किया सही।
उन सबका फल एकत्रित हो, प्रभु मुझे मिले सब एक यही।।
जब प्राण प्रयाण करें मेरे, मम कंठ अंकुठित बना रहे।
तुम नाम मंत्र अंतिम क्षण तक, मेरी जिह्वा पर चढ़ा रहे।।8।।

-दोहा-

प्रभु मैं याचूं आज, जब तक मुक्ति नहीं मिले।
भव-भव में संन्यास, सम्यग्ज्ञानमती सहित।।9।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.21)

पूर्वधातकीखण्डद्वीप विहरमाण तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना-गीता छंद

वरद्वीपधातकीखण्ड में जो पूर्व अपर विदेह हैं।
उनमें सदा विहरें जिनेश्वर चार शिव परमेश हैं।।
उन कर्म भूमी में सदा जिनधर्म अमृत वरसता।
मैं पूजहूँ आह्वानन कर निज आत्म अनुभव छलकता।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थसंजातकस्वयंप्रभ-ऋषभानन-अनंतवीर्यतीर्थंकरसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थसंजातकस्वयंप्रभ-ऋषभानन-अनंतवीर्यतीर्थंकरसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थसंजातकस्वयंप्रभ-ऋषभानन-अनंतवीर्यतीर्थंकरसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-चाल शेर

हे नाथ! आप पाद में त्रयधार मैं करूँ।
निज चित्त ताप शांति हेतु आश मैं धरूँ।।
तीर्थंकरों के पादकमल चित्त में धरूँ।
अनिष्ट के संयोग जन्म दुःख को हरूँ।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थसंजातकादि-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नाथ! आप चर्ण में चंदन विलेपते।
संपूर्ण ताप नष्ट हो निजतत्त्व लोकते।।तीर्थं.।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वपरविदेहक्षेत्रस्थसंजातकादि-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नाथ! आप अग्र शालि पुंज चढ़ाऊँ।
अक्षय अखंड सौख्य हेतु आश लगाऊँ।।
तीर्थंकरों के पादकमल चित्त में धरूँ।
अनिष्ट के संयोग जन्म दुःख को हरूँ।।3।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वपरविदेहक्षेत्रस्थसंजातकादि-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नाथ! आप चर्ण पुष्पमाल चढ़ाऊँ।
सम्पूर्ण सौख्य पाय देह कांति बढ़ाऊँ।।तीर्थं.।।4।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वपरविदेहक्षेत्रस्थसंजातकादि-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नाथ! आप सामने नैवेद्य चढ़ाऊँ।
उदराग्नि को प्रशमित करूँ निज शक्ति बढ़ाऊँ।।तीर्थं.।।5।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वपरविदेहक्षेत्रस्थसंजातकादि-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नाथ! दीप लेय आप आरती करूँ।
अज्ञान तिमिर नाश ज्ञान भारती भरूँ।।तीर्थं.।।6।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वपरविदेहक्षेत्रस्थसंजातकादि-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

वर धूपघट में धूप खेय कर्म जलाऊँ।
हे नाथ! आप भक्ति से सम्यक्त्व को पाऊँ।।तीर्थं.।।7।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वपरविदेहक्षेत्रस्थसंजातकादि-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नाथ! श्रेष्ठ फल चढ़ाय अर्चना करूँ।
चारित्र लब्धि पाय दुःख रंच ना भरूँ।।तीर्थं.।।8।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वपरविदेहक्षेत्रस्थसंजातकादि-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नाथ! अर्घ लेय रजत पुष्प मिलाऊँ।
निजात्म तत्त्व प्राप्ति हेतु अर्घ चढ़ाऊँ।।तीर्थं.।।9।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वपरविदेहक्षेत्रस्थसंजातकादि-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

नाथ! पाद पंकेज, जल से त्रयधारा करूँ।
अतिशय शांती हेत, शांतीधारा शं करे।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार गुलाब, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।
मिल आत्म सुखलाभ, जिनपद पंकज पूजते।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-दोहा-

समवसरण में राजते, तीर्थंकर परमेश।
पुष्पांजलि कर पूजते, नशें सर्व मन क्लेश।।1।।

-शम्भु छंद-

धातकी खंड पूरब विदेह, सीतानदि के उत्तर तट पे।
अलकापुरि में पितु देवसेन, प्रभु हुये देवसेना माँ से।।
रविचिन्ह सहित श्री 'संजातक', तीर्थंकर विहरण करते हैं।
उनको हम पूजें भक्ती से, वे सबके पातक हरते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थअलकापुरीमध्यसमवसरणस्थित-श्रीसंजातकजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री विजयमेरु पूरब विदेह, सीतानदि के दक्षिण तट में।
विजया नगरी पितु मित्रभूति, जननी सुमंगला से जन्मे।।
शशिचिन्ह धरें जग उद्योती, तीर्थेश 'स्वयंप्रभ' शिवभर्ता।
वे गणधर मुनिगण से वंदित, उनका अर्चन भव दुखहर्ता।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविजयानगरीमध्यसमवसरणस्थितश्रीस्वयंप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धातकीद्वीप पश्चिम विदेह, सीतोदा के दक्षिण जानो।
है पुरी सुसीमा नृपकीर्ति पितु, मात वीरसेना मानो।।
है सिंह चिन्ह श्री 'ऋषभानन' तीर्थंकर अनुपम सुखधारी।
निज परमानंद सौख्य हेतू, मैं पूजूँ त्रिभुवन गुणधारी।।3।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थसुसीमापुरीमध्यसमवसरण-स्थितश्रीऋषभाननजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री विजयमेरु पश्चिम विदेह, सीतोदा के उत्तर तट में।
है नगरि अयोध्या पिता मेघरथ, प्रसू सुमंगला से जन्मे।।
तीर्थेश 'अनंतवीर्य' भगवन्, गजचिन्ह सहित केवलज्ञानी।
जो पूजें ध्यावें गुण गावें, वे होवें धर्म शुक्लध्यानी।।4।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थअयोध्यानगरीमध्यसमवसरण-स्थितश्रीअनंतवीर्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य दोहा-

संजातक अरु स्वयंप्रभ, ऋषभानन जिनराज।
जिनवर अनंतवीर्य को, जजत सरें सब काज।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थसंजातकादिविहरमाण-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

-दोहा-

वैभव अतुल अनंतयुत, समवसरण अभिराम।
रत्नत्रय निधि हेतु मैं, शतशत करूँ प्रणाम।।1।।

चाल-शेर.....

हे नाथ! आप तीन लोक में महान हो।
हे नाथ! आप सर्व सौख्य के निधान हो।।
मैं बार-बार आप चरण वंदना करूँ।
सम्यक्त्व रत्न हेतु नाथ अर्चना करूँ।।2।।

हे नाथ! आप भक्ति से सम्पूर्ण दुख टरें।
हे नाथ! आप भक्ति रोग शोक को हरे।।
हे नाथ! आप भक्ति से सब आपदा टलें।
हे नाथ! आप भक्त को सब संपदा मिलें।।3।।

तुम भक्त को कभी भी इष्ट का वियोग ना।
तुम भक्त को कभी अनिष्ट का संयोग ना।।
तुम भक्त के संपूर्ण अमंगल विनश्यते।
तुम भक्त को सर्पादि जंतु डस नहीं सकें।।4।।

गज सिंह व्याघ्र क्रूर जंतु शांतचित बने।
तुम भक्ति के प्रभाव शत्रु मित्र सम बने।।
तुम भक्ति के प्रभाव ईति भीतियाँ टलें।
तुम भक्ति से व्यंतर पिशाच भूत भी टलें।।5।।

हे नाथ! आप पाय मैं निहाल हो गया।
सम्यक्त्व रत्न से ही मालामाल हो गया।।
मैं आप सदृश सिद्ध हूँ चिन्मूर्ति आतमा।
बस आप भक्ति से ही बना अंतरातमा।।6।।

परमात्मा बन जाऊँ नाथ! शक्ति दीजिये।
चारित्र लब्धि पूर्ण करूँ युक्ति दीजिये।।
अपने ही चरण में प्रभो स्थान दीजिये।
'सज्ज्ञानमती' संपदा का दान दीजिये।।7।।

-दोहा-

नाथ! आपकी भक्ति से, भक्त बनें भगवान।
पुनः अनंतों काल तक, रहें पूर्ण धनवान।।8।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थश्रीसंजातकस्वयंप्रभ-ऋषभानन-अनंतवीर्यनामविहरमाणचतुस्तीर्थंकरेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.22)

पूर्व धातकीखण्डद्वीप नवदेवता पूजा

अथ स्थापना-नरेन्द्र छंद

पूर्वधातकीखंडद्वीप में कर्मभूमि चौंतीस हैं।
इनमें अर्हंत् सिद्ध सूरि पाठक साधु मुनिगण हैं।।
जिनवरधर्म जिनागम जिनवर प्रतिमा जिनगृह सोहें।
आह्वानन कर पूजूँ मैं नित ये मुझ अघमल धो हैं।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-द्रुतविलंबित छंद

गगन गंग नदी जल लाइया। जिनपदांबुज धार कराइया।
जजत हूँ नवदेव सुभक्ति से। निज सुधारस हो तुम भक्ति से।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभि चंदन गंध घिसाइया। जिन पदाम्बुज अग्र चढ़ाइया।
जजत हूँ नवदेव सुभक्ति से। निज सुधारस हो तुम भक्ति से।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

धवल अक्षत पुंज चढ़ाइया। सुख अखंडित आश लगाइया।।
जजत हूँ नवदेव सुभक्ति से। निज सुधारस हो तुम भक्ति से।।3।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कुसुम रंग बिरंग चढ़ाइया। अमल आतम कीर्ति बढ़ाइया।
जजत हूँ नवदेव सुभक्ति से। निज सुधारस हो तुम भक्ति से।।4।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस मिष्ट चरू अर्पण करूँ। उदर व्याधि हरो अर्चन करूँ।
जजत हूँ नवदेव सुभक्ति से। निज सुधारस हो तुम भक्ति से।।5।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अमल दीप शिखा आरति करूँ। हृदय मोह मिटे भारति भरूँ।
जजत हूँ नवदेव सुभक्ति से। निज सुधारस हो तुम भक्ति से।।6।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभि धूप अगनि में खेवते। अशुभ कर्म नशें तुम सेवते।
जजत हूँ नवदेव सुभक्ति से। निज सुधारस हो तुम भक्ति से।।7।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

मधुर आम अनार भले भले। फल चढ़ाय मनो कलिका खिले।
जजत हूँ नवदेव सुभक्ति से। निज सुधारस हो तुम भक्ति से।।8।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फलादिक अर्घ चढ़ाय के। रतनत्रय की आश लगाय के।
जजत हूँ नवदेव सुभक्ति से। निज सुधारस हो तुम भक्ति से।।9।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

यमुना सरिता नीर, प्रभु चरणों धारा करूं।
मिले निजात्म समीर, शांतिधारा शं करे।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुरभित खिले सरोज, जिन चरणों अर्पण करूँ।
निर्मद करूँ मनोज, पाऊँ जिन गुण संपदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-दोहा-

पूर्वधातकी खंड में, कर्मभूमि चौंतीस।
पुष्पांजलि कर पूजहूं, नमूँ नमाकर शीश।।1।।

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-नरेन्द्र छंद-

विजयमेरु के पूर्व दिशा में, भद्रशाल के पासे।
'कच्छा' देश विदेह कहाता, आर्यखंड नदि पासे।।
अर्हत् सिद्धाचार्य उपाध्याय, साधु पंचगुरु नित हैं।
धर्मजिनागम प्रतिमा जिनगृह, जजत मिले निज सुख है।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहकच्छादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुकच्छा' उसमें छहखंड, आर्यखंड अतिसुंदर।
शाश्वत कर्मभूमि वहां मानव, धर्म करें अति सुखकर।।अर्हंत्।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहसुकच्छादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महाकच्छा' छहखंड में, आर्यखंड नदि पासे।
मध्य राजधानी में जिनवर, विहरें मार्ग प्रकाशें।।अर्हत्।।3।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहमहाकच्छादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'कच्छकावती' वहाँ पर, मध्य रजतगिरि सोहे।
रक्ता रक्तोदा से छह खंड, आर्यखंड मन मोहे।।
अर्हत् सिद्धाचार्य उपाध्याय, साधु पंचगुरु नित हैं।
धर्मजिनागम प्रतिमा जिनगृह, जजत मिले निज सुख है।।4।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहकच्छाकावतीदेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आवर्ता' पूरब विदेह में, आर्यखंड मनहारी।
श्रावक गण जिनभक्ती करके, बने सर्वगुणधारी।।अर्हत्।।5।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहआवर्तादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'लांगलावर्ता' उसमें, आर्यखंड सुखकारी।
गगन गमनचारी मुनि विहरें, गुरु वंदन दुख हारी।।अर्हत्।।6।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहलांगलावर्तादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कला' छह खंडों में, बंटा आर्यखंड उसमें।
जिनवर पंचकल्याणक उत्सव, करते सुरगण मुद में।।अर्हत्।।7।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहपुष्कलादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कलावती' सुहाता, आर्यखंड की महिमा।
तीर्थंकर चक्री हलधर हरि, इनसे बढ़ती गरिमा।।अर्हत्।।8।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहपुष्कलावतीदेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देवारण्य वेदिका पासे, सीता के दक्षिण में।
'वत्सा' देश विदेह सुहाता, आर्यखंड इस मधि में।।अर्हंत्।।9।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहवत्सादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुवत्सा' पूरब में है, छह खंडों से सोहे।
एक आर्य अरु पाँच म्लेच्छ, खंडों से सुर मन मोहे।।अर्हंत्।।10।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहसुवत्सादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महावत्सा' पूरब में, सुर किन्नर गुण गाते।
तीर्थंकर का जन्म महोत्सव, सुरपति आय मनाते।।अर्हंत्।।11।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहमहावत्सादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'वत्सकावती' सुहाना, मध्य रजतगिरि सोहे।
विद्याधर विद्याधरियों से, सुरगण का मन मोहे।।अर्हंत्।।12।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहवत्सकावतीदेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रम्या' देश विदेह पूर्व में, शाश्वत चौथा युग है।
तीर्थंकर केवलि श्रुतकेवलि, विहरें वहाँ सतत हैं।।अर्हंत्।।13।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहरम्यादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुरम्या' आर्यखंड में, कर्मभूमि शाश्वत है।
मुनिगण कर्म काट शिव वरते, सुरनर मन भावन है।।अर्हंत्।।14।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहसुरम्यादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्वविदेह देश 'रमणीया', यथा नाम गुण वैसा।
आर्यखंड में धर्मसुधारस, की करते मुनि वर्षा।।
अर्हत् सिद्धाचार्य उपाध्याय, साधु पंचगुरु नित हैं।
धर्मजिनागम प्रतिमा जिनगृह, जजत मिले निज सुख है।।15।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहरमणीयादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'मंगलावती' वहाँ पर, नित नव मंगल होते।
आर्यखंड में ऋषिगण विहरण, कर्मकालिमा धोते।।अर्हंत्।।16।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहमंगलावतीदेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-गीता छंद-

मेरू विजय के अपर दिश, वनवेदिका के निकट में।
'पद्मा' विदेह सुदेश है, उस मध्य आरजखंड में।।अर्हंत्।।17।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहपद्मादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर देश 'सुपद्मा' वहाँ पर, खंड छह में ख्यात है।
तीर्थंकरों के जन्म से पावन धरा खंडार्य है।।अर्हंत्।।18।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहसुपद्मादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम विदेहे 'महापद्मा' खंड विख्यात हैं।
उस मध्य आरजखंड में, सुरगण रमें दिनरात हैं।।अर्हंत्।।19।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहपद्मकावतीदेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर 'पद्मकावति' देश में, छहखंड में इक आर्य है।
जिन पंचकल्याणक महोत्सव, इंद्रगण से मान्य हैं।।अर्हंत्।।20।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहपद्मकावतीदेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शंखा' विदेह वहाँ सतत, तीर्थंकरों की अर्चना।
चक्रेश हलधर, खगपती, सुरपति करें जिनवंदना।।अर्हंत्।।21।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहशंखादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिना' विदेह जिनेश्वरों के जन्म तप से वंद्य है।
मुनिगण गगनचारी वहाँ, निज आत्मसुख में मग्न हैं।।अर्हंत्।।22।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहनलिनादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कुमुदा' विदेह सुअपरदिशि में, खंड छह अति शोभते।
इक खंड आरज में जिनेश्वर, धर्म भवि अघ शोधते।।अर्हंत्।।23।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहकुमुदादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिमविदेह 'सरित्' में, छहखंड में इक आर्य है।
उसमें जिनेश्वर अर्चना, करते भविक शिरधार्य हैं।।अर्हंत्।।24।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहसरितादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिश अपर भूतारण्य वेदी, निकट 'वप्रा' देश है।
छहखंड में इक आर्य है, उसमें दिगंबर वेष हैं।।अर्हंत्।।25।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहवप्रादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचा-र्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम 'सुवप्रा' देश में, छहखंड में रजताद्रि है।
नदि पास आरजखंड में, सुरवंद्य जिनवर अंघ्रि हैं।।
अर्हत् सिद्धाचार्य उपाध्याय, साधु पंचगुरु नित हैं।
धर्मजिनागम प्रतिमा जिनगृह, जजत मिले निज सुख है।।26।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहसुवप्रादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम 'महावप्रा' मधी, छहखंड में पण म्लेच्छ हैं।
इक आर्यखंड नदी तरफ, उसमें दिगंबर भेष हैं।।अर्हंत्।।27।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहमहावप्रादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर 'वप्रकावति' देश में, आकाशगामी ऋषि रहें।
नित आत्म अनुभव लीन हों, निज कर्ममल को धो रहे।।अर्हंत्।।28।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहवप्रकावतीदेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधा' विदेह सुहावना, छहखंड से शोभित सदा।
इस मध्य आरजखंड में, मुनिराज विहरें शर्मदा।।अर्हंत्।।29।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहगंधादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम 'सुगंधा' देश में, नहिं ईति भीति कभी वहां।
शाश्वत चतुर्थ सुकाल वर्ते, धर्मवृष्टी हो वहाँ।।अर्हंत्।।30।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहसुगंधादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस 'गंधिला' वर देश में, हैं आर्य आरजखंड में।
निज आत्म गुण की गंध को, फैला रहे नभ खंड में।।अर्हंत्।।31।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहगंधिलादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर 'गंधमालिनि' देश में, गणधर मुनीगण नित दिखें।
संसार के संताप से, भविवृंद को रक्षित रखें।।अर्हंत्।।32।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहगंधमालिनीदेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-स्रग्विणी छंद-

दक्षिणी दिक् भरत क्षेत्र शोभे वहाँ।
खंड षट् मध्य इक खंड आरज वहाँ।।
तीर्थंकर केवली साधुगण धर्म है।
जैन प्रतिमा जिनालय जजत स्वर्ग है।।33।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिदक्षिणदिग्भरतक्षेत्रस्थितआर्यखंडे-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरी दिक् सु ऐरावता क्षेत्र है।
खंड आरज वहाँ धर्म अभिप्रेत है।।
तीर्थंकर केवली साधु जिनधाम हैं।
पूजते भव्य पाते निजी धाम है।।34।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिउत्तरदिगैरावतक्षेत्रस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य-चौपाई

पूर्वधातकीखंड सुद्वीपा, चौंतिस कर्मभूमि सुख दीपा।
जिनवर मुनिगण जिनवर धामा, पूजत मिले शीघ्र शिवधामा।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मभूमि में वर महिलायें, बनें आर्यिका निजसुख पायें।
इन सबको वंदामि हमारा, मातृभक्ति से मिले सहारा।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितमहाव्रतपवित्र-सर्वार्यिकाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्वधातकी में तीर्थेशा, पंच कल्याणक क्षेत्र हमेशा।
गणधर मुनिगण के शिवथाना, तीर्थक्षेत्र पूजूँ गुणखाना।।3।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थिततीर्थंकरगणधरमुनि-गणपंचकल्याणकादितीर्थक्षेत्रेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

चाल-शेर

जय जय श्री अरहंतदेव देवदेव हैं।
जय जय अनंतसिद्धि प्रभो! सिद्ध हेतु हैं।।
जय जय श्री आचार्यदेव रत्न प्रदाता।
जय जय सुउपाध्याय गुरु धर्म के दाता।।1।।

जय साधु आत्मसाधना में लीन हो रहे।
जय जय जिनेन्द्र धर्मचक्र वर्तता रहे।।

जय जय श्रीजिन भारती माँ पालती हमें।
जय जय जिनेन्द्र बिंब जिनालय नमूं तुम्हें।2।।

वर पूर्वधातकी अवर[1] में भरत क्षेत्र है।
योजन ये छह हजार छै सौ चौदा व्यास है।।
इक्यासि सहस पाँच सौ सत्तत्तरा कहा।
विदेह एक मान इतने योजनों रहा।।3।।

जो दुःख शोक और पश्चात्ताप का करना।
रोना व पर को मारना विलाप का करना।।
इनसे बंधे असाता जो दुःख हेतु है।
पुनरपि ये दुःख शोक का कारणस्वरूप है।।4।।

सब प्राणियों पे करुणाअनुकंपा व्रती पे।
चउविध को दान देना मुनिव्रत धरें शुभे।।
शुभ योग ध्यान उत्तम शत्रू पे क्षमा हो।
हो लोभ त्याग शौचभाव देशव्रत भि हों।।5।।

परवश से कष्ट सह अकाम निर्जरा करना।
मिथ्यात्व सहित बहुत विध के तप तपा करना।
इन सबसे बंधे साता बहुत सौख्य प्रदाता।
इंद्रिय जनित ये सुख भी भव में हि भ्रमाता।।6।।

सम्यक्त्व सहित साता निर्वाण हेतु है।
हे नाथ! आप भक्ती भवसिंधु सेतु है।
भगवन्! सभी असाता दुख दूर कीजिये।
साता में संक्रमित कर सुख पूर्ण दीजिये।।7।।

सम्यक्त्व लब्धि दीजे सज्ज्ञान दीजिये।
चारित्र लब्धि देकर निज पास लीजिये।।

1. दक्षिण।

हो 'ज्ञानमती' ज्योति अज्ञान नाशिये।
हे नाथ! दिव्य ज्योति मुझ में प्रकाशिये।।8।।

-दोहा-

पूर्वधातकी द्वीप में, कर्मभूमि चौंतीस।
नमूँ नमूँ नवदेव को, हाथ जोड़ नत शीश।।9।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.23)

पश्चिम धातकीखण्ड अचलमेरु पूजा

अथ स्थापना-गीता छंद

श्री अचलमेरु राजता है, अपर धातकि द्वीप में।
सोलह जिनालय तास में, जिनबिंब है उन बीच में।।
प्रत्यक्ष दर्शन हो नहीं, अतएव पूजूँ मैं यहाँ।
आह्वानन विधि करके प्रभो, थापूँ तुम्हें आवो यहाँ।।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपस्थ-अचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिम्ब-समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपस्थ-अचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिम्ब-समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपस्थ-अचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिम्ब-समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-गीता छंद

गंगानदी का स्वच्छ प्रासुक, नीर झारी में भरूँ।
संसार के त्रयताप शांति, हेतु त्रयधारा करूँ।।
श्री अचलमेरु के जिनालय, और जिनेश्वर बिंब को।
मैं पूजहूँ नितभक्ति से, नाशूँ सकल जगद्बंद्ध को।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपस्थ-अचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालय-जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर चंदन गंध शीतल, भर कटोरी में लिया।
जिनपाद पंकज पूजते भवतप्त मन शीतल किया।।श्री.।।2।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपस्थ-अचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालय-जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

दुग्धाब्धि फेन समान उज्ज्वल, धौत तंदुल थाल में।
जिनचरण वारिज के निकट धर, पुंज नाऊँ भाल मैं।।श्री.।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपस्थ-अचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालय-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

बेला चमेली मौलसिरि, सुरभित सुमन भर लाइया।
कंदर्प दर्प विनाशने को, नाथ चरण चढ़ाइया।।
श्री अचलमेरु के जिनालय, और जिनेश्वर बिंब को।
मैं पूजहूँ नितभक्ति से, नाशूँ सकल जगद्बंद्ध को।।4।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपस्थ-अचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालय-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पकवान फेनी मोदकादिक, सरस थाली में भरें।
क्षुध रोग हर तुम पद कमल, पूजत क्षुधा डाकिनि हरें।।श्री.।।5।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपस्थ-अचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालय-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर ज्योति जगमगे, अंधेर सब जग का हरे।
तुम चरण पूजा दीप से, मन ध्वांत को क्षण में हरे।।श्री.।।6।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपस्थ-अचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालय-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध सुरभित धूप अग्नी पात्र में खेऊँ सदा।
अंतर कलुष बाहर भगे नहिं स्वप्न में हो भ्रम कदा।।श्री.।।7।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपस्थ-अचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालय-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर आम अनार फल, अखरोट आदिक लाइया।
अक्षय सुखद फल हेतु जिनपद, पद्म निकट चढ़ाइया।।श्री.।।8।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपस्थ-अचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालय-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध अक्षत पुष्प नेवज, दीप धूप रु फल लिया।
निज संपदा के हेतु भगवन्! अर्घ तव अर्पण किया।।श्री.।।9।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपस्थ-अचलमेरुसंबंधिषोडशजिनालय-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

परम शांति सुख हेतु, शांतीधारा मैं करूँ।
सकल जगत में शांति, सकल संघ में हो सदा।।10।।

शांतये शांतिधारा।

चंपक हर सिंगार, पुष्प सुगंधित अर्पिते।
होवे सुख अमलान, दुःख दारिद्र पलायते।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-दोहा-

अचल मेरु के जिनभवन, पूजूँ भक्ति समेत।
पुष्पांजलि कर पूजते, जिनमंदिर भवसेतु।।1।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-अडिल्ल छंद-

अचलमेरु में भद्रशाल वन जानिये।
तामें पूरब दिश जिनमंदिर मानिये।।
अर्घ्य चढ़ाकर मैं पूजूँ नित भाव से।
जिनगुण संपति हेतु भजूँ अति चाव से।।1।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिभद्रसालवनस्थितपूर्वदिक्चैत्यालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृतीय मेरु के भद्रशाल में राजता।
दक्षिणदिश जिनभवन अनूपम शासता।।अर्घ्य.।।2।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिभद्रसालवनस्थितदक्षिणदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु के भद्रशाल में रम्य है।
पश्चिमदिश जिनसदन सकलसुखपद्म है।।अर्घ्य.।।3।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिभद्रसालवनस्थितपश्चिमदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु के भद्रशाल उत्तर दिशी।
जिनमंदिर में जिनप्रतिमा अनुपमकृती।।
अर्घ्य चढ़ाकर मैं पूजूँ नित भाव से।
जिनगुण संपति हेतु भजूँ अति चाव से।।4।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिभद्रसालवनस्थितउत्तरदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-नरेन्द्र छंद-

अचलमेरु के नंदनवन में, पूर्व दिशी जिन गेहा।
निजआतम अनुभव रसस्वादी, मुनिगण नमत सनेहा।।
नीरादिक वसुद्रव्य मिलाकर, अर्घ चढ़ाऊँ आके।
निज आतम समरस जल पीकर, बसूँ मोक्षपुर जाके।।5।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिनंदनवनस्थितपूर्वदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु नंदनवन दक्षिण, सुरवंदित जिनधामा।
इंद्रिय सुख त्यागी वैरागी, यति वंदे निष्कामा[1]।।नीरा.।।6।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिनंदनवनस्थितदक्षिणदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धातम ध्यानी मुनि ज्ञानी, जिन का ध्यान धरे हैं।
अचलमेरु नंदन पश्चिम दिश, जिनगृह पाप हरे हैं।।नीरा.।।7।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिनंदनवनस्थितपश्चिमदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु के नंदनवन में, उत्तर दिश जिनगृह है।
समरस निर्झर जल अवगाही, गणधर गण वंदत हैं।।नीरा.।।8।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिनंदनवनस्थितउत्तरदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. इच्छा रहित।

-दोहा-

अचलमेरु वन सौमनस, पूरब दिश जिनधाम।
अर्घ्य चढ़ाकर मैं जजूँ, सिद्ध करो सब काम।।9।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितपूर्वदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु सौमनस के, दक्षिण दिश जिनगेह।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजहूँ, करो हमें गतदेह[1]।।10।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितदक्षिणदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु सौमनस के, पश्चिम जिनगृह सिद्ध।
अर्घ्य चढ़ाकर मैं जजूं, करूँ मोह अरि बिद्ध।।11।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितपश्चिमदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु सौमनस के, उत्तर जिनगृह सार।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजहूँ, होऊँ भवदधि पार।।12।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिसौमनसवनस्थितउत्तरदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-चौपाई-छंद-

अचलमेरु पांडुकवन जान, पूरब दिश जिननिलय[2] महान।
अकृत्रिम जिनबिंब महान, अर्घ्य चढ़ाय करूँ गुणगान।।13।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिपांडुकवनस्थितपूर्वदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु पांडुकवन नाम, दक्षिण दिशि अनुपम जिनधाम।
अकृत्रिम जिनबिंब महान, अर्घ्य चढ़ाय करूँ गुणगान।।14।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिपांडुकवनस्थितदक्षिणदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. अशरीरी सिद्धपद। 2. जिनमंदिर।

अचलमेरु पांडुकवन कहा, पश्चिम दिश जिनमंदिर रहा।
अकृत्रिम जिनबिंब महान, अर्घ्य चढ़ाय करूँ गुणगान।।15।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिपांडुकवनस्थितपश्चिमदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु पांडुकवन सही, उत्तर दिशि जिनगृह सुख मही।
अकृत्रिम जिनबिंब महान, अर्घ्य चढ़ाय करूँ गुणगान।।16।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिपांडुकवनस्थितपूर्वदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य-दोहा

अचलमेरु चउवन विषै, चार चार जिनधाम।
पूरण अर्घ्य संजोय के, जजूँ नित्य निष्काम।।1।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोलह जिनगृह में अतुल, जिनवर बिंब महान।
सत्रहसौ अठबीस हैं, झुक झुक करूँ प्रणाम।।2।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयमध्यविराजमानएकसहस्र-सप्तअष्टा-विंशतिजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु के विदिश में, पांडुकशिलादि वंद्य।
पूजूँ अर्घ चढ़ाय के, नमूँ नमूँ सुखकंद।।3।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिपांडुकवनविदिक्-स्थितपांडुकादिशिलाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

-दोहा-

कल्पवृक्ष चिंतामणी, चिच्चेतन भगवान्।
चिन्मूरति जिनमूर्ति को, नमूँ नमूँ धर ध्यान।।1।।

-रोला छंद-

जय जय अचल सुमेरु, शाश्वत सिद्ध महाना।
जय जय पुण्य निकेत, अतिशय सौख्य खजाना।।
जय जय श्री जिनगेह, सोलह स्वर्णमयी हैं।
जय जय श्री जिनबिंब, नाना रत्नमयी है।।2।।

मानस्तम्भ ध्वजादि, तोरण मणिमालये।
तीन कोट सिद्धार्थ, चैत्यतरू बहु गायें।।
वैभव अतुल असंख्य, सहजिक रहें वहाँ पर।।
सुरपति नरपति नित्य, पूजन करें तहाँ पर।।3।।

चारण ऋषिगण आय, आतम ध्यान धरे हैं।।
कर्मकलंक नशाय, उत्तम सौख्य भरे हैं।।
सम्यग्दर्शन पाय, भविजन तृप्त सु होते।
आत्म स्वरूप विचार, भव भव का भय खोते।।4।।

मैं नारक तिर्यंच, देव मनुष्य नहीं हूँ।
पुरुष नपुंसक रूप, स्त्रीरूप नहीं हूँ।।
सब पुद्गल पर्याय, उपज उपज कर विनशें।
कर्मउदय से जीव, इनहीं में नित विलसें।।5।।

निश्चय नय से नित्य, परमानंद स्वभावी।
मैं अनंतगुण पुंज, केवलज्ञान प्रभावी।।
मैं मुझमें थिर होय, निज में ही निज पाऊँ।
प्रभु वह दिन कब होय, जब मैं ध्यान लगाऊँ।।6।।

तुम भक्ती से नाथ, शक्ति प्रगट हो मेरी।
करूँ कर्म का नाश, छूटे भव भव फेरी।।
जब तक मुक्ति न होय, तब तक भक्ति हृदय में।
रहे आपकी देव! ''ज्ञानमती'' रुचि मन में।7।।

-दोहा-

जो पूजें जिनवर भवन, भक्ति भाव से नित्य।
सो जिनगुण संपति लहें, अनुक्रम से भवभिद्य।।8।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.24)

अचलमेरु सम्बंधी षट्कुलाचल जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–गीताछंद–

सुरगिरि अचल के दक्षिणोत्तर, में कुलाचल षट् कहे।
हिमवन महाहिमवन निषध, नीलाद्रि रुक्मी शिखरि हैं।।
इन भूभृतों के पूर्व दिश में, श्री जिनालय सोहने।
थापूँ यहाँ उनके जिनेश्वर, बिंब को मन मोहने।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-सर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-सर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-सर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–

भागीरथी का मिष्ट शीतल, नीर झारी में भरूँ।
निज आतमा की शुद्धि हेतू, नाथ पद धारा करूँ।।
श्री अचलमेरू के कुलाचल, हिमवदादिक जानिये।
षट् जैनमंदिर पूज के, निज आत्म सिद्धी मानिये।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर चंदन घिस सुगंधित, भर कटोरी लाइया।
निज आत्म पद की सुरभि हेतू, नाथ पाद चढ़ाइया।।श्री.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

वर देवजीर कमोद शाली, धोय अक्षत ले लिये।
निज आत्म गुण के पुंज हेतू, पुंज तुम सन्मुख दिये।।

श्री अचलमेरू के कुलाचल, हिमवदादिक जानिये।
षट् जैनमंदिर पूज के, निज आत्म सिद्धी मानिये।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

बेला चमेली केवड़ा, कुवलय सुगन्धित पुष्प ले।
निज आत्म यश सद्गंध हेतू, नाथ पद अर्पूं भले।।श्री.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सोहाल पूरण पोलिका, लड्डू अंदरसे लाय के।
निज आत्म तुष्टी हेतु, जिनवर पाद पास चढ़ाय के।।श्री.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर बत्ती ज्वलत ज्योती, दीप कर में ले लिया।
निज मोह ध्वांत समूह नाशन, हेतु जिनपद पूजिया।।श्री.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अतिश्वेत चन्दन लाल चंदन, सुरभि धूप मिलाय के।
निजकर्म जालन हेतु प्रभु ढिग, अग्नि माहिं जलाय के।।श्री.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीफल सुपारी लौंग पिस्ता, नाशपाती सेब ले।
निज आत्मा के मोक्ष हेतू, नाथ पद पूजूँ भले।।श्री.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध अक्षत आदि लेकर, द्रव्य से थाली भरूँ।
त्रैलोक्यपति जिनपाद पूजूँ, अर्घ को अर्पण करूँ।।

श्री अचलमेरू के कुलाचल, हिमवदादिक जानिये।
षट् जैनमंदिर पूज के, निज आत्म सिद्धी मानिये।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

पद्म सरोवर नीर, सुवरण झारी में भरूँ।
जिनपद धारा देय, भव वारिधि से उत्तरूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।।

सुवरण पुष्प मंगाय, प्रभु चरणन अर्पण करूँ।
वर्ण गंध रस फास, विरहित जिनपद को वरूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

अपर धातकी द्वीप, दक्षिण उत्तर तास के।
षट् कुलपर्वत नित्य, तिन पे जिनगृह पूजहूँ।।1।।

इति श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलपर्वतस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छंद–

अचलमेरु के दक्षिण दिश में, 'हिमवन' रजतमयी है।
ग्यारह कूट सहित पर्वत मधि, पदम सरोवर भी है।।
द्रह बिच कमल कमल बिच देवी, 'श्री' का भवन बखाना।
शाश्वत है इक सिद्धकूट, जिनगेह जजूँ अघ हाना।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधि-हिमवत्पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुतिय 'महाहिमवन' कुलनग है, रजतमयी अठकूटा।
महापद्म द्रह के कमलों बिच, 'ह्री सुरि'[1] गेह अनूठा।।
शाश्वत अनुपम सिद्धकूट पर, श्री जिनभवन सुहावे।
ऋषिगण नित वंदन करते हैं, हम भी अर्घ चढ़ावें।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिमहाहिमवत्पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. ह्रीं देवी

'निषधगिरी' वर तप्त कनक छवि, नव कूटन सुर सेवी।
मध्य तिगिंछ सरोवर के बिच, कमल मध्य 'धृति' देवी।।
शाश्वत अनुपम सिद्धकूट पर श्री जिनभवन सुहावे।
ऋषिगण नित वंदन करते हैं, हम भी अर्घ चढ़ावें।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधि-निषधपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नीलाचल'[1] वैडूर्यमणी द्युति, नव कूटों से मनहर।
केसरि द्रह में कमल बीच, 'कीर्ती ' देवी अति सुन्दर।।
शाश्वत अनुपम सिद्धकूट पर श्री जिनभवन सुहावे।
ऋषिगण नित वंदन करते हैं, हम भी अर्घ चढ़ावें।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधि-नीलपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रूक्मी' नग रूपा छवि कूटों, आठ सहित मन मोहे।
पुंडरीक द्रह मध्य कमल में, 'बुद्धी' देवी सोहे।।
शाश्वत अनुपम सिद्धकूट पर श्री जिनभवन सुहावे।
ऋषिगण नित वंदन करते हैं, हम भी अर्घ चढ़ावें।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधि-रुक्मिपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शिखरी' नग स्वर्णाभ बीच मह-पुंडरीक सरवर है।
मध्य कमल बिच 'लक्ष्मी' देवी, ग्यारह कूट उपरि है।।
शाश्वत अनुपम सिद्धकूट पर श्री जिनभवन सुहावे।
ऋषिगण नित वंदन करते हैं, हम भी अर्घ चढ़ावें।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिशिखरिपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

अपर धातकी मध्य अचल सुरगिरि के दक्षिण-उत्तर।
षट् कुलपर्वत ऊपर जिनगृह, वे अनुपम लोकोत्तर।।

1. नील पर्वत।

मणिमय जिनप्रतिमा को ध्याते, योगीश्वर नित आके।
मैं भी अर्घ्यं चढ़ाकर पूजूँ, जिन गुण मंगल गाके।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरोःदक्षिणोत्तरषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शातिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

–सोरठा–

अकृत्रिम जिनबिंब, स्वयंसिद्ध उपमारहित।
तिनकी यह जयमाल, गाऊँ अति उल्लास से।।1।।

–स्रग्विणी छंद–

जैन के वैश्म की लोक में श्रेष्ठता।
इन्द्र पावे न गाके कभी पूर्णता।।
गर्भ आलय महा देवछंदादि हैं।
रत्नमय वेदिका तोरणों युक्त हैं।।2।।

घंटिका किंकणी मणिमयी बाजती।
धूप घट में जले धूम दिश व्यापती।।
भृङ्ग दर्पण व्यजन, कुंभ ध्वज चामरा।
छत्र ठोना दरब मंगली अठ वरा।।3।।

पूर्ण कलशे रतन भृत रजत स्वर्ण के।
रत्नमाला कुसुम मालिका लंबते।।
रत्नदीपक धरें ज्योति से जगमगे।
रत्न सिंहासनों से तिमिर सब भगे।।4।।

रत्न के स्तूप हैं उच्चता को लिये।
सिद्धमूर्ती सहित शाश्वता को लिये।।

चैत्यद्रुम है अनादी निधन भूमयी।
चार जिन चार सिद्धों की मूर्ती वहीं।।5।।

वृक्ष सिद्धार्थ ये सिद्धि देवें सदा।
जो नमें नित्य वे सिद्धि लेवें स्वता।।
वेदियाँ तोरणों गोपुरों युत कहीं।
मध्य में पीठ पे स्वर्ण खम्भे सही।।6।।

स्वर्णमय खम्भ में शोभती महाध्वजा।
रत्नमयि ये अनेकों वरण की ध्वजा।।
महाध्वज अग्र में चार वापी भरी।
जन्तु से हीन कल्हार कमलों भरी।।7।।

ये जिनालय सभी तीन कोटों घिरे।
मध्य में पंक्तियाँ ध्वजा की मनहरें।।
कोट के मध्य में कल्पतरु शोभते।
चार दिशि चार मानस्तम्भ शोभते।।8।।

जैन चैत्यालयों की न तुलना कहीं।
देव देवी सदा भक्ति करते वहीं।।
एक सौ आठ जिनबिंब रत्नोंमयी।
सर्व जिनगेह में राजते मणिमयी।।9।।

मैं नमूं मैं नमूं मैं नमूं नित्य ही।
मृत्यु को जीत के पाऊँ शिव की मही।।
धन्य मैं धन्य मैं हो गया आज ही।
धन्य मेरे नयन धन्य जीवन सही ।।10।।

नाथ! को पाय के तृप्त मैं हो गया।
याचना एक भव भव मिले भक्ति या।।
अन्य कुछ भी न मुझको रही चाहना।
पूरिये नाथ! मेरी मनोकामना।।11।।

–घत्ता–

जय जय कुलपर्वत, जिनमंदिर युत, तुम जयमाला जो भणहीं।
जय 'ज्ञानमती' युत, जिनगुणसंपत, सो जन तत्क्षण ही वरहीं।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिन-बिंबेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.25)

अचलमेरु संबंधि गजदंत जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–शम्भु छंद–

श्री अचलमेरु की विदिशा में, चारों गजदंत बखाने हैं।
उन पर श्रीजिनमंदिर अनुपम, श्री जिनप्रतिमा युत माने हैं।।
निज चिच्चैतन्य सुधारस के, आस्वादी उनको वंदे हैं।
उन प्रतिमा का आह्वानन कर, हम नित पूजें आनंदे हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–

सुर सरिता का उज्ज्वल जल ले, कंचन झारी भर लाया हूँ।
भव भव की तृषा बुझाने को, त्रय धारा देने आया हूँ।।
श्री अचलमेरु गजदंताचल, जिनवर गृह में जिनप्रतिमा हैं।
जो जन मन से पूजें ध्यावें वे पावें मुक्ति अनुपमा हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

वर अष्टगंध सुरभित लेकर, तुम चरण चढ़ाने आया हूँ।
भव भव संताप मिटाने औ, समतारस पीने आया हूँ।।श्री.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शशि किरणों सम उज्ज्वल तंदुल, धोकर थाली भर लाया हूँ।
निज आतम गुण के पुंज हेतु, यहँ पुंज चढ़ाने आया हूँ ।।

श्री अचलमेरु गजदंताचल, जिनवर गृह में जिनप्रतिमा हैं।
जो जन मन से पूजें ध्यावें, वे पावें मुक्ति अनुपमा हैं।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कुवलय[1] बेला वर मौलसिरी, मचकुंद कमल ले आया हूँ।
शृंगारहार कामारिजयी, जिनवरपद यजने आया हूँ।।श्री.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मोदकफेनी घेवर ताजे पकवान बनाकर लाया हूँ।
निज आतम अनुभव चखने को, नैवेद्य चढ़ाने आया हूँ।।श्री.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक ज्योती के जलते ही, अज्ञान अंधेरा भगता है।
इस हेतू से दीपक पूजा, करते ही ज्ञान चमकता है।।श्री.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपायन में वर धूप खेय, दशदिश में धूम उठे भारी।
बहु जनम जनम के संचित भी, दुखकर सब कर्म जलें भारी।।श्री.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

वर आम्र बिजौरा नींबू औ, गन्ना मीठा ले आया हूं।
शिवकांता सत्वर वरने की, बस आशा लेकर आया हूं।।श्री.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत फूल चरू, वर दीप धूप फल लाया हूँ।
तुम चरणन अर्घ्य चढ़ाकर के, भव संकट हरने आया हूँ।।

1.लाल कमल।

श्री अचलमेरु गजदंताचल, जिनवर गृह में जिनप्रतिमा हैं।
जो जन मन से पूजें ध्यावें, वे पावें मुक्ति अनुपमा हैं।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदंताचलसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल ले भृंग में।
श्रीजिनचरण सरोज, धारा देते भव मिटे।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुरतरु के सुम लेय, प्रभु पद में अर्पण करूँ।
कामदेव मद नाश, पाऊँ आनंद धाम मैं।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

अचलमेरु विदिशा विषे, कहे चार गजदंत।
तिनके चारों जिनभवन, पूजन हेतु नमंत।।1।।

इति श्रीअचलमेरुसंबंधिगजदंतस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

राग भरतरी (ते गुरु मेरे मन बसो)

मैं नित पूजूँ भाव सो, अचलमेरु गजदंत।
भव वारिधि नौका कहें, तिनपे श्री भगवंत।।टेक.।।
मेरु दिशा आग्नेय में, सौमनस्य शुभ नाम।
सात कूट युत रौप्यमय, इक में श्री जिनधाम।।मैं नित.।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिआग्नेयदिक्सौमनसगजदन्तसिद्धकूटजिना-लयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर गिरि नैऋत्य कोण में, विद्युत्प्रभ शुभजान।
इक जिनगृह नव कूट में, तप्त कनक छवि मान।।
मैं नित पूजूँ भाव सो, अचलमेरु गजदंत।
भव वारिधि नौका कहें, तिन पे श्री भगवंत।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिनैऋत्यदिग्विद्युत्प्रभगजदन्तसिद्धकूटजिना-लयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गंध मादनाचल कहा, मेरु तने वायव्य।
सात कूटयुत कनकद्युति, जिनगृह पूजें भव्य।।मैं नित.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिवायव्यदिग्गंधमादनगजदन्तसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर नग कोण ईशान में, माल्यवान नीलाभ।
नव कूटों में एक है, जिनमंदिर रत्नाभ ।।मैं नित.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधि-ईशानदिग्माल्यवंतगजदन्तसिद्धकूटजिनालयस्थ जिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-

अचलमेरु के चार हैं, नागदंत अभिराम।
चारों के जिनगेह को, मैं नित करूँ प्रणाम।।मैं नित.।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिन-बिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य-**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

जय जय शाश्वत श्री सिद्धकूट, गजदंताचल पर सुन्दर हैं।
जय जय उन सबमें रत्नमयी, जिनप्रतिमा जजत पुरंदर हैं।।
जय जय जन जिनका नाम मंत्र, लेकर भव वारिधि तिरते हैं।
जय जय उन अकृत्रिम जिन की, अब हम जयमाला करते हैं।।1।।

नग सौमनस अरु विद्युत्प्रभ, मेरू निषधाचल छूते हैं।
तीजे चौथे गजदंत अचल, मेरू नीलाचल छूते हैं।।
नग माल्यवान के बीच गुफा, उससे सीता नदि आती है।
विद्युत्प्रभ गिरि की गुफा द्वार से, सीतोदा नदि जाती है।।2।।

इन गिरि के तल औ ऊपर में, चउ तरफ कही तट वेदी हैं।
प्रत्येक कूट औ मंदिर के, चारों तरफी तट वेदी हैं।।

तट वेदी में सुन्दर उपवन, बहुविध फल फूल खिले उनमें।
पक्षीगण कल कलरव करते, बहु सुरभित पवन चले उनमें।।3।।

बावड़ियां कमल सहित शोभें, बहु रत्नों के सुरभवन बने।
सुर अप्सरियां खग खेचरनी, क्रीड़ा करतीं मन मुदित घने।।
पर्वत पर चारण ऋषिगण भी, नित विहरण करते दीखे हैं।
शुद्धातम ध्यानारूढ़ कहीं, समरसमय अमृत पीते हैं।।4।।

वर्णादि सहित यह पुद्गल है, इससे सम्बन्ध नहीं मेरा।
यह तन भी मुझसे पृथक् कहा, इससे संश्लेष नहीं मेरा।।
इक मोहराज ही इस जग में, बहुविध के नाच नचाता है।
जो पर से निज को पृथक् किये, उसका जग में क्या नाता है।।5।।

इन मिथ्या भ्रांति अविद्या ने, मुझको इस तन में घेरा है।
सम्यक् विद्या के होते ही, मिटता भव भव का फेरा है।।
रागादि भाव भी औपाधिक, वे भी जब मुझसे भिन्न कहे।
फिर धन गृह सुत मित्रादिकजन, वे तो बिल्कुल ही पृथक् रहें।।6।।

हे नाथ! आपकी भक्ती से, मुझमें वह शक्ती आ जावे।
मैं पर से निज को भिन्न करूँ, यह सम्यक् युक्ती आ जावे।।
चैतन्य चमत्कारी आत्मा चिंतामणि कल्पतरू निधि ही।
मैं उसमें ही बस रम जाऊँ, समरस पीयूष पिऊँ नित ही।।7।।

दुख इष्ट वियोग अनिष्ट योग, भय शोकादिक का भान न हो।
केवल सुख दर्शन ज्ञानवीर्य धारी आत्मा का ध्यान रहो।।
परमानंदामृत निर्झर में, स्नान करूँ मल धो डालूँ।
अपने अनन्तगुण पुंजरूप, शिवपद साम्राज्य तुरत पालूँ।।8।।

इतनी ही आशा लेकर मैं, हे नाथ! शरण में आया हूँ।
अब किंचित् भी ना देर करो, भव भव दुख से अकुलाया हूँ।।
बहु जन्म अनंतों में संचित, अब संचय शीघ्र समाप्त करो।
भगवन् ! 'सुज्ञानमती' लक्ष्मी, देकर अब मुझे कृतार्थ करो।।9।।

–दोहा–

सिद्ध सदृश निज को समझ, जो मन करे विशुद्ध।
निश्चय को व्यवहार से, साध्य करें पुन शुद्ध।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थसर्वजिनबिबेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 26)

अचलमेरु सम्बंधि धातकी वृक्ष शाल्मली वृक्ष जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–हरिगीतिका छंद–

(चाल–सम्मेदगढ़ गिरनार....)

वरद्वीप धातकि में अपरदिश, बीच सुरगिरि अचल है।
ताके विदिश ईशान में, शुभ धातकी द्रुम अतुल है।।
सुरगिरी के नैऋत्य शाश्वत, शाल्मली द्रुम सोहना।
द्वय वृक्ष शाखा पर जिनालय, पूजहूँ मन मोहना ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीद्वयवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीद्वयवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीद्वयवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–

जय अमल ले जिनपाद पूजूँ, कर्म मल धुल जायेगा।
आत्मीक समता रस विमल, आनंद अनुभव आयेगा।।
पृथ्वीमयी दो वृक्ष के, जिनगेह मणिमय मूर्तियाँ।
जयवंत होवें नित्य ही, चिन्तामणी जिनमूर्तियाँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन सुगंधित ले जिनेश्वर, पद जजूँ आनन्द से।
स्वात्मानुभव आल्हाद पाकर, छूटहूँ जग द्वन्द से।।

पृथ्वीमयी दो वृक्ष के, जिनगेह मणिमय मूर्तियां।
जयवंत होवें नित्य ही, चिंतामणी जिनमूर्तियां।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदाकिरण सम धवल तंदुल, पुंज जिन आगे धरूँ।
वर धर्म शुक्ल सुध्यान निर्मल, पाय आतम निधि वरूँ।।पृथ्वी.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदार चंपक पुष्प सुरभित, लाय जिनपद पूजते।
निज आत्मगुण कलिका खिले, जन भ्रमर तापे गूंजते।।पृथ्वी.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मोदक पुआ बरफी इमरती, लाय जिन सन्मुख धरें।
आत्मैकरस पीयूष मिश्रित, अतुल आनंद भव हरे।।पृथ्वी.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक शिखा उद्योतकारी, जिन चरण में वारना।
अज्ञान तिमिर हटाय अंतर, ज्ञानज्योती धारना।।पृथ्वी.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध धूप मंगाय स्वाहा[1] नाथ को अर्पण किया।
वसु कर्म स्वाहा हेतु ही, निज आत्म को तर्पण किया।।पृथ्वी.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर आम अनार गन्ना, लाय जिन पूजा करूँ।
वर मोक्ष फल की आश लेकर, कर्म कंटक परिहरूं।।

1. अग्नि।

पृथ्वीमयी दो वृक्ष के, जिनगेह मणिमय मूर्तियां।
जयवंत होवें नित्य ही, चिंतामणी जिनमूर्तियां।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध अक्षत पुष्प नेवज, दीप धूप फलादि ले।
जिन कल्पतरु पूजत मनोवांछित सकल फल झट मिलें।।पृथ्वी.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

यमुना सरिता नीर, कंचन झारी में भरा।
जिनपद धारा देत, शांति करो सब लोक में।।10।।

शांतये शांतिधारा।

कमल वकुल अरविंद, सुरभित फूलों को चुने।
जिनपद पंकज अर्प्य, यश सौरभ चहुंदिश भ्रमे।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

अचलमेरु ईशान, वृक्ष आंवले सम कहा।
नैऋत शाल्मलि जान, जिनगृह पूजूँ पुष्प ले।।1।।

इति श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–हरिगीतिका–

इस धातकी तरु उत्तरी, शाखा विषे जिनगृह महा।
देवाधिदेव जिनेन्द्र की, प्रतिमा रतनमयि है वहां।।
सुरभित पवन प्रेरित जिनालय, मणि ध्वजा नित फरहरें।
वर अर्घ्य लेकर पूजते ही, कर्म शत्रू थर हरें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरोरीशानकोणे धातकीवृक्षजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तरु शाल्मली की दक्षिणी, शाखा उपरि जिन धाम है।
मृत्युंजयी जिनदेव की, प्रतिमा वहां अभिराम है।।
सुरभित पवन प्रेरित करें, जिनगृह ध्वजा नित फरहरें।
वर अर्घ्य लेकर पूजते ही, कर्म शत्रू थर हरें।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरोर्नैऋत्यकोणे शाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य दोहा–

अचलमेरु के द्वय तरू, धातकि शाल्मलि जान।
दोनों के जिनगेह को, अर्घ्य चढ़ाऊँ आन।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थसर्व-जिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

जय जय अकृत्रिम जिनभवन, अघहरण जग चूड़ामणी।
जय जय अकृत्रिम जिनप्रतिम, सब मूर्तियां चिन्तामणी।।
जय जय अनादि अनन्त अनुपम, त्रिभुवनैक शिखामणी।
जय मोह अहि के विष प्रहारण, नाथ! तुम गारुत्मणी[1]।।1।।
सुरगिरि अचल उत्तर दिशी, उत्तर कुरू है भोगभू।
तहँ धातकी तरु थल वृहत् , पे वेदिका अरु पीठ जू।।
राजत उतुङ्ग महा मनोहर, मणिमयी ये तरु हरे।
उन पे अकृत्रिम जिनसदन, मेरे सकल कलिमल हरें।।2।।

तरु चार दिश की चार शाखा, मुख्य हैं उन एक में।
जिनगृह अकृत्रिम शोभता, सुरगृह बने हैं तीन में।।

1. सर्प के विष को दूर करने वाली गरूड़मणी।

इनमें सदा व्यंतर रहें, सम्यक्त्व रत्नों युत भने।
परिवार तरु अगणित कहे परिवार सुर उन पे घने।।3।।

फल मणिमयी है आंवले सम पत्तियाँ मरकतमणी।
कोंपल पदममणि के बने, बहु फूल नाना वर्णनी।।
सब देवगृह में भी सदा, जिनधाम अनुपम राजते।
उनकी करें जो वन्दना, सब पाप क्षण में नाशते।।4।।

जिनराज सिंहासन रतन मणियों जड़ित अति सोहना।
त्रय छत्र में मोती लटकते, शशिकिरण सम मोहना।।
चौंसठ युगल सुर हाथ में, चामर लिये हैं भाव से।
वर आठ मंगल द्रव्य सब, जिनराज सन्निध भासते।।5।।

बहु देव देवी अप्सरायें, इन्द्रगण भी आवते।
जिनवन्दना गुणगान पूजत, करत शीश नवावते।।
संगीत बाजें विविध बजते, किंकणी घंटा घने।
वीणा बजाते नृत्य करते, ताल दे देकर घने।।6।।

खेचर युगलिया भक्ति से, जिनवंदना करते वहां।
नर नारियां भूचर सदा, विद्या के बल फिरते वहां।।
आकाशगामी ऋद्धि से, ऋषिगण वहां विचरण करें।
जिनवंदना से बहु जनम के, पाप तत्क्षण परिहरें।7।।

गणधर सुव्रतधर चक्रधर, हलधर गदाधर सर्वदा।
श्रुतधर अशनिधर कुलधरा, जिनभक्ति करते शर्मदा।।
अध्यात्म योगी वीतरागी, शुद्ध आतम ध्यावते।
वर निर्विकल्प समाधिरत, हो परम आनन्द पावते।।8।।

मैं भक्ति श्रद्धा भाव से, हे नाथ! तुम शरणा लिया।
बस मृत्यु मल्ल पछाड़ने को, तुम निकट धरना दिया।।
हे भक्त वत्सल ! दीनबन्धू! कृपा मुझ पर कीजिये।
हे नाथ! अब तो मुझे, केवल 'ज्ञानमति' श्री दीजिये।।9।।

–दोहा–

शाश्वत श्री जिनगेह के, स्वयं सिद्ध जिनबिंब।
मन वच तन से पूजहूँ, झड़े कर्म कटु निंब।।10।।

ॐ ह्रीं अचलमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलीवृक्षस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यो जलमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 27)

अचलमेरु सम्बंधि षोडश वक्षारगिरि जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–अडिल्ल छंद–

अचलमेरु के पूर्व, अपर दिश जानिये।
सोलह गिरि वक्षार, कनकमयि मानिये।।
इनके सोलह जिनगृह, शाश्वत सोहने।
जिनप्रतिमा को यहां, जजूँ अघ को हने।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपूर्वापरविदेहस्थषोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टकं–(चाल-नंदीश्वर पूजा)

गंगादिक निर्मल नीर, बाहर मल धोवे।
जिन चरणों धारा देत, अंतर मल धोवे।।
सोलह वक्षार गिरीन्द्र, तिन पर जिनधामा।
उनमें श्री जिनबर बिंब, पूजूँ तज कामा।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

केशर कर्पूर घिसाय तन की ताप हरे।
जिनपद में गंध चढ़ाय, भव आताप हरे ।।

सोलह वक्षार गिरीन्द्र, तिन पर जिनधामा।
उनमें श्री जिनबर बिंब, पूजूँ तज कामा।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मोती सम अक्षत श्वेत, बहु मंगलकारी।
जिन सन्मुख पुंज चढ़ाय, अक्षय सुखकारी।।सोलह.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

बेला मचकुंद गुलाब, दशदिश गंध भरे।
जिनचरणन पुष्प चढ़ाय, भव शर नष्ट करें।।सोलह.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पायस ओदन वटकादि, कुछ क्षण भूख हरे।
चरु से जिनवर पद पूज, भूख समूल हरे।।सोलह.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नन के दीप प्रकाश, बाहर तम नाशें।
दीपक से जिनपद पूज, निज अंतर भासे।।सोलह.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध विमिश्रित धूप, अग्नी संग जले।
जिन सन्मुख खेवत आय, बहुविध कर्म जले।।सोलह.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

केला दाडिम खर्बूज, मन की तुष्टि करें।
जिन सन्मुख पूज रचाय, आतम पुष्टि करें।।

सोलह वक्षार गिरीन्द्र, तिन पर जिनधामा
उनमें श्री जिनबर बिंब, पूजूँ तज कामा।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन आदिक लाय, अर्घ्य चढ़ावत हैं।
जिन पद में अर्घ्य चढ़ाय, निजपद पावत हैं।। सोलह.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

सीता नदी सुनीर, जिनपद पंकजधार दे।
वेग हरुं भवपीर, शांतीधारा शांतिकर।।10।।

शांतये शांतिधारा।

बेला कमल गुलाब, चंप चमेली ले घने।
जिनवर पर अरविंद, पूजत ही सुख संपदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

अचलमेरु के पूर्व, पश्चिम दोनों तट विषें।
सोलह गिरि वक्षार, पुष्पांजलि कर पूजहूँ।।1।।

इति श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

राग भरतरी (ते गुरु मेरे उर बसो.....)

मैं जिनपद पूजूँ सदा, मन वच काय लगाय।
वंदत नव निधि संपदा, अतिशय मंगल थाय।।टेक।।
सीतानदि उत्तर तटे, 'चित्रकूट' वक्षार।
ता गिरि पे इक जिनभवन, अविनाशी अविकार।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानद्युत्तरतटे चित्रकूटवक्षारपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'पद्मकूट' वक्षार है, कांचन की द्युति जान।
ताके जिनमंदिर विषे, जिनवर बिंब महान।।मैं जिनपद.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानद्युत्तरतटे पद्मकूटवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिनकूट' वक्षार है, ता गिरि पे चउ कूट।
सिद्धकूट में जिनसदन, पूजत पुण्य अटूट।।मै जिनपद.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानद्युत्तरतटे नलिनकूटवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'एकशैल' वक्षार है, भूभृत अविचल मान।
ताके जिनमंदिर विषें, अकृत्रिम भगवान।। मैं जिनपद.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानद्युत्तरतटे एकशैलकूटवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(राग भरतरी)

मैं पूजूँ जिनबिंब को, भक्ति भाव उर धार।
जे नर वंदें भाव से, ते उतरें भव पार।।
देवारण्य समीप से, है 'त्रिकूट' वक्षार।
ताके श्री जिनवेश्म को, पूजें इन्द्र अपार।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे त्रिकूटवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वक्षाराचल ''वैश्रवण', अनुपम रत्न भंडार।
ताका जिनमंदिर कहा, मोक्षमहल का द्वार।।मैं पूजूँ.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे वैश्रवणवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आत्मांजन' वक्षार पे, खेचरगण आवन्त।
ताके श्री जिनगेह को, मुनिगण नित्य नमंत।मैं पूजूँ.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे आत्मांजनवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजन नग वक्षार है, पूरे सुरगण आश।
ताके जिनगृह पूजते, होते कर्म विनाश।।
मैं पूजूँ जिनबिंब को, भक्ति भाव उर धार।
जे नर वंदें भाव से, ते उतरें भव पार।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे अंजनवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–अडिल्ल छंद–

'श्रद्धावान' वक्षार, कनकमय मानिये।
भद्रसाल वन वेदी, निकट बखानिये।।
तापे श्री जिनभवन विषें, जिनबिंब को।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, हरूँ जग द्वंद को।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे श्रद्धावान्वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'विजटावान्' कहा, वक्षार गिरीश पे।
कूट कहे हैं चार, रहे सुर तीन पे।।
इक में श्री जिनभवन, विषें जिनबिंब को।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय,हरूं जग द्वन्द को।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे विजटावान्वक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आशीविष' वक्षार, गिरी अनुपम जहाँ।
सुर किन्नरगण, जिनवर यश गाते वहाँ।।
तापे श्री जिनभवन, विषें जिनबिंब को।
पूजूं अर्घ्य चढ़ाय, हरूं जग द्वन्द को।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे आशीविषवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नग वक्षार 'सुखावह', सुखदातार है।
ताके जिनगृह जजत, भविक भव पार है।।

तापे श्री जिनभवन विषें जिनबिंब को।
पूजूं अर्घ्य चढ़ाय, हरूं जग द्वन्द को।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे सुखावहवक्षारपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'चंद्रमाल' वक्षार, गिरी सुखकार है।
भूतारण्य समीप, कनकमयि सार है।।
तापे श्री जिनभवन विषें जिनबिंब को।
पूजूं अर्घ्य चढ़ाय, हरूं जग द्वन्द को।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीउत्तरतटे चंद्रमालवक्षारपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सूर्यमाल' वक्षार, जिनेश्वर गेह से।
भविजन मन तम हरें, छुड़ा तन नेह से।।
जिनवर गृह के सभी, जिनेश्वर बिंब को।
पूजूं अर्घ्य चढ़ाय, हरूं जग द्वन्द को।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानद्युत्तरतटे सूर्यमालवक्षारपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नागमाल' वक्षार, अतुल जिनगृह तहां।
नागेन्द्रादिक देव, करें पूजन वहां।।
जिनवरगृह के सभी, जिनेश्वर बिंब को।
पूजूं अर्घ्य चढ़ाय, हरूं जग द्वन्द को।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानद्युत्तरतटे नागमालवक्षारपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'देवमाल' वक्षार मनोहर जानिये।
देव पूज्य जिनगेह, वहां पर मानिये।।
सुर नर पूजित, सर्वजिनेश्वर बिंब को।
पूजूं अर्घ्य चढ़ाय, हरूं जग द्वन्द को।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानद्युत्तरतटे देवमालवक्षारपर्वत-स्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

अचलमेरु के पूर्व अरु, पश्चिम के वक्षार।
तिनके सोलह जिनभवन, अर्चूं बारंबार।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

चौपाई (चाल –रची नगरी छहमास)

जयो वक्षार अचल अभिराम, जयो तिन पे जिनधाम ललाम।
जयो जिनबिंब अकृत्रिम सार, जयो जिन पुंगव बारंबार।।1।।
सभी वक्षार गिरी कनकाभ, सभी पे चार कूट रत्नाभ।
सभी पे नदि के तरफ महान, सुशोभित सिद्धकूट परधान।।2।।
गणीश्वर ध्यान धरें तुम नाथ, मुनीश्वर गण वंदें नत माथ।
सुरेश्वर मिल पूजें जिनदेव, खगेश्वर आ नमते स्वयमेव।।3।।
नरेश्वर स्तुति करें उदार, नचें सुर अपसरियां रुचि धार।
सुरासुर किन्नरगण बहु आय, बजाते वीणा जिनगुण गाय।।4।।
प्रभो तुम शिवतिय कांत महान, प्रभो तुम अनुपम शांत प्रधान।
प्रभो तुम त्रिभुवन ईश जिनेश, प्रभो तुम तारन तरन महेश।।5।।
हरो मेरे भव क्लेश अबार, करो मुझको भवदधि से पार।
नहीं हो भव में आना फेर, करो ऐसी मति नाथ अबेर।।6।।
तुम्हीं मोहारिजयी जिननाथ! तुम्हीं मृत्युंजयि मुक्ति सनाथ।
तुम्हीं मणि औषधि मंत्र अभेद्य, तुम्हीं भवरोग हरन को वैद्य।।7।।
तुम्हीं मुनि जन मन कमल दिनेश, तुम्हीं भवि कुमुदाकर तारेश।
तुम्हीं हो अघतम हर भास्वान, तुम्हीं पुण्यांकुर हित घन जान।।8।।

प्रभो तुम दर्शन ज्ञान प्रपूर्ण, तुम्हीं अनवधि सुख वीरज पूर्ण।
तुम्हीं हो शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध, तुम्हीं हो चिच्चैतन्य समृद्ध।।9।।
तुम्हीं चिन्तामणि चिन्तित देत, तुम्हीं हो कल्पतरू अभिप्रेत।
तुम्हीं तो कामधेनु महिमान, तुम्हीं पारसमणि में परधान।।10।।
प्रभो तुम नाम सकल सुख देत, वही इक भवदधि शोषण हेत।
हृदय में मेरे बसो हमेश,यही है चाह मुझे परमेश।।11।।
प्रभो जिनगुणसंपति का दान, करो मुझको निज भाक्तिक जान।
नमूँ तुम पद को बारम्बार, करो सुख 'ज्ञानमती' सुखकार।।12।

–घत्ता–

जय जय शिवभर्ता, भव दुखहर्ता, तुम जयमाला जो गावे।
सो मंगल सुखकर, शिवसुंदरि वर, 'ज्ञानमती' लक्ष्मी पावे।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-सर्वजिनबिंबेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 28)

अचलमेरु सम्बंधि चौंतिस विजयार्ध जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–नरेन्द्र छंद–

अचलमेरु के पूरब पश्चिम, क्षेत्र विदेह बखाने।
तिनके बीचन बीच रजतगिरि है बत्तीस प्रमाने।।
इसी मेरु के दक्षिण-उत्तर, भरतैरावत जानो।
इन दोनों के बीच रजतगिरि, शोभत हैं दो मानो।।1।।

–दोहा–

इन चौंतिस विजयार्ध के, चौंतिस श्री जिनधाम।
आह्वानन विधि से यहाँ, पूजूँ करूँ प्रणाम।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिना-लयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिन-लयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

व्योम[1] गंग सम उज्ज्वल पानी, मणिमय झारी भरिये।
श्रीजिनचरण सरोरुह पूजत, भव भव तृष्णा हरिये।।
अचलमेरु के चौंतिस सुन्दर, रजताचल सरधानो।
तिनके चौंतिस जिनगृह के, जिनबिंब जजत अघ हानो।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिन-लयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयज चंदन केशर कुंकुम, घिस कर्पूर मिलावो।
श्री जिनचरण सरोरुह चर्चत, भव भव ताप नशावो।।

1. आकाश गंगा।

अचलमेरु के चौंतिस सुन्दर, रजताचल सरधानो।
तिनके चौंतिस जिनगृह के, जिनबिंब जजत अघ हानो।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनलयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्रकिरण सम धवल अखंडित, शाली धोकर लीजे।
जिनवर चरण सरोरुह सन्मुख, सुंदर पुञ्ज धरीजे।।अचल.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनलयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

श्वेत कमल कल्हार मनोहर, खूब सुगंधित लाये।
जिनवरचरण सरोरुह पूजत, कामबाण नश जाये।।अचल.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनलयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पुआ अन्दरसा सेमई पायस, फेनी लाडू लाये।
श्रीजिनचरण सरोरुह पूजत, क्षुधा रोग नश जाये।।अचल.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनलयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कनक दीप कर्पूर जलाकर, झिलमिल ज्योति करंता।
श्री जिनवर की करूँ आरती, मोह अन्धेर हरंता।।अचल.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनलयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर तगर कृष्णागरु मिश्रित, धूप सुगंधित लेऊँ।
दुष्ट कर्म को भस्म करो प्रभु, तुम सन्मुख मैं खेऊँ।।अचल.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनलयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

दाडिम केला पनस बिजौरा,नींबू थाल भरा के।
श्री जिनचरण सरोरुह पूजूँ, शिवफल आश धरा के।।

अचलमेरु के चौंतिस सुन्दर, रजताचल सरधानो।
तिनके चौंतिस जिनगृह के, जिनबिंब जजत अघ हानो।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन आदिक सब लेकर, उसमें रत्न मिलाया।
श्री जिनचरण सरोरुह सन्निध, उत्तम अर्घ्य चढ़ाया।।
अचलमेरु के चौंतिस सुन्दर, रजताचल सरधानो।
तिनके चौंतिस जिनगृह के, जिनबिंब जजत अघ हानो।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

गंगनदी की नीर, तुम पद धारा मैं करूँ।
शांति करो जिनराज, चउसंघ को सबको सदा।।10।।

शांतये शांतिधारा।

कमल केतकी फूल, हर्षित मन से लायके।
जिनवर चरण चढ़ाय, सर्वसौख्य संपति बढ़े।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

अचलमेरु पूरब अपर, दक्षिण उत्तर जान।
चौंतिस रूपाचल उपरि, जिनगृह जजूँ महान।।1।।

इति श्रीअचलमेरुसम्बंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–अडिल्ल छन्द–

अचलमेरु के पूर्व, विदेह बखानिये।
सीता उत्तर 'कच्छा', देश सुमानिये।।

ताके मधि रूपाचल पे, जिनधाम को।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, तजूँ दुःख थान को।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसीतानदीउत्तरतटे कच्छादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुकच्छा' अपर धातकी माहिं है।
अचलमेरु के पूर्व, विदेहन माहिं है।।
मध्य रजतगिरि के, श्री जिनगृह को जजूँ।
अर्घ्य चढ़ाकर जिनप्रतिमा को नित भजूँ।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीउत्तरतटे सुकच्छादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपर धातकी मध्य, अचल सुरगिरि कहा।
ताके पूरब देश, 'महाकच्छा' लहा।।
ताके मधि रजताचल, पर जिनगृह सदा।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, भजूँ सुख संपदा ।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानद्युत्तरतटे महाकच्छादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'कच्छकावती' मध्य विजयार्ध है।
ताके जिनगृह को, नित पूजें भव्य हैं।।
तिनके श्री जिनबिंब, अकृत्रिम सोहते।
अर्घ्य चढ़ाय जजूँ, सुर नर मन मोहते।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानद्युत्तरतटे कच्छकावतीदेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आवर्ता' है देश, मध्य विजयार्ध है।
तापे नव कूटों में, इक विख्यात है।।
सिद्धकूट में जिनप्रतिमा को पूजते।
अर्घ्य चढ़ाय जजें, नर दुःख से छूटते।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानद्युत्तरतटे आवर्तादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'लांगलावर्ता', मधि रूपाद्रि है।
तापे सिद्धायतन, माहिं जिननाथ हैं।।
मुनिपति से नित पूज्य, अकृत्रिम चैत्य हैं।
अर्घ्य चढ़ाय जजूँ मैं, भवरुज[1] वैद्य हैं।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानद्युत्तरतटे लांगलावर्तादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कला' मध्य, रजतगिरि सोहना।
सिद्धकूट जिनगृह से, जन मन मोहना।।
तिनकी जिनप्रतिमा को, पूजूँ भाव से।
अर्घ्य चढ़ाय जजूँ मैं अतिशय भाव से।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानद्युत्तरतटे पुष्कलादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कलावती' मध्य विजयार्ध है।
तापे जिनगृह पूजत, भव्य कृतार्थ हैं।।
तिनकी मणिमय जिनप्रतिमा को मैं जजूँ।
अर्घ्य चढ़ाय सदा मनवच तन से भजूँ।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानद्युत्तरतटे पुष्कलावतीदेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–रोला छंद–

अपरधातकी द्वीप अचल सुरगिरि पूरब में।
देवारण्य समीप देश 'वत्सा' के मधि में।।
रजतगिरी पर सिद्धकूट में मणिमय प्रतिमा।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, उन्हीं की अतिशय महिमा।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे वत्सादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. भव रोग

अचलमेरु के पूर्व, 'सुवत्सा' देश विदेहा।
तिस के बीचोंबीच, रजतगिरि रमत सदेहा।।
नवकूटों में सिद्धकूट पर, मणिमय प्रतिमा।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, उन्हीं की अतिशय महिमा।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे सुवत्सादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु के पूर्व 'महावत्सा' वर देशा।
तिसके मधि विजयार्ध बसे नित तास खगेशा।।नवकूटों.।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे महावत्सादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'वत्सकावती' अचल सुरगिरि के पूर्वा।
रूपाचल ता मध्य, रमें तापे गंधर्वा।।नवकूटों.।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे वत्सकावतीदेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु के पूरब 'रम्या' देश कहाता।
ताके बीचोंबीच रजतगिरि शोभा पाता।।नवकूटों.।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे रम्यादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुरम्या' कहा, सुपूर्व अचलमेरु के।
ताके मध्य रजतगिरि, पे नव कूट सुनीके।।नवकूटों.।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे सुरम्यादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश कहा 'रमणीया' अपर धातकी खंड में।
तिनके बीच रजतनग, त्रय कटनी हैं उसमें।।नवकूटों.।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे रमणीयादेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुमंगलावती' अचलमेरू पूरब में।
तिसके मधि रूप्यादि तथा छहखंड उसी में।।

नव कूटों में सिद्धकूट पर मणिमय प्रतिमा।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, उन्हीं की अतिशय महिमा।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतानदीदक्षिणतटे मंगलावतीदेशस्थितविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–नरेन्द्र छंद–

अपरधातकी मेरु अचल के पश्चिम सीतोदा दायें।
भद्रसाल वन वेदी सन्निध, 'पद्मा' देश कहा जाये।।
तामध रूपाचल मनहारी, सिद्धकूट में जिनगेहा।
रोग शोक दुख दारिद नाशे, जो जन पूजें धर नेहा।।17।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मादेशस्थितविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु की अपर दिशा में, सीतोदा नदि के दायें।
देश 'सुपद्मा' शोभा पाता, उसमें छहों खंड गायें।।तामध.।।18।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे सुपद्मादेशस्थितविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपर धातकी खंड द्वीप में, सीतोदा के दक्षिण में।
देश 'महापद्मा' आरज खंड, कर्मभूमि शाश्वत उसमें।।तामध.।।19।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे महापद्मादेशस्थितविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु के पश्चिम दिश में, देश 'पद्मकावती' कहा।
तीर्थंकर श्रुतकेवलि गणपति, मुनिगण से नित पूर्ण रहा।।तामध.।।20।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मकावतीदेशस्थित-विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु के पश्चिम दिश में, 'शंखा' देश विदेह कहा।
रूपाचल है मध्य उसी के, तीन कटनियों सहित रहा।।

नव कूटों में नदि के सन्निध, सिद्धकूट पर जिनगेहा।
रोग शोक दुख दारिद नाशे, जो जन पूजें धर नेहा।।21।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे शंखादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु की पश्चिम दिश में, 'नलिना' देश कहा जाता।
ताके बीच रूप्यगिरि सुन्दर, विद्याधर के मन भाता।।नव.।।22।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे नलिनीदेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु की पश्चिम दिश में, 'कुमुद' देश अतिरम्य कहा।
ताके मध्य रजतगिरि सुन्दर, ऋषिगण विचरें नित्य वहां।।नव.।।23।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे कुमुददेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपर धातकी सीतोदा के, दायें 'सरिता' देश कहा।
ताके मध्य रूप्यगिरि है नित, इंद्रादिकगण रमें वहाँ।।नव.।।24।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीदक्षिणतटे सरितादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–रोला छंद–

'वप्रा' देश विदेह, अपर धातकी माहीं।
तामधि रजत गिरीन्द्र, सीतोदा तट ताहीं।।
सिद्धकूट जिनवेश्म, पूजूँ अर्घ्य चढ़ाई।
इक सौ अठ जिनबिंब, सब विध मंगल दाई।।25।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीउत्तरतटे वप्रादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुवप्रा' रम्य, अचलमेरु पर आगे।
रूप्याचल ता मध्य, नदि के निकट सुतापे।। सिद्धकूट.।।26।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीउत्तरतटे सुवप्रादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'महावप्रा' सुविदेह, अपर धातकी तामें।
रजताचल ता मध्य, तीन कटनियां तामें।।सिद्धकूट.।।27।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीउत्तरतटे महावप्रादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वप्रकावती' विदेह, ता मधि रजतगिरि है।
नवकूटों में एक, कूट सुसौख्य भरी है।।सिद्धकूट.।।28।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीउत्तरतटे वप्रकावतीदेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधा' देश विदेह, अपर धातकी द्वीपे।
विजयारध ता मध्य, नव कूटों से दीपे।।सिद्धकूट.।।29।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीउत्तरतटे गंधादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुगंधा' माहिं, रजतगिरी अमलाना।
मुकुट सदृश नवकूट, सुर नर रमत सुथाना।।सिद्धकूट.।।30।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीउत्तरतटे सुगंधादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'गंधिला' मध्य, रूपाचल अति सोहे।
तापे यतिगण नित्य, आतम समरस जोहे।।सिद्धकूट.।।31।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीउत्तरतटे गंधिलादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधमालिनी' देश, विजयारध ता बीचे।
तापे सुरगण आय, क्रीड़ा करत सुनीके।।सिद्धकूट.।।32।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिसीतोदानदीउत्तरतटे गंधमालिनीदेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–शंभुछंद–

शुभ अपर धातकी दक्षिण में इक 'भरत' सुक्षेत्र कहाता है।
गंगा सिन्धू नदि विजयारध इनसे छह खंड धराता है।।

रूपाचल के नवकूटों में श्री सिद्धकूट मन भाता है।
मैं पूजूं अर्घ्य चढ़ाकर के, वह आतम सिद्धि कराता है।।33।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिदक्षिणदिशि भरतक्षेत्रस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ अपर धातकी उत्तर में, 'ऐरावत' क्षेत्र सुहाना है।
रक्ता रक्तोदा रजतगिरी, इनमें छह खंड युत माना है।।
रजताचल के नव कूटों में, श्री सिद्धकूट मन भाता है।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ा करके, वह आतम सिद्धि कराता है।।34।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिउत्तरदिशि ऐरावतक्षेत्रस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य-हरिगीतिका छंद–

वर धातकी के मध्य सुरगिरि, अचलमेरू नाम है।
ताके सुपूरब अपर दिग्, सुविदेह बत्तिस मान हैं।।
इस मेरु के दक्षिण भरत, ऐरावता उत्तर दिशी।
इन सर्व के मधि रूप्यगिरि, पे जिनभवन हैं चौंतिसी।।

–दोहा–

ये चौंतिस जिनवेश्म[1] हैं, अकृत्रिम सुखधाम।
तिनके सब जिनबिंब को, नित प्रति करूँ प्रणाम।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालय-स्थसर्वजिनबिंबेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यः नमः।**

जयमाला

–सोरठा–

चौंतिस गिरि विजयार्ध, तिनके जिनमंदिर कहे।
गाऊँ अब जयमाल, श्रद्धा से जिननाथ की।।1।।

1. जिनमंदिर।

–त्रिभंगी छंद–

जय अचलमेरु पूरब विदेह, सूरि प्रभ जिन नदि उत्तर में।
सीता के दक्षिण जो विदेह, तीर्थेश विशालकीर्ति उसमें।।
जय मेरु अपर में नदि के दक्षिण, जिन तीर्थंकर वज्रधरा।
जय सीतोदा के उत्तर में हैं, चन्द्रानन जिनराज वरा।।2।।

राग–(हे दीनबन्धु श्रीपति...)

हे देव! तुम्हें होत कभी जन्म रोग ना।
स्व इष्ट का वियोग औ अनिष्ट योग ना।।
हे नाथ! मेरी पूरिये बस एक कामना।
ना होवे फेर फेर यहाँ भव में आवना।।3।।

आनंत्य काल नाथ! मैं निगोद में रहा।
फिर पंचपरावर्त में ही घूमता रहा।।हे नाथ.।।4।।

त्रैलोक्य में जो कर्म योग्य वर्गणा कही।
उन सबको ग्रहण कर चुका उच्छिष्ट सम रहीं।।हे नाथ.।।5।।

इस तीन लोक क्षेत्र में सर्वत्र ही भ्रमा।
ना एक भी प्रदेश बचा ना जहाँ जनमा।। हे नाथ.।।6।।

अवसर्पिणी उत्सर्पिणी के चक्र अनन्ते।
प्रत्येक को पूरा किया मैं जन्म मरण से।।हे नाथ.।।7।।

तिर्यंच की जघन्य आयु पाय मैं मरा।
जितने समय उसी में उतने ही जनम धरा।। हे नाथ.।।8।।

एकेक समय वृद्धि करके जन्मता रहा।
उत्कृष्ट आयु तीन पल्य तक भ्रमण रहा।। हे नाथ.।।9।।

नारक में जघन आयु दश हजार वर्ष की।
जितने समय थे उतनी बार हुआ नारकी।। हे नाथ.।।10।।

फिर आयु बढ़ाते हुए तैंतीस सागरा।
सप्तम नरक में उच्च आयु धार के मरा।। हे नाथ.।।11।।

नरगति में क्षुद्र आयु है अंतर्मुहूर्त की।
जितने समय इस आयु में उतने ही बार भी।। हे नाथ.।।12।।

लघु आयु को धरा मरा फिर इक समय बढ़ा।
ऐसे ही समय एक एक वृद्धि कर बढ़ा।। हे नाथ.।।13।।

उत्कृष्ट आयु तीन पल्य तक वहाँ गया।
इस विधि से मनुष योनि में मैं घूमता रहा।। हे नाथ.।।14।।

देवायु क्षुद्र दश हजार वर्ष की अरे।
जितने समय उसी में उतने सुर जनम धरे।। हे नाथ.।।15।।

लघु आयु से उतने जनम को पूर्ण जब किया।
तब आगे एक-एक समय बढ़ते ही गया ।। हे नाथ.।।16।।

जब तक हुई इकत्तीस सागरा तक स्थिती।
तब तक समय की वृद्धि से ली देव की गती।। हे नाथ.।।17।।

इस विध से चार गति में ही मैं पर्यटन किया।
हे नाथ! मैंने मुक्ति का तो मार्ग ना लिया।। हे नाथ.।।18।।

नाना विभाव भाव जो मिथ्यात्व सहित हैं।
मैं उन असंख्य लोकमात्र भाव धरे हैं ।। हे नाथ.।।19।।

ना कोई भाव शेष रहा जो नहीं किया।
बस एक मात्र जो अपूर्व भावना लिया।। हे नाथ.।।20।।

हे देव! आज शुद्ध आत्मतत्व जान के।
मैं सिद्ध के समान हूँ श्रद्धान ठान के।। हे नाथ.।।21।।

हे नाथ! तुम्हें पाय मैं निहाल हो गया।
बस तीन रत्न से ही मालामाल हो गया।। हे नाथ.।।22।।

मैं याचना करूँ मुझे वरदान दीजिये।
भव भव में रहे भक्ति तेरी ध्यान दीजिये।। हे नाथ.।।23।।

विदेह पूर्व अपर की जो आर्य भूमियाँ।
शाश्वत हैं कर्मभूमि वहाँ तीर्थभूमियाँ।।
हे नाथ! मेरी पूरिये बस एक कामना।
ना होवे फेर फेर यहाँ भव में आवना।।24।।

तीर्थंकरों के जन्म वहाँ नित्य ही रहते।
तीर्थेश चार आज भी हैं वहाँ विहरते।। हे नाथ.।।25।।

षट् काल भरत क्षेत्र ऐरावत विषे होते।
तीर्थेश चौथे काल में हो पाप को धोते।। हे नाथ.।।26।।

इन सबको मेरा बार बार नमस्कार हो।
यह नाव तेरी भक्ति से भवदधि से पार हो।। हे नाथ.।।27।।

–दोहा–

जो नर श्रद्धा भाव से, पढ़ें सुने जयमाल।
'ज्ञानमती' सुख सम्पदा, सो पावे तत्काल।।28।।

ॐ ह्रीं श्रीअचलमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्ध-कूटजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 29)

पश्चिम धातकीखण्ड भरतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना-नरेन्द्र छंद

पश्चिम द्वीपधातकी में वर, अचलमेरु नित सोहे।
उसके दक्षिण दिश में, सुंदर भरत क्षेत्र मन मोहे।।
वर्तमान चौबीस जिनेश्वर, चौथे युग में जानो।
आह्वानन कर पूजन करके, भव भव का दुःख हानो।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकर समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकर समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकर समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-स्रग्विणी छंद

कर्ममल धोयके आप निर्मल भये।
नीर ले आप पद कंज पूजत भये।।
तीर्थ करतार चौबीस को मैं जजूँ।
कर्मनिर्मूल कर स्वात्म अमृत चखूँ।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह संतापहर आप शीतल भये।
गंध से पूजते सवसंकट गये।।तीर्थ.।।2।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ अक्षय सुखों की निधी आप हो।
शालि के पुंज धर पूर्ण सुख प्राप्त हो।।तीर्थ.।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

काम को जीत कर आप शंकर बने।
पुष्प से पूज कर हम शिवंकर बनें।।तीर्थ.।।4।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भूख तृष्णादि बाधा विजेता तुम्हीं।
सर्व पकवान से पूज व्याधी हनी।।तीर्थ.।।5।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोष अज्ञान हर पूर्ण ज्योती धरें।
दीप से पूजते ज्ञान ज्योती भरें।।तीर्थ.।।6।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुक्लध्यानाग्नि से कर्म भस्मी किये।
धूप से पूजते स्वात्म शुद्धी किये।।तीर्थ.।।7।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्ण कृतकृत्य हो नाथ! इस लोक में।
मैं सदा पूजहूँ श्रेष्ठ फल से तुम्हें।।तीर्थ.।।8।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वसंपत्ति धर नाथ अनमोल हो।
अर्घ्य से पूजते स्वात्म कल्लोल हो।।तीर्थ.।।9।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-सोरठा-

कोटि सूर्य से प्रभ अधिक, अनुपम आतम तेज।
पुष्पांजलि कर पूजहूँ, कर्माञ्जन हर हेत।।1।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-दोहा-

'विश्वचंद्र' तीर्थेश नित, करते भवि मन बोध।
अर्घ्य चढ़कर मैं जजूँ, पाऊँ निज पर बोध।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविश्वचंद्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर 'कपिल' अतुल्य सुख, लक्ष्मी के भंडार।
सुर इंद्रों से वंद्य पर, जजूँ हनूँ संसार।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकपिलजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचपरावर्तन स्वयं, नाश भये शिव ईश।
'वृषभदेव' के पद कमल, नमूँ नमा निज शीश।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'प्रियतेज' जिनेन्द्र का, मानस्तंभ अनूप।
अस्सी कोशों तक करे, प्रभा जजूँ जिनरूप।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीप्रियतेजजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ 'प्रशमजिन' क्रोध से, रहित तथापी आप।
कर्मशत्रु संहारिया, जजूँ हरूँ भव ताप।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीप्रशमजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'विषमांग' जिनेन्द्र तुम, साम्य सुधारस लीन।
समरस अनुभव के लिये, मैं पूजूँ भवहीन।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविषमांगजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'चारितनाथ' जिनेश का, यथाख्यात चारित्र।
पंचमचारित हेतु मैं, जजूँ हरूँ दारिद्र।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीचारित्रनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'प्रभादित्य' जिननाथ की, प्रभा अलौकिक ख्यात।
कोटि सूर्य लज्जित हुये, पूजूँ मैं सुखदात।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीप्रभादित्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'मुंजकेश' जिन आपने, दशमुंडन का रूप।
बतलाया मुनिराज को, पूजूँ तिहुंजग भूप।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमुंजकेशजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नग्न दिगम्बर रूप तुम, 'वीतवास' अभिराम।
दुःखमूल परिग्रह कहा, नमूँ नमूँ शिवधाम।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवीतवासजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ 'सुराधिप' आप हैं, देवदेव के देव।
पूजूँ भक्ति समेत मैं, लहूँ सौख्य स्वयमेव।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुराधिपजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'दयानाथ' मुझ दीन पर, दया करो निज जान।
मोह दुष्ट से रक्ष कर, भरो भेद विज्ञान।।12।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीदयानाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'सहस्रभुज' आपको, सहस नेत्र से देख।
इंद्र तृप्त नहिं होत हैं, मैं पूजूँ पद देख।।13।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसहस्रभुजजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'जिनसिंह' महान तुम, कामहस्ति मद चूर।
पाई आतम शक्ति को, जजूँ सौख्य भर पूर।।14।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीजिनसिंहजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर 'रैवतनाथ' ने, घात घातिया कर्म।
भविजन को उपदेशिया, पूज लहूँ निज मर्म।।15।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीरैवतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'बाहु स्वामि' गुण के धनी, कीर्ति ध्वजा फहरंत।
जो पूजें तुम पद कमल, स्वातम सुख विलसंत।।16।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीबाहुस्वामिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर 'श्रीमालि' का, समवसरण अतिभव्य।
मैं पूजूँ अतिभाव से, बनूँ पूर्ण कृतकृत्य।।17।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीश्रीमालिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूज्य'अयोग' जिनेश तुम, मन वच काय निरोध।
शेष कर्म चकचूर कर, किया मृत्यु प्रतिरोध।।18।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअयोगजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभू 'अयोगीनाथ' ने, शुक्ल ध्यान को ध्याय।
निज आतम को शुद्धकर, अविचल शिवपद पाय।।19।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअयोगिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ 'कामरिपु' तीर्थकर, कामदेव मद नाश।
धर्मतीर्थ के चक्र को, धारा मुक्ति सनाथ।।20।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकामरिपुजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री जिनवर 'आरंभ' तुम, सब आरंभ सुत्याग।
निरारंभ परिग्रह रहित, कीना स्वपर विभाग।।21।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीआरम्भजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नेमिनाथ' भगवान तुम, नियम सार उपदेश।
रत्नत्रय द्वयविध प्रगट, बने पूर्ण परमेश।।22।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गर्भज्ञाति' जिनराज तुम, पुनर्जन्म से मुक्त।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय मैं, होऊँ कर्म विमुक्त।।23।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीगर्भज्ञातिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'एकार्जित' स्वामि को, जो पूजें धर भाव।
अतिशय पुण्य उपार्ज्य के, पावें चारित नाव।।24।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीएकार्जितजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य-रोला छंद

पंचमहाकल्याण, स्वामी शिवपथ नेता।
सकल तत्त्वविद् नाथ, कर्माचल के भेत्ता।।
अष्ट द्रव्य से नित्य, प्रभुपद पूज रचाऊँ।
चिच्चैतन्य स्वरूप, निज अनुभव सुख पाऊँ।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविश्वचंद्राद्येकार्जितस्वामिपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

-दोहा-

घाति चतुष्टय घात कर, प्रभु तुम हुए कृतार्थ।
नव केवल लब्धी रमा, रमणी किया सनाथ।1।।

चाल-हे दीनबन्धु श्रीपति

प्रभु दर्श मोहनीय को निर्मूल किया है।
सम्यक्त्व क्षायिकाख्य को परिपूर्ण किया है।।
चारित्रमोह का विनाश आपने किया।
क्षायिक चारित्र नाम यथाख्यात को लिया।।2।।

संपूर्ण ज्ञानावर्ण का जब आप क्षय किया।
कैवल्य ज्ञान से त्रिलोक जान सब लिया।।

प्रभु दर्शनावरण के क्षय से दर्श अनंता।
सब लोक औ अलोक को लखते हो तुरंता।।3।।

दानांतराय नाश के अनंत प्राणि को।
देते अभय उपदेश तुम कैवल्य दान जो।।
लाभांतराय का समस्त नाश जब किया।
क्षायिक अनंत लाभ का तब लाभ प्रभु लिया।।4।।

जिससे परमशुभ सूक्ष्म दिव्य नंत वर्गणा।
पुद्गलमयी प्रत्येक समय पावते घना।।
जिससे न कवलाहार हो फिर भी तनू रहे।
कुछ हीन पूर्वकोटि वर्ष तक टिका रहे।।5।।

भोगांतराय नाश के अतिशय सुभोग हैं।
सुरपुष्पवृष्टि गंध उदकवृष्टि शोभ हैं।।
पद के तले वर पद्म रचें देवगण सदा।
सौगंध्यशीत पवन आदि सौख्य शर्मदा।।6।।

उपभोग अंतराय का क्षय हो गया जभी।
प्रभु सातिशय उपभोग को भी पा लिया तभी।।
सिंहासनादि छत्र चमर तरु अशोक हैं।
सुरदुंदुभी भाचक्र दिव्यध्वनि मनोज्ञ हैं।।7।।

वीर्यान्तराय नाश से आनन्त्य वीर्य है।
होते न कभी श्रांत आप महावीर हैं।।
प्रभु चार घाति नाश के नव लब्धि पा लिया।
आनन्त्यज्ञान आदि चतुष्टय प्रमुख किया।।8।।

प्रभु आप सर्वशक्तिमान कीर्ति को सुना।
इस हेतु से ही आज यहाँ मैं दिया धरना।।
अब तारिये न तारिये यह आपकी मरजी।
बस 'ज्ञानमती' पूरिये यदि मानिये अरजी।।9।।

-दोहा-

गुण समुद्र के गुण रतन, को गिन पावे पार।
मात्र अल्पमती मैं पुनः, क्या कह सकूँ अवार।।10।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.30)

पश्चिम धातकीखण्ड ऐरावतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना-अडिल्ल छंद

अपरधातकी में, ऐरावत जानिये।
वर्तमान चौबीस, जिनेश्वर मानिये।।
तिनकी पूजा करूँ, भक्ति उर लायके।
शुद्ध बुद्ध परमातम गुण चित ध्यायके।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकर समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकर समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकर समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं चाल-नंदीश्वरपूजन की

सुरगंगा का शुचि नीर, तनुमल शुद्ध करे।
जिनचरण सरोरुह धार, मनमल शुद्ध करे।।
चौबीसों श्री जिनचंद, परमानंद सही।
जो पूजें धर आनंद, पावें स्वात्म मही।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कंचनद्रव सम शुचिगंध, तन की ताप हरे।
जिन चरण सरोरुह चर्च, भव संताप हरे।।चौबीसों.।।2।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शशि रश्मि सदृश सित धौत, तंदुल गंध भरे।
अक्षय आतम सुख हेत, तुम ढिग पुंज धरें।।चौबीसों.।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

अरविंद कुमुद मचकुंद, सुरभित मन भावें।
मदनारिजयी पदकंज, पूजत हरषावें।।चौबीसों.।।4।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घेवर बरफी पकवान, ताजे थाल भरे।
निज आत्मसुधारस हेतु, तुम ढिग भेंट धरें।।चौबीसों.।।5।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृतदीपक जगमग ज्योति, तुम अज्ञान हरे।
पूजत जिनचरण सरोज, मन की भ्रांति टरे।।चौबीसों.।।6।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु धूप सुंगध, खेवत धूम उड़े।
जिनपद की पंकज भक्ति करते सौख्य बढ़े।।चौबीसों.।।7।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

केला एला बादाम, उत्तम सरस लिये।
निज के अखंड सुख हेतु, तुम पद अर्प्य किये।।चौबीसों.।।8।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वसुविध शुभ अर्घ्य बनाय, तुम पद मैं पूजूँ।
रत्नत्रय निधि को पाय, संकट से छूटूँ।।चौबीसों.।।9।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-सोरठा-

त्रिभुवन गुरु भगवान्, अनुपम सुख की खान हो।
मैं पूजूँ धर ध्यान, सकल विघन घन को हरी।।1।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-नरेन्द्र छंद-

श्रीमान् 'साधित' तीर्थंकर को, सुरपतिगण मिल पूजें।
जो इनको नित वंदन करते, उनके अघरिपु धूजें।।
नव क्षायिक लब्धी हेतु मैं, प्रभु को अर्घ्य चढ़ाऊँ।
निज आतम अनुभव अमृत को, पीकर तृप्ती पाऊँ।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसाधितजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'जिन स्वामी' तीर्थंकर जग में, अनुपम हित उपदेशी।
प्रभु तुम नाम मंत्र ही जग में, रोग शोक दुख भेदी।।नव.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीजिनस्वामिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'स्तमितेन्द्र' जिनेन्द्र विश्व में, परमानंद प्रदाता।
निश्चल मन से जो नित पूजें, वे पावें सुख साता।।नव.।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीस्तमितेन्द्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अत्यानंदधाम' जिनवर जी, परमानंद सुख कर्ता।
सुर नर किन्नर सुरललनागण, पूजें भव दुख हर्ता।।नव.।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअत्यानंदजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'पुष्पोत्फुल्ल' नाथ इस जग में, भविजन मन हरसावें।
सबको आत्यंतिक सुख हेतु, धर्मामृत बरसावें।।नव.।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपुष्पोत्फुल्लजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'मँडित' जिनवर तीर्थंकर, श्री सर्वज्ञ कहाते।
शत इंद्रों से वंदित नितप्रति, जो पूजें सुख पाते।।नव.।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमंडितजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'प्रहितदेव' जिनदेव त्रिजगपति, धर्मचक्र के धारी।
दश धर्मों का करें प्रवर्तन, भवि जीवन हितकारी।।नव.।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीप्रहितदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'मदनसिद्ध' सब काम क्रोध मद, माया लोभ नशाके।
परम सुखास्पद धाम लिया है, आठों कर्म जलाके।।नव.।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमदनसिद्धजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'हसदिंद्र' जिनेश्वर सुखकर, विषय कषाय जयी हैं।
मुनिगण उनके पदपंकज भज, पावें मोक्षमही हैं।।नव.।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीहसदिंद्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'चंद्रपार्श्व' जिन अतुल चंद हैं, मुनिमनकुमुद विकासी।
जो नित पूजें भक्ति भाव से, पावें निजसुखराशी।।नव.।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीचंद्रपार्श्वजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अब्जबोध' तीर्थंकर जग में, भविजनकमल खिलाते।
जन्मजात बैरी प्राणी को, प्रेम पियूष पिलाते।।नव.।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअब्जबोधजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'जिनबल्लभ' तीर्थंकर मुक्ती, ललना के वर माने।
सम्यग्दृष्टि जन उनको भज, निज पर को पहचाने।।नव.।।12।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीजिनबल्लभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सुविभूतिक' तीर्थंकर भवहर, त्रिभुवन विभव सनाथा।
पूजक जन उनको वंदत हैं, नित्य नमाके माथा।।नव.।।13।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुविभूतिकजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव 'कुकुध्दास' तीर्थंकर, धर्मध्वजा फहराते।
जो जन पूजें भक्ति भाव से, आत्मसुधारस पाते।।
नव क्षायिक लब्धी हेतु मैं, प्रभु को अर्घ्य चढ़ाऊँ।
निज आतम अनुभव अमृत को, पीकर तृप्ती पाऊँ।।14।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकुकुध्दासजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नाथ सुवर्ण' परम तीर्थंकर, वर्ण रहित अशरीरी।
जो उनके पदपंकज पूजें, होवें चरम शरीरी।।नव.।।15।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुवर्णनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर 'हरिवासक' भवहर, भवि दुख शमन करे हैं।
हरि हर ब्रह्मा बुद्ध सूर्य शशि, तुम पद नमन करे हैं।।नव.।।16।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीहरिवासकजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'प्रियमित्र' भविक जनगण के, मित्र परम उपकारी।
सुर ललनायें भक्तिभाव से, गावें गुण अविकारी।।नव.।।17।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीप्रियमित्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भवहर 'धर्मदेव' तीर्थेश्वर, अविचल धाम विराजें।
सुर किन्नरियाँ वीणा लेकर, भक्ति के स्वर साजें।।नव.।।18।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधर्मदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'प्रियरत' तीर्थंकर लखते, तीन लोक त्रयकाला।
जो जन श्रद्धा से नित वंदे, उनके वे प्रतिपाला।।नव.।।19।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीप्रियरतजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नंदिनाथ' भवि को आनंदें, सुरगण उनको वंदे।
परम अतींद्रिय सौख्य पाय के, भोगें परमानंदें।।नव.।।20।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनंदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अश्वानीक' जिनेश्वर तुम हो, शम दम के अवतारी।
परमप्रशमसुख वे पा लेते, जो पूजें सुखकारी।।नव.।।21।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअश्वानीकजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'पूर्वनाथ' सुख लिया अपूरब, क्षपक श्रेणि पर चढ़के।
निजभक्तों को भी सुख अनुपम, देते हैं बढ़ चढ़के।।नव.।।22।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपूर्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'पार्श्वनाथ' सुख लिया अपूरब, क्षपक श्रेणि पर चढ़के।
निजभक्तों को भी सुख अनुपम, देते हैं बढ़ चढ़के।।नव.।।23।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'चित्रहृदय' जिन चित्र विचित्रित, पंच परावर्तन को।
कर समाप्त निज गुण विचित्र सब पाया वंदू उनको।।नव.।।24।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीचित्रहृदयजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य-अडिल्ल छंद

वर्तमान चौबीस जिनेश्वर को जजूँ।
श्रद्धा भक्ति समेत सतत उनको भजूँ।।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय नमाऊँ भाल मैं।
निज गुण संपति लहूँ तुरत खुशहाल मैं।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसाधितादिचित्रहृदयपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

-दोहा-

लोकोत्तर फलप्रद तुम्हीं, कल्पवृक्ष जिनदेव।
नमूँ नमूं तुमको सदा, करूँ भक्तिभर सेव।।1।।

-गीताछंद-

जय जय जिनेश्वर धर्म तीर्थेश्वर जगत विख्यात हो।
जय जय अखिल संपत्ति के भर्ता भविकजन नाथ हो।।
लोकांत में जा राजते त्रैलौक्य के चूड़ामणी।
जय जय सकल जग में तुम्हीं हो ख्यात प्रभु चिंतामणी।।2।।
एकेन्द्रियादिक योनियों में नाथ! मैं रुलता रहा।
चारों गती में ही अनादि से प्रभो! भ्रमता रहा।।

मैं द्रव्य क्षेत्र रु काल भव औ भाव परिवर्तन किये।
इनमें भ्रमण से ही अनंतानंत काल बिता दिये।।3।।
बहुजन्म संचित पुण्य से दुर्लभ मनुष योनी मिली।
हा! बालपन में जड़सदृश सज्ज्ञान कालिका ना खिली।।
बहुपुण्य के संयोग से प्रभु आपका दर्शन मिला।
बहिरात्मा औ अंतरात्मा का स्वयं परिचय मिला।।4।।
तुम सकल परमात्मा बने जब घातिया आहय हुये।
उत्तम अतीन्द्रिय सौख्य पा प्रत्यक्ष ज्ञानी तब हुये।।
फिर शेष कर्म विनाश करके निकल परमात्मा बने।
कल-देह वर्जित निकल अकल स्वरूप शुद्धात्मा बने।।5।।
हे नाथ! बहिरात्मा दशा को छोड़ अंतर आतमा।
होकर सतत ध्याऊँ तुम्हें हो जाऊँ मैं परमातमा।।
संसार का संसरण तज त्रिभुवन शिखर पे आ बसूँ।
निज के अनंतानंत गुणमणि पाय निज में ही बसूँ।।6।।

-दोहा-

तुम प्रसाद से भक्तगण, हो जाते भगवान्।
'ज्ञानमती' निज संपदा, पाकर के धनवान्।।7।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं.31)

पश्चिम धातकीखण्ड विहरमाण बीस तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना-गीता छंद

पश्चिम सुधातकि खंड में वर पूर्व अपर विदेह हैं।
उनमें सदा विहरें जिनेश्वर चार अनुपमदेह हैं।।
ये सूरिप्रभ व विशालकीर्ती वज्रधर चंद्रानना।
आह्वानन कर पूजूँ इन्हें होवे निजात्म प्रभावना।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितश्रीसूरिप्रभविशाल-कीर्ति-वज्रधरचंद्राननानामचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितश्रीसूरिप्रभविशाल-कीर्ति-वज्रधरचंद्राननानामचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितश्रीसूरिप्रभविशाल-कीर्ति-वज्रधरचंद्राननानामचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-चामर छंद

पवित्र नीर स्वर्ण भृंग में भराय लाइया।
जिनेन्द्र पाद पद्म में त्रिधार को कराइया।।
अनंत ज्ञान दर्श सौख्य वीर्य हेतु अर्चना।
जिनेन्द्र! आश पूरिये करूँ अनंत वंदना।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितश्रीसूरिप्रभ-आदि-विहरमाण-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

पवित्र गंध लेय नाथ पाद पद्म चर्चिया।
समस्त ताप नाश हेतु आप चर्ण अर्चिया।।अनंत।।2।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितश्रीसूरिप्रभ-आदि-विहरमाण-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अखंड श्वेत शालि पुंज आपको चढ़ाय के।
अखंड संपदा मिले प्रभो तुम्हें मनाय के।।
अनंत ज्ञान दर्श सौख्य वीर्य हेतु अर्चना।
जिनेन्द्र! आश पूरिये करूँ अनंत वंदना।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितश्रीसूरिप्रभ-आदि-विहरमाण-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

गुलाब श्वेत लाल पीत वर्ण के लिये।
जिनेंद्र आप चर्ण में चढ़ाय मोद पा लिये।।अनंत।।4।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितश्रीसूरिप्रभ-आदि-विहरमाण-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सुहाल खीर मोदकादि थाल में भराइया।
प्रभो! तुम्हें चढ़ाय भूख व्याधि को नशाइया।।अनंत।।5।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितश्रीसूरिप्रभ-आदि-विहरमाण-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कूपर ज्योति ज्वाल के जिनेन्द्र आरती करूँ।
समस्त चित्त मोह नाश ज्ञान भारती भरूँ।।अनंत।।6।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितश्रीसूरिप्रभ-आदि-विहरमाण-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुगंध धूप अग्नि पात्र के सुखेयके अबे।
समस्त पाप पुंज को जलाय दो प्रभो अबे।।अनंत।।7।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितश्रीसूरिप्रभ-आदि-विहरमाण-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

इलायची बदाम द्राक्ष आपको चढ़ावते।
शिवांगना वरें स्वयं समस्त सौख्य धावते।।अनंत।।8।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितश्रीसूरिप्रभ-आदि-विहरमाण-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलादि अर्घ में सुवर्ण पुष्प को मिलाय हूँ।
निजात्म तीन रत्न हेतु आपको चढ़ाय हूँ।।अनंत।।9।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थितश्रीसूरिप्रभ-आदि-विहरमाण-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

नाथ! पादपंकेज, जल से त्रयधारा करूँ।
अतिशय शांती हेत, शांतीधारा विश्व में।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार गुलाब, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।
मिले आत्म सुख लाभ, जिनपद पंकज पूजते।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-सोरठा-

विहरमाण जिनराज, समवसरण में राजते।
पुष्पांजलि कर आज, जजूँ जिनेश्वर को यहाँ।।1।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-शंभु छंद-

धातकी खंड में अचलमेरु, पूरब विदेह सीता उत्तर।
विजया नगरी में नागराज, पितु माता भद्रा लोकोत्तर।।
रवि चिन्ह धरे प्रभु 'सूरिप्रभ' त्रिभुवन भर में उद्योत करें।
नित आत्म रसास्वादी साधू, वंदे हम भी जयघोष करें।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थित-विहरमाण-श्रीसूरिप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम धातकी में अचलमेरु, पूरब विदेह नदि के दक्षिण।
परिपुंडरीकिणी पिता विजय, माता विजया उत्तम लक्षण।।

शशि चिन्ह धरें भवतम हरते, तीर्थेश 'विशालकीर्ति' मानें।
सुर किन्नरगण स्तुति करते, उन प्रभु की हम पूजा ठानें।।2।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थित-विहरमाण-श्रीविशालकीर्तिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अचलमेरु पश्चिमविदेह, सीतोदा के दक्षिण तट में।
है पुरी सुसीमा पिता पद्मरथ, सरस्वती माँ से जन्में।।
है चिन्ह शंख प्रभु लोकोत्तम, तीर्थेश 'वज्रधर' कहलाते।
परमाल्हादक सुख के भोक्ता, तुम पूजन कर हम गुण गाते।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थित-विहरमाण-श्रीवज्रधरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अचलमेरु पश्चिम विदेह, सीतोदा नदि के उत्तर में।
वर पुंडरीकिणी नगरी के, नृप की रानी से प्रभु जन्में।।
तुम वृषभचिन्ह है 'चंद्रानन', मेरा मन कुमुद खिला दीजे।
मैं भक्ती से तुम पद पूजूँ, मेरा निज राज्य दिला दीजे।।4।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थित-विहरमाण-श्रीचंद्राननजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-दोहा-

तीर्थंकर जग के पिता, विहरमाण सुर वंद्य।
पूजूँ अर्घ चढ़ाय के, हरूँ सकल जग द्वंद्व।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थसूरिप्रभ-आदिविहरमाण-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

-रोला छंद-

जयो जयो जिनराज, तुम महिमा मुनि गावें।
जयो जयो जिनराज, गणधर भी शिर नावें।।
जयो जयो जिनराज, गुण अनंत के स्वामी।
जयो जयो जिनराज, त्रिभुवन अंतर्यामी।।1।।

ज्ञानावरण विनाश, ज्ञान अनंत प्रकाशा।
दर्शनावरण विनाश, केवल दर्श प्रकाशा।।
सर्व मोह को चूर, सौख्य अनंत विकासा।
अंतराय कर दूर, वीर्य अनंत विकासा।।2।।

हे प्रभु आप अनंत, चार चतुष्टय धारी।
शत इंद्रों से वंद्य, त्रिभुवन जन मनहारी।।
नाथ! आप की जाप, कर्म कलंक विनाशे।
जपूँ जपूँ दिनरात, अनुपम सौख्य प्रकाशे।।3।।

अहो! जगत के सूर्य, मुनिमन कमल विकासी।
अहो जगत के चंद्र, भविजन कुमुद विकासी।।
अहो भविकजन बंधु, तुम सम नहिं हितकारी।
त्रिभुवन जन अभिवंद्य, नमूँ नमूँ सुखकारी।।4।।

तीनलोक के आप, एक सुमंगल कर्त्ता।
हरो सकल दुख ताप, सब सुख मंगल कर्त्ता।।
तीन लोक में आप, सर्वोत्तम मुनि मानें।
हरो हरो भव ताप, लोकोत्तम जग जाने।।5।।

तीन लोक में आप, सबके लिये शरण हो।
नमूँ नमूँ नत माथ, मेरे आप शरण हो।।
सर्व उपद्रव दूर करके सब सुख दीजे।
'ज्ञानमती ' सुख पूर, मिले कृपा अब कीजे।।6।।

-घत्ता-

जय जय जिनराजा, जग सिरताजा, निजहितकाजा तुमहिं जजूँ।
प्रभु निज पद दीजे, ढील न कीजे, अरज सुनीजे नित्य भजूँ।।7।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रविहरमाणश्रीसूरिप्रभविशाल-कीर्तिवज्रधरचंद्राननानामचतुस्तीर्थंरेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 32)

पश्चिम धातकीखण्ड नवदेवता पूजा

अथ स्थापना-नरेन्द्र छंद

अपरधातकी खंड द्वीप में भरतैरावत सुंदर।
पूर्व अपर दिश सोलह सोलह देश विदेह मनोहर।।
जिनवर मुनिगण जिनवृष आगम, जिनप्रतिमा जिनमंदिर।
आह्वानन कर जजूँ यहाँ पर, जजते इन्हें पुरंदर।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-चाल नंदीश्वर पूजा

सरयू नदि का जल स्वच्छ, जिनपद धार करूँ।
अघ धुलकर मन हो स्वच्छ, निजपद प्राप्त करूँ।।
नव देवों को नित अर्च, नवनिधि रिद्धि भरूँ।
नव नव प्रतिभा को सर्ज, अभिनव सिद्धि वरूँ।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीरी केशर पीत, प्रभु पद चर्च करूँ।
मिल जावे निजगुण शीत, श्रद्धा भक्ति धरूँ।।नव.।।2।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शशि किरणों सम अति श्वेत, अक्षय से पूजूँ।
निज के अखंडगुण हेतु, जिनपद नित पूजूँ।।
नव देवों को नित अर्च, नवनिधि रिद्धि भरूँ।
नव नव प्रतिभा को सर्ज, अभिनव सिद्धि वरूँ।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

बेला मचकुंद गुलाब, पुष्प चढ़ाऊँ मैं।
हो जावे निज सुख लाभ, आप रिझाऊँ मैं।।नव.।।4।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

खुरमा रसगुल्ला मिष्ट, ताजे लाऊँ मैं।
हो क्षुधा वेदनी नष्ट, आप चढ़ाऊँ मैं।।नव.।।5।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर ज्योति उद्योत, आरति करते ही।
होवे निजज्ञान प्रद्योत, घट तम विनशे ही।।नव.।।6।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

वर धूप सुगंधित खेय, कर्म जलाऊँ मैं।
जिनवर पद पंकज सेय, सौख्य बढ़ाऊँ मैं।।नव.।।7।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

एला केला बादाम, पिस्ता भर थाली।
अर्पण करते निष्काम, मनरथ नहिं खाली।।नव.।।8।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फल वर अर्घ चढ़ाय, जिनवर गुण गाऊँ।
रत्नत्रय निधि को पाय, अतिशय सुख पाऊँ।।नव.।।9।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

यमुना सरिता नीर, प्रभु चरणों धारा करूँ।
मिले निजात्म समीर, शांतीधारा शं करें।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुरभित खिले सरोज, जिनचरणों अर्पण करूँ।
निर्मद करूँ मनोज, पाऊँ निजसुख संपदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-दोहा-

परम पुरुष परमात्मा, परमानंद निमग्न।
पुष्पांजलि कर पूजहूँ, करूँ मोह अरिभग्न।।1।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-चौपाई-

अचलमेरु के पूरब दिश, 'कच्छा' देश विदेह प्रसिद्ध।
जिनवर मुनिगण जिनवर धाम, जिनवर बिंब जजूँ अभिराम।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहकच्छादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुकच्छा' में छहखंड, नदी तरफ में आरजखंड।
जिनवर मुनिगण जिनवर धाम, जिनवर बिंब जजूँ अभिराम।।2।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहसुकच्छादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महाकच्छा' अतिशायि, आर्यखंड है सब सुखदायि।
जिनवर मुनिगण जिनवर धाम, जिनवर बिंब जजूँ अभिराम।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहमहाकच्छादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'कच्छकावती' अनूप, आर्यखंड दर्पण चिद्रूप।
जिनवर मुनिगण जिनवर धाम, जिनवर बिंब जजूँ अभिराम।।4।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहकच्छकावतीदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आवर्ता' विदेह छहखंड, आर्यखंड में सौख्य अमंद।
जिनवर मुनिगण जिनवर धाम, जिनवर बिंब जजूँ अभिराम।।5।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहआवर्तीदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'लांगलावर्ता' सिद्ध, आर्यखंड में रिद्धि समृद्ध।
जिनवर मुनिगण जिनवर धाम, जिनवर बिंब जजूँ अभिराम।।6।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहलांगलावर्तादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कला' में छहखंड, आर्यखंड में है भविवृंद।
जिनवर मुनिगण जिनवर धाम, जिनवर बिंब जजूँ अभिराम।।7।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहपुष्कलादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कलावती' महान, वहाँ करें भविजन कल्यान।
जिनवर मुनिगण जिनवर धाम, जिनवर बिंब जजूँ अभिराम।।8।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहपुष्कलावतीदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतानदि के दक्षिण दिक्क, 'वत्सा' देह विदेह समृद्ध।
जिनवर मुनिगण जिनवर धाम, जिनवर बिंब जजूँ अभिराम।।9।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहवत्सादेशस्थित-आर्यखंडे-अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुवत्सा' अतिशय रम्य, भविजन भजें आत्मसुख साम्य।
जिनवर मुनिगण जिनवर धाम, जिनवर बिंब जजूँ अभिराम।।10।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहसुवत्सादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महावत्सा' सुखधाम, आर्यखंड में धर्म ललाम।
जिनवर मुनिगण जिनवर धाम, जिनवर बिंब जजूँ अभिराम।।11।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहमहावत्सादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'वत्सकावती' विशाल, आर्यखंड में भव्य खुशाल।
जिनवर मुनिगण जिनवर धाम, जिनवर बिंब जजूँ अभिराम।।12।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहवत्सकावतीदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रम्या' देश विदेह महान, चारणऋद्धि विहरें गुणखान।
जिनवर मुनिगण जिनवर धाम, जिनवर बिंब जजूँ अभिराम।।13।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहरम्यादेशस्थितआर्यखंडे-अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुरम्या' में छहखंड, शाश्वत कर्म भूमि सुख कंद।
जिनवर मुनिगण जिनवर धाम, जिनवर बिंब जजूँ अभिराम।।14।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहसुरम्यादेशस्थितआर्यखंडे-अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रमणीया' वर देश महान, भविजन भरते पुण्य निधान।
जिनवर मुनिगण जिनवर धाम, जिनवर बिंब जजूँ अभिराम।।15।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहरमणीयादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'मंगलावती' अनूप, भविजन बने स्वात्मसुख भूप।
जिनवर मुनिगण जिनवर धाम, जिनवर बिंब जजूँ अभिराम।।16।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहमंगलावतीदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-नरेन्द्र छंद-

अचल मेरु के पश्चिम दिश में, सीतोदा दक्षिण में।
भद्रसाल वेदी के पासे, 'पद्मा' देश अपर में।।
जिनवर मुनिगण जिनवृष, जिनश्रुत, जिनप्रतिमा जिनआलय।
नमूँ नमूँ नित भक्ति भाव से, पाऊँ सौख्यसुधालय।।17।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहपद्मादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुपद्मा' के छहखंडों, मध्य आर्यखंड सोहे।
भविजन नित्य धर्म धारण कर, सुरगण का मन मोहें।।जिनवर.।।18।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहसुपद्मादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महापद्मा' सुखकारी, आर्यखंड की सुषमा।
धर्म धुरंधर भव्य रहें नित, गावें जिनगुण महिमा।।जिनवर.।।19।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहमहापद्मादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पद्मकावती' मनोहर, आर्यखंड की महिमा।
श्रावक नित्य क्रिया षट् पालें, गावें जिनगुण गरिमा।।जिनवर.।।20।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहपद्मकावतीदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शंखा' देश विदेह अपर में, तीर्थंकर अवतरते।
देव इंद्र मिल करें महोत्सव, मुनिगण का मन हरते।।जिनवर.।।21।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहशंखादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिना' देश विदेह सुहाना, कमलनयन अप्सरियां।
जिनगुण गातीं नर्तन करतीं, भक्ति करें किन्नरियां।।जिनवर.।।22।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहनलिनादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कुमदा' देश विदेह मनोहर, जिनवृष सूर्य चमकता।
मुनि मन कमल खिलाता नित प्रति, मोह अंधेरा हरता।।जिनवर.।।23।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहकुमदादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सरित्' के मध्य, आर्यखंड में मानव।
असि मषि आदि षट् क्रिया से, हरें पापरिपु दानव।।जिनवर.।।24।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहसरित्देशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूतारण्य वेदिका सन्निध, सीतोदा उत्तर में।
'वप्रा' देश विदेह शोभता, आर्यखंड शुभ उसमें।।
जिनवर मुनिगण जिनवृष, जिनश्रुत, जिनप्रतिमा जिनआलय।
नमूँ नमूँ नित भक्ति भाव से, पाऊँ सौख्यसुधालय।।25।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहवप्रादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुवप्रा' छहखंडों में, आर्यखंड अतिसोहे।
ईति भीति परचक्र अनावृष्टि अतिवृष्टि न होहें।।जिनवर.।।26।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहसुवप्रादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महावप्रा' गुणशाली, वहाँ गुणीजन बसते।
मुनिगण चक्री हलधर आदि, आर्यखंड में रमते।।जिनवर.।।27।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहमहावप्रादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'वप्रकावती' सुहाता, आर्यखंड मनहारी।
नदियों के कलकलरव से वहाँ, रमें सर्व नर नारी।।जिनवर.।।28।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहवप्राकावतीदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधा' देश विदेह वहाँ पर, गुणगण पुष्प खिले हैं।
मानव जन की कीर्ति सुगंधी, सब दिश में फैले हैं।।जिनवर.।।29।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहगंधादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुगंधा' छह खंडों में, आर्यखंड सुरभित है।
तीर्थंकर की पुण्य सुगंधी, त्रिभुवन में प्रसरित है।।जिनवर.।।30।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहसुगंधादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'गंधिला' महा मनोहर, आर्यखंड की शोभा।
तीर्थंकर का अतिशय देखत, सुरगण का मन लोभा।।जिनवर.।।31।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहगंधिलादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधमालिनी' देश वहाँ पर, आर्यखंड अतिशोभे।
मुनिमन कमल विकासी भास्कर, सहस किरण से शोभे।।जिनवर.।।32।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहगंधमालिनीदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-चौपाई छंद-

अपर धातकी दक्षिण दिश में, गंगा सिंधू नदियाँ इसमें।
आर्यखंड में जिनवर होते, जिनगृह वंदत अघमल धोते।।33।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिदक्षिणदिक्भरतक्षेत्रार्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर दिश में ऐरावत है, छह खंड मध्य आर्यखंड शुभ है।
जिनवर मुनिगण जिनप्रतिमायें, पूजत ही सब पाप पलायें।।34।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधि-उत्तरदिक्भरतक्षेत्रार्यखंडे अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य-गीता छंद

इस अपर धातकि खंड में शुभ कर्मभू चौंतीस हैं।
सबमें कहे छह खंड उनके मध्य आरज खंड है।।
तीर्थेश चक्री मुनिवरा जिनधर्म जिनश्रुत आदि हैं।
जिनबिंब जिनगृह को जजूँ ये सर्व सुखकर ख्यात हैं।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितअर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस अपर धातकि द्वीप में नित आर्यिकायें विहरतीं।
ये धर्ममूर्ति महाव्रतों से शुद्ध मानों सरस्वती।।
वर ज्ञान ध्यान तपो निरत इक साटिका परिग्रह धरें।
इनको जजें हम भक्ति से ये भक्त पातक परिहरें।।2।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितसर्वार्यिकाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस द्वीप में तीर्थंकरों के गर्भ जन्मोत्सव हुये।
तप ज्ञान मोक्ष कल्याण के थल पूज्य पावन हो गये।
गणधर मुनीश्वर के वहाँ तक ज्ञान मुक्ति स्थान जो।
मैं पूजहूँ नित अर्घ ले इन तीर्थक्षेत्र स्थान को।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थिततीर्थंकरगणधरमुनिगणपंचकल्याणकादितीर्थक्षेत्रेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

-गीता छंद-

जय जय जिनेश्वरदेव तीर्थंकर प्रभू जिन केवली।
जय सिद्ध परमेष्ठी सकल गणधर गुरू श्रुतकेवली।।

जय जय गुरू आचार्यवर उवझाय साधूगण मुनी।
जिनधर्म जिनआगम जिनेश्वर बिंब जिनगृह सुख खनी।।1।।
नव देवता जयशील हैं ये कर्मभूमी में रहें।
ये सर्व मंगल लोक में उत्तम शरणमय हो रहे।।
इनकी करूँ मैं वंदना कर जोड़ नाऊँ शीश को।
इनकी करूँ मैं अर्चना शत शत झुकाऊँ शीश को।।2।।

जिनकेवली को रोग हो आहार भी लेकर जियें।
श्रुत में कहा है मांस भक्षण साधुगण निर्लज्ज हैं।।
जिनधर्म के कुछ गुण नहीं सुर देविगण बलि मांगते।
इस विध कहें जो मूढ़ जन वे दर्शमोहनि बांधते।।3।।

जो केवली श्रुत संघ को जिनधर्म सुर को दोष दें।
वे मोहनी दर्शन अशुभ को बांध कर दुख भोगते।।
ये सब असत् अपवाद हैं हे नाथ! मैं इनसे बचूँ।
सम्यक्त्व निधि रक्षित करूँ हे नाथ! भवदुख से बचूँ।।4।।

क्रोधादि अशुभ कषाय का उद्रेक जब अति तीव्र हो।
चारित्र मोहनि बंध हो नहिं चरित धारण शक्ति हो।।
चारित्र मोह अनादि से हे नाथ! निर्बल कर रहा।
मेरी अनंती आत्म शक्ति छीनकर दुख दे रहा।।5।।

करके कृपा हे नाथ! अब चारित्र मोह निवारिये।
चारित्र संयम पूर्ण हो भवसिंधु से अब तारिये।।
प्रभु आप ही पतवार हो मुझ नाव भवदधि में फंसी।
अब हाथ का अवलंब दो ना देर कीजे मैं दुखी।।6।।

इन आठ कर्मों में अधिक बलवान एकहि मोह है।
इसके अठाइस भेद हैं बहु भेद सर्व असंख्य हैं।।
ये मोहनी ही स्थिती अनुभाग बंध करे सदा।
ये मोहनी संसार का है मूल कारण दुःखदा।।7।।

हे नाथ! ऐसी शक्ति दो मैं सर्व ममता छोड़ दूँ।
निजदेह से भी होउं निर्मम सर्व परिग्रह छोड़ दूँ।।
निज आत्म से ममता करूँ निज आत्म की चर्चा करूँ।
निज आत्म में तल्लीन हो जिन आत्म की अर्चा करूँ।।8।।

ऐसा समय तुरतहिं मिले, निजध्यान के सुस्थिर बनूँ।
उपसर्ग परिषह हों भले, निज तत्त्व में ही थिर बनूँ।।
निज आत्म अनुभव रस पियूँ, परमात्म पद की प्राप्ति हो।
निज 'ज्ञानमति' ज्योती दिपे, जो तीन लोक प्रकाशि हो।।9।।

-दोहा-

जब तक नहिं परमात्म पद, तुम पद में मन लीन।
एक घड़ी भी नहिं हटे, बनूँ आत्म लवलीन।।10।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हंत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 33)

पुष्करार्ध द्वीप संबंधि इष्वाकार जिनालय पूजा

-अथ स्थापना-नरेन्द्र छन्द-

पुष्करार्ध में दक्षिण-उत्तर, इष्वाकार गिरी हैं।
कनकवर्णमय शाश्वत अनुपम, धारें अतुलसिरी हैं।।
इन दोनों पे दो जिनमंदिर, पूजत पाप पलानो।
आह्वानन कर जिनप्रतिमा का, विधिवत् पूजन ठानो।।1।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधिदक्षिणोत्तर-इष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधिदक्षिणोत्तर-इष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधिदक्षिणोत्तर-इष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

-अथाष्टकं-नरेन्द्र छंद-

तीन लोक भर जाय प्रभो मैं, इतना नीर पिया है।
फिर भी प्यास बुझी नहिं किंचित्, यातें शरण लिया है।।
हृदय ताप उपशांती हेतू, शीतल जल ले आया।
इष्वाकार अचल जिनमंदिर, पूजत मन हरषाया।।1।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधि-इष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह राग की दावानल में, चिर से झुलस रहा हूँ।
किंचित् मन की दाह मिटी नहिं, अब तुम पास खड़ा हूँ।।
रागदाह हर शीतल हेतू, हरि चंदन घिस लाया।
इष्वाकार अचल जिनमंदिर, पूजत मन हरषाया।।2।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधि-इष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्म मरण के बहु दुःखों से, अब मैं श्रांत हुआ हूँ।
अन्य नहीं निरवारण समरथ, यातें पूज रहा हूँ।।
अक्षय अव्यय निजपद हेतू, उज्ज्वल अक्षत लाया।
इष्वाकार अचल जिनमंदिर, पूजत मन हरषाया।।3।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधि-इष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मकरध्वज[1] ने चिर भव-भव में, मुझको अधिक छला है।
मारविजेता[2] तुमको सुनके, ली अब शरण भला है।।
काममोहयमत्रिपुरारी[3] हर[4]! विविध कुसुम मैं लाया।
इष्वाकार अचल जिनमंदिर, पूजत मन हरषाया।।4।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधि-इष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

संख्यातीते तीन लोक सम, अन्न प्रभो! खाया मैं।
फिर भी भूख अगनि नहिं बुझती, इससे अकुलाया मैं।।
स्वातम अमृत स्वाद हेतु मैं, बहुविध व्यंजन लाया।
इष्वाकार अचल जिनमंदिर, पूजत मन हरषाया।।5।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधि-इष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुविध दीपक विद्युत आदी, तम हरने हित लाया।
फिर भी अंतर अंधकार को, दूर नहीं कर पाया।।
स्वपर भेद विज्ञान हेतु मैं, मणिदीपक ले आया।।
इष्वाकार अचल जिनमंदिर, पूजत मन हरषाया।।6।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधि-इष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट कर्म दुःख देते जग में, इनको शीघ्र जलाऊँ।
धूप सुगंधित अग्निपात्र में, श्रद्धा सहित जराऊँ।।

1. कामदेव। 2. कामदेव विजयी। 3. कामदेव, मोह और मृत्यु ये तीन पुर सदृश है इनको जीतने वाले। 4. महादेव।

आतम शुद्धी करने हेतू, पूजन करने आया।
इष्वाकार अचल जिनमंदिर, पूजत मन हरषाया।।7।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधि-इष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुविध सरस मधुर फल खाये, फिर भी तृप्ति न पाई।
आत्मसुधारस अनुभव पाने, प्रभु तुम पूज रचाई।।
ज्ञानानन्द स्वभावी हो तुम, यह सुन शरणे आया।
इष्वाकार अचल जिनमंदिर, पूजत मन हरषाया।।8।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधि-इष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत आदी ले, अर्घ्य सजाकर लाया।
नित्य निरंजन चिच्चिन्तामणि, रत्न कमाने आया।।
तुमसे हे प्रभु अखिल ज्ञान निधि, प्राप्त हेतु मैं आया।
इष्वाकार अचल जिनमंदिर, पूजत मन हरषाया।।9।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधि-इष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

कनक भृंग में मिष्ट जल, सुरगंगा[1] समश्वेत।
जिनपद धारा देत ही, भव भव को जल देत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

वकुल सरोरुह मालती, पुष्प सुगंधित लाय।
पुष्पांजलि अर्पण करूं, सुख संपति अधिकाय।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

1. आकाशगंगा।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

–सोरठा–

शाश्वत जिन आगार[1], मणिरत्नों से परिणमें।
प्रभु करिये भवपार, नितप्रति अर्चूं भाव से।।1।।

इति पुष्करार्धद्वीपसंबंधिइष्वाकारगिरिस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–रोला छन्द–

पुष्करार्ध वर द्वीप, ताके दक्षिण माहीं।
इष्वाकार गिरीश, अद्भुत अतुल कहाहीं।।
तापे सिद्ध सुकूट, जिनप्रतिमा अविकारी।
पूजूँ अर्घ्य बनाय, जल फल से भर थारी।।1।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधिदक्षिणदिशि इष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृतिय द्वीप के माहिं, उत्तर दिश में जानो।
इष्वाकार नगेश, अनुपम रूप बखानो।।
तापे जिनवरगेह, सिद्धकूट मनहारी।
पूजूँ अर्घ्य बनाय, जल फल से भर थारी।।2।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधिउत्तरदिशि इष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

कंचनदेह सुकांति, दो पर्वत मन मोहे।
चार चार हैं कूट, सुर किन्नर गृह सोहें।।
उनमें इक इक सिद्ध-कूट जिनालय दो हैं।
पूरण अर्घ्य चढ़ाय, पूजूँ शिवसुख हो हैं।।1।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधिदक्षिणोत्तरदिशायां सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

1. भवन।

*जाप्य–*ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।

जयमाला

–दोहा–

अशरण के प्रभु तुम शरण, निराधार आधार।
तुम गुणगणमणि मालिका, लेउं कंठ में धार।।1।।

–तोटक छंद–

जय इष्वाकार जिनेश गृहं, जय मुक्तिवधू परमेश गृहं।
जय नाथ त्रिलोकपती तुम हो, जय नाथ अनंत गुणांबुधि हो।।1।।

जय साधु मनोम्बुज भानु समं, जय भव्य कुमोदनि चन्द्र समं।
जय भक्त मनोरथ पूरक हो, जय सर्व दुखांकर चूरक हो।।2।।

जय कल्पतरू सम सौख्य भरो, जय वांछित वस्तु प्रदान करो।
जय संसृति रोग महौषधि हो, जय तारक भव्य भवोदधि हो।।3।।

जय तुंग चतुःशत योजन है, जय विस्तृत सहज सुयोजन है।
जय लम्बे आठ सु लाख कहे, द्वय शैल सुवर्णिम कांति लहे।।4।।

मुनिवृंद वहाँ नित भक्ति करें, निज आतम बोध विकास करें।
खगवृंद वहाँ नित आवत हैं, जिनपाद सरोरुह ध्यावत हैं।।5।।

सुर अप्सरियाँ बहु नृत्य करें, गुण गावत चित्त उमंग भरें।
करताल मृदंग बजावत हैं, निज कर्म कलंक नशावत हैं।।6।।

द्वय पे जिनमंदिर स्वर्णमयी, जिनबिम्ब मणीमय रत्नमयी।
छवि सौम्य विराग विदोष कही, द्युति से रवि रश्मि लजे सबही।।7।।

जिनपाद सरोरुह शर्ण लिया, प्रभु अर्ज सुनो हमरी कृपया।
यमपाश विपाश हरो प्रभुजी, सब भाव विभाव हरो प्रभुजी।।8।।

हम आश धरें तुम पाद प्रभो, अब वेग उबार भवोदधि सो।
मुझ 'ज्ञानमती' सुख शांति करो, जिनदेव! सभी गुण पूर्ण करो।।9।।

–घत्ता–

जय इष्वाकारा, पर्वत सारा, जय जिनमंदिर नित्य नमूँ।
जय जिनगुण गाके, कर्म नशाके, नित्य निरंजन सिद्ध बनूँ।।10।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधि-इष्वाकारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थ-सर्वजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 34)

मंदरमेरु पूजा

अथ स्थापना-नरेन्द्र छंद

पुष्करार्ध वर द्वीप पूर्व में मंदिर मेरू सोहे।
उसके सोलह जिनमंदिर में जिनप्रतिमा मन मोहे।।
भक्ति भाव से आह्वानन कर पूजा पाठ रचाऊँ।
भव भव के संताप नाश कर स्वात्म सुख को पाऊँ।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपस्थमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपस्थमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपस्थमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-भुजंगप्रयात छंद

पयोराशि को नीर झारी भराऊँ।
प्रभो के पदाम्भोज धारा कराऊँ।।
जजूँ मेरु मंदर जिनालय अभी मैं।
न पाऊँ पुनर्जन्म को फिर अभी मैं।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपस्थमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलय चंदनादी सुवासीत लाऊँ।
प्रभो आपके पाद में नित चढ़ाऊँ।।जजूँ.।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपस्थमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

धवल शालि तंदुल लिया थाल भरके।
चढ़ाऊँ तुम्हें पुंज सद्भाव धर के।।जजूँ.।।3।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपस्थमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जुही केतकी पुष्पमाला बनाऊँ।
महा काम शत्रुंजयी को चढ़ाऊँ।।
जजूँ मेरु मंदर जिनालय अभी मैं।
न पाऊँ पुनर्जन्म को फिर अभी मैं।।4।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपस्थमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

कलाकंद लाडू इमरती बनाके।
क्षुधा व्याधि नाशूँ प्रभू को चढ़ाके।।जजूँ.।।5।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपस्थमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिखा दीप की लौ उद्योतकारी।
तुम्हें पूजते ज्ञान प्रद्योत भारी।।जजूँ.।।6।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपस्थमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगनि पात्र में धूप खेऊँ सदा मैं।
करम की भसम को उड़ाऊँ मुदा मैं।।जजूँ.।।7।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपस्थमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अनन्नास अमरूद अमृत फलों से।
जजूँ मैं बचूं कर्म अरि के छलों से।।जजूँ.।।8।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपस्थमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलादी वसू द्रव्य से अर्घ करके।
चढ़ाऊँ तुम्हें सर्वदा प्रीति धर के।।जजूँ.।।9।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपस्थमंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

परम शांति के हेतु, शांती धारा मैं करूँ।
सकल विश्व में शांति, सकल संघ में हो सदा।।10।।

शांतये शांतिधारा।

चंपक हरसिंगार, पुष्प सुगंधित अर्पिते।
होवे निज सुखसार, दुख दारिद्र पलायते।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-दोहा-

मंदरमेरू जिनभवन, सर्वसौख्य भंडार।
पुष्पांजली चढ़ाय के, जजूँ नित्य चित धार।।1।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-दोहा-

पुष्करार्धवर पूर्व में, मंदर मेरु महान।
भद्रसाल पूरब दिशी, जजूँ जिनालय आन।।1।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भद्रसाल दक्षिण दिशा, जिनगृह शाश्वत सिद्ध।
तिन में जिनवर बिंब को, जजूँ मिले सब सिद्ध।।2।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितदक्षिणदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भद्रसाल में अपरदिश, जिन मंदिर सुखकार।
जिन प्रतिमा को पूजहूँ, मिले भवोदधि पार।।3।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितपश्चिमदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदरमेरु भूमि में, भद्रसाल वन जान।
उत्तर दिश जिन भवन को, जजूँ मोक्ष हित मान।।4।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थित-उत्तरदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-गीता छंद-

वर द्वीप पुष्कर अर्ध में, मंदरगिरी कनकाभ है।
जिनवर न्हवन से पूज्य उत्तम, सुरगिरी विख्यात है।।
नंदन विपिन[1] पूरब दिशी, जिनगेह अनुपम मणिमयी।
पूजूँ सकल जिनबिंब को, जो वीतरागी छविमयी।।5।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज और पर का करें अंतर, जो निरंतर मुनिवरा।
विचरण करें जिनवंदना हित, वे सदैव दिगम्बरा।।
नंदन विपिन दक्षिण दिशी, जिनगेह अनुमप मणिमयी।
पूजूँ सकल जिनबिंब को, जो वीतरागी छविमयी।।6।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितदक्षिणदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यमराज का भय नाशते, सब कामना पूरी करें।
शुद्धात्म रस प्यासे मुनी की, भावना पूरी करें।।
नंदन विपिन पश्चिम दिशी, जिनगेह अनुमप मणिमयी।
पूजूँ सकल जिनबिंब को, जो वीतरागी छविमयी।।7।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितपश्चिमदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भव राग आग बुझावने, तुम भक्ति गंगा नीर है।
स्थान जो इसमें करें, उनकी हरे सब पीर हैं।।
नंदन विपिन उत्तर दिशी, जिनगेह अनुमप मणिमयी।
पूजूँ सकल जिनबिंब को, जो वीतरागी छविमयी।।8।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितउत्तरदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-रोला छंद-

मंदरमेरु माहिं, वन सौमनस सुहावे।
पूरब दिश जिनगेह, पूजत सौख्य उपाये।।

1. वन।

राग द्वेष अर मोह, शत्रु महा दुख देते।
प्रभु तुम भक्ति प्रसाद, तुरत नशें त्रय एते।।9।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु चतुर्थ महान, वन सौमनस बखाना।
दक्षिण दिश जिनधाम, मृत्युंजय परधाना।।रागद्वेष.।।10।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितदक्षिणदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदरमेरु अनूप, वन सौमनस विशाला।
पश्चिम दिश जिनवेश्म, देता सौख्य रसाला।।रागद्वेष.।।11।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितपश्चिमदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदरमेरु माहिं, वन सौमनस कहा है।
उत्तर दिश जिनधाम, शाश्वत शोभ रहा है।।रागद्वेष.।।12।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थित-उत्तरदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाराच छंद-(चाल-पार्श्वनाथ देव सेव....)

पुष्करार्ध पूर्व खंड द्वीप में सुमेरु है।
तास पांडुके वने सुपूर्व दिक्क में रहे।।
जैन वेश्म शासता जिनेश बिंब सोहने।
पूजहूँ चढ़ाय अर्घ्य कर्म कीच धोवने।।13।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदराद्रि पांडुकेसु दक्षिणी दिशा तहां।
साधु वृंद वंदना जिनेश की करे वहाँ।।जैन वेश्म.।।14।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितदक्षिणदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु जो चतुर्थ है चतुर्थ रम्य जो वनी।
पश्चिमी दिशी सुकल्प वृक्ष पंक्तियां घनी।।
जैन वेश्म शासता जिनेश बिंब सोहने।
पूजहूँ चढ़ाय अर्घ्य कर्म कीच धोवने।।15।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितपश्चिमदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदराचले चतुर्थ जो वनी प्रसिद्ध है।
उत्तरी दिशा तहां मनोज्ञता विशिष्ट है।।जैन वेश्म.।।16।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थित-उत्तरदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य-सोरठा

सोलह श्री जिनधाम, मंदर मेरु में कहे।
जिनवर बिंब महान, अर्चूं पूरण अर्घ्य ले।।1।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्रह सौ अठबीस, जिनवर प्रतिमा नित नमूँ।
नित्य नमाऊँ शीश, पूरण अर्घ चढ़ाय के।।2।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसंबंधिषोडशजिनालयमध्यविराजमानएकसहस्रसप्त-शतअष्टाविंशतिजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदर मेरु विदिक्क, पांडुक आदि शिला कहीं।
नमूँ नमूँ प्रत्येक, जिन अभिषेक पवित्र हैं।।3।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुपांडुकवनविदिक्स्थितपांडुकादिशिलाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

-दोहा-

जय जय मंदर मेरु नित, जय जय श्री जिनदेव।
गाऊँ तुम जयमालिका, करो विघन घन छेव।।1।।

शेर छंद-चाल-हे दीन बंधु....

जैवंत मूर्तिमंत मेरु मंदराचला।
जैवंत कीर्तिमंत जैन बिंब अविचला।।
जैवंत ये अनंतकाल तक भि रहेंगे।
जैवंत मुझ अनंत सुख निमित्त बनेंगे।।1।।

जै भद्रसाल आदि चार वन के आलया।
जै जै जिनेन्द्र मूर्तियों से वे शिवालया।।
जै नाममंत्र भी उन्हों का सारभूत है।
जो नित्य जपे वो लखे आतम स्वरूप हैं।।2।।

भव भव में दुख सहे अनंत काल तक यहाँ।
ना जाने कितने काल मैं निगोद में रहा।।
तिर्यंचगती में असंख्य वेदना सही।
नरकों के दुःख को कहें तो पार ही नहीं।।3।।

मानुष गती में आयके भी सौख्य न पाया।
नाना प्रकार व्याधियों ने खूब सताया।।
अनिष्ट योग इष्ट का वियोग तब हुआ।
तब आर्त रौद्र ध्यान बार बार कर मुआ।।4।।

संक्लेश से मर बार बार जन्म को धरा।
आनंत्य बार गर्भवास दुःख को भरा।।
मैं देव भी हुआ यदी सम्यक्त्व बिन रहा।
संक्लेश से मरा पुनः एकेन्द्रिय हो गया।।5।।

हे नाथ सभी दुःख से मैं ऊब चुका हूँ।
अब आपकी शरणागती में आके रुका हूँ।।
करके कृपा स्वहाथ का अवलंब दीजिये।
मुझ 'ज्ञानमती' को प्रभो! अनंत[1] कीजिये।।6।।

-घत्ता छंद-

गुणगण मणिमाला, परम रसाला, जो भविजन निज कंठ धरें।
वे भव दावानल, शीघ्र शमन कर, मुक्ति रमा को स्वयं वरें।।7।।

ॐ ह्रीं मंदरमेरुसम्बन्धिषोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

1. अंत रहित।

(पूजा नं. 35)

मन्दरमेरु संबंधि षट् कुलाचल जिनालय पूजा

-अथ स्थापना-गीता छंद-

मंदरगिरी के दक्षिणोत्तर, हिमवनादिक नग कहे।
षट् कुलगिरी ये सासते, जिन पे जिनालय षट् रहें।।
सुर नर असुर खगपति सदा, अर्चन करें वंदन करें।
शक्ती नहीं वहं जाय की, इत थाप के अर्चन करें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

-अथाष्टकं-(चाल-हे दीनबन्धु)-

गंगा नदी को नीर हेम पात्र में भरूं।
जैनेन्द्र पाद अर्च सकल ताप को हरूँ।।
हिमवान आदि छह गिरी पे जैनभवन हैं।
जो पूजते हैं उनके करें पाप शमन हैं।।1।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरदिक्षट्कुलाचलस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीरि केशरादि में कर्पूर मिलाया।
जिन पादपद्म चर्च मोह ताप मिटाया।।हिमवान.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरदिक्षट्कुलाचलस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

कामोद श्याम जीरकादि शालि लाइये।
वर पुंज को रचाय, मोक्ष सौख्य पाइये।।

हिमवान आदि छह गिरी पे जैन भवन हैं।
जो पूजते हैं उनके करें पाप शमन हैं।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरदिक्षट्कुलाचलस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मचकुंद मालती गुलाब पुष्प लाइये।
श्रृंगारहारमारजयी[1] को चढ़ाइये।।हिमवान.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरदिक्षट्कुलाचलस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

बादाम कलाकन्द मोतीचूर के लाडू।
जिनेश को चढ़ाय क्षुधा व्याधि को काटूं।।हिमवान.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरदिक्षट्कुलाचलस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रदीप वर्धमान[2] ज्योति जगमगात है।
तुम पूजते निजात्म ज्योति जगमगात है।।हिमवान.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरदिक्षट्कुलाचलस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरु कर्पूर मिश्र धूप खेइये।
आतम गुणों की गंध हेतु नाथ सेइये।।हिमवान .।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरदिक्षट्कुलाचलस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

एला बदाम पुंग[3] चिरोंजी मंगाइया।
निज संपदा के हेतु, नाथ को चढ़ाइया।।हिमवान.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरदिक्षट्कुलाचलस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीरादि अर्घ्य लेय रत्नथाल में भरूं।
अक्षयनिधी के हेतु नाथ अर्चना करूँ।।

1. कामदेव। 2. बढ़ती हुई। 3. सुपारी।

हिमवान आदि छह गिरी पे जैनभवन हैं।
जो पूजते हैं उनके करें पाप शमन हैं।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिदक्षिणोत्तरदिक्षट्कुलाचलस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

पद्म सरोवर नीर, सुवरण झारी में भरूं।
जिनपद धारा देय, भव वारिधि से उत्तरूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।।

सुवरण पुष्प मंगाय, प्रभु चरणन अर्पण करूं।
वर्ण गंध रस फास, विरहित निज पद को वरूं।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-दोहा-

पूरब पुष्कर द्वीप के, षट् कुलगिरि अभिराम।
पृथक् पृथक् पूजा निमित, पुन पुन करूं प्रणाम।।1।।

इति श्रीमंदरमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–शम्भु छंद–

पूरब पुष्कर में हिमवन गिरि, स्वर्णाभ अतुल अभिरामा है।
ग्यारह कूटों में अनुपम इक, जिन सिद्धकूट परधाना है।।
तामध्य पदम द्रह बीच कमल, श्रीदेवी परिकर सह राजे।
शाश्वत जिनगृह जिनबिम्ब जजूँ, सब मोह करम अरिदल भाजें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिहिमवन्पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रजताभ महाहिमवन गिरि पे, हैं आठ कूट जन मनहारी।
अनुपम इक सिद्धायतन मध्य जिनगेह अकृत्रिम सुखकारी।।

द्रह महापद्म मधि कमल बीच, ही देवी परिकर सह राजें।
शाश्वत जिनगृह जिनबिंब जजूँ, सब मोह करम अरिदल भाजें।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिमहाहिमवन्पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निषधाचल तप्त कनक कांती, द्रह कहा तिगिंछ कमल बीचे।
धृतिदेवी रहती परिकर सह, नवकूटों से अद्भुत दीखें।।
सुर सिद्धकूट वंदें नत हो, मणि मुकुटों से जिनपद चूमें।
हम अर्घ्य चढ़ाकर नित पूजें, फिर भव वन में न कभी घूमें।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनिषधपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नीलाचल छवि वैडूर्यमणी द्रह केसरि मध्य कमल तामें।
कीर्ती देवी रहती उसमें इक सिद्धकूट नव कूटों में।।
मुनि वैरागी भी जा करके, जिनगृह को वंदन करते हैं।
जो पूजें उनको भक्ति सहित, वे भव वारिधि से तरते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनीलपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रुक्मी पर्वत चांदी सम है, द्रह पुंडरीक में कमल खिले।
बुद्धी देवी परिवार सहित, उसमें रहती मनकमल खिले।।
नित आठ कूट में सिद्धकूट, जिनभवन अनूपम तामें हैं।
हम पूजें अर्घ्य चढ़ा करके, निरुपम सुखसंपति तामें हैं।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिरूक्मीपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिखरी कुलगिरि कंचन छविमय, ग्यारह कूटों युत शोभे हैं।
महपुंडरीक द्रह के भीतर, पंकज पर लक्ष्मी शोभे हैं।।
पर्वत पर है इक सिद्धकूट, उसमें जिनमंदिर रतनों का।
जिनबिंब जजें हम अर्घ्य लिये, जिनभक्ती है भवदधि नौका।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिशिखरिपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिंबेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-दोहा-

षट् कुल पर्वत के कहे, षट् जिनमंदिर जान।
पूजूँ पूरण अर्घ्य ले, मिले भेद विज्ञान।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य-*ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।

जयमाला

-सोरठा-

शाश्वत जिन आगार[1], पृथ्वीकायिक परिणमें।
उनमें जिनवर बिंब, तिनके गुण कीर्तन करूं।।1।।

चाल-(हे दीनबन्धु)

जयवंत षट् हिमवंत आदि कुलगिरी सारे।
जैनेन्द्र मूर्तिमंत अतुल धन धरें प्यारे।।
श्री सिद्धकूट जैनसद्म को प्रणाम है।
आनन्द कन्द श्रीजिनन्द को प्रणाम है।।1।।

हिमवन गिरी सुचार लाख[2] मील का ऊँचा।
नग है महाहिमवंत मील आठ लख ऊँचा।।
निषधाद्रि सोल लाख मील तुंग कहा है।
नीलाद्रि में इसी तरह प्रमाण रहा है।।2।।

इन पर्वतों की तलहटी में स्वर्ण वेदियां।
उन बीच के उद्यान में हैं वृक्ष पंक्तियाँ।।
तोरण कनकमयी हैं देव के भवन बने।
वापी तलाब कुंड कूट आदि हैं घने।।3।।

---

1. भवन । 2. (100 योजन× 4000 मील= 400000)।

षट् पर्वतों पे दोय तरफ वेदियां बनीं।
उन मध्य रम्य उपवनों की पंक्तियां घनीं।।
इन उपरि ग्यारे आठ नौ नौ आठ ग्यार हैं।
क्रम से कहे ये कूट जो कि रत्नसार[1] हैं।।4।।

नग बीच द्रहों में असंख्य कमल खिले हैं।
जो पृथ्वीकायिक मणिमयी सौगंध्य मिले हैं।।
श्री आदि देवियां वहां परिवार समेता।
जिनमात की सेवा के लिये बद्ध हमेशा।।5।।

प्रत्येक कमल में सुरों के महल बने हैं।
प्रत्येक में जिनधाम सदा पाप हने हैं।।
षट् पर्वतों पे एक एक सिद्धकूट हैं।
उनमें जिनेशगेह में जैनेन्द्र रूप हैं।।6।।

सौ इन्द्र सपरिवार विभव साथ ले आवें।
दर्शन करें वंदन करें आनन्द से भावें।।
पूजा करें संगीत औ नर्तन करें सदा।
इन्द्राणियां औ अप्सरा भी नृत्यतीं मुदा।।7।।

खग नारियां खेचर वहां पे भक्ति करे हैं।
भूचर[2] मनुज विद्या के बल से दर्श करे हैं।।
चारण ऋषी आकाशगमन कर वहां जाते।
जिनवंदना करें निजात्म ध्यान लगाते।।8।।

कलिकाल में जाने की वहां शक्ति नहीं है।
अतएव मैं परोक्ष में ही भक्ति लही है।।
हे नाथ! कृपादृष्टि मुझ पे आज कीजिये।
संसार महासिंधु से उबार लीजिये।।9।।

1. रत्नों से बनें। 2. कर्मभूमियां ।

–घत्ता–

जय जय जिनराजा, धर्म जिहाजा, जो तुम गुण कीर्तन करहीं।
सो 'ज्ञानमती' वर शिवलक्ष्मी धर, झट जिनगुण संपति वरहीं।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिंबेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 36)

मन्दरमेरु संबंधि चार गजदंत जिनालय पूजा

-अथ स्थापना-अडिल्ल छंद-

मंदरमेरू विदिश चार गजदंत हैं।
तापे शाश्वत जैनभवन विलसंत हैं।।
इन्द्रादिक नित आय, झुकाते माथ को।
आह्वानन कर पूजूँ, शिवतिय नाथ को।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टकं-रोला छंद-(अहो जगत गुरुदेव)

रेवा नदी सुतीर्थ, सलिल भर कंचन झारी।
जन्म जरा अरु मरण, ताप नाशो गुणधारी।।
मंदरमेरू पास, चार गजदंत कहे हैं।
ताके जिनगृह पूज, समकित रतन गहे हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिरि घनसार, सौरभ अति गुंजारे।
रोग शोक हर नाथ, पदयुग जजूँ तुम्हारे।।मंदरमेरू.।।2।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्र किरण समश्वेत, तंदुल धोय चढ़ाए।
रत्नत्रय निधि हेतु, पूजूँ मन हरषाए।।मंदरमेरू.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

परिजात अरविंद, कुंद प्रसून चढ़ाऊँ।
मकरकेतुजितनाथ[1], हरष हरष गुण गाऊं।।मंदरमेरू.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत शर्कर क्षीरान्न, घेवर मोदक लीने।
शक्ति अनंत जिनेश, तुम पद पूजन कीने।।मंदरमेरू.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हेमपात्र घृतपूर, ज्योति उद्योत करे है।
मन मंदिर का मोह, नाश उद्योत करे है।।मंदरमेरू.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर तगर वर धूप, चहुँदिश धूम करे है।
कर्म कलंक जलाय, क्षण में सौख्य भरे है।।मंदरमेरू.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जंभीरी नारंग, दाडिम आम्र मंगाये।
उत्तम शिवफल हेत, जिनवर चरण चढ़ाये।।मंदरमेरू.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंधाक्षत फूल, नेवज दीप जलाके।
धूप फलों से पूर्ण, अर्घ्य चढ़ाऊं आके।।मंदरमेरु.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1.कामदेव

–सोरठा–

क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल ले भृंग में।
श्री जिनचरण सरोज, धारा देते भव मिटे।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुरतरु के सुम लेय, प्रभु पद में अर्पण करूँ।
कामदेव मद नाश, पाऊँ आनंद धाम मैं।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

पूर्व सुपुष्कर द्वीप, चारों में विदिशा कहे।
चार गिरी गजदंत, तिनके जिनमंदिर जजूं।।1।।

इति श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतपर्वतस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–अडिल्ल छंद–

मंदरमेरु महान विदिश आग्नेय है।
हस्तिदंत सौमनस रजत छवि देय है।।
मीनकेतु जितनाथ जिनालय मणिमयी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय चहूँ गुण शिवमयी।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधि-आग्नेयदिक्स्थितसौमनसगजदन्तपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरगिरि चौथे भूमि विदिश नैऋत्य है।
विद्युत्प्रभ गजदंत कनक छवि देय है।।
मीनकेतु जितनाथ जिनालय मणिमयी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय चहूँ गुण शिवमयी।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनैऋत्यविदिक्स्थितविद्युत्प्रभगजदन्तसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गंधमादनाचल वायव्य विदिश कहा।
कनक कांतिमय अकृत्रिम अनुपम रहा।।

मीनकेतु जितनाथ जिनालय मणिमयी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय चहूँ गुण शिवमयी।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिवायव्यविदिक्स्थितगंधमादनगजदन्तपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माल्यवंत गजदंत, विदिश ईशान में।
नीलमणी सम कांति, कूट नव तास में।।
मीनकेतु जितनाथ जिनालय मणिमयी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, चहूँ गुण शिवमयी।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधि-ईशानविदिक्स्थितमाल्यवंतगजदन्तपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

चार कोण में चार कहे गजदंत जो।
हस्तिदंत सम लम्बे हैं अन्वर्थ जो।।
उनपे श्री जिनमंदिर अनूपम राजते।
जिनप्रतिमा को पूजत ही दुख भाजते।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुर्विदिक्स्थितचतुर्गजदन्तपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परिपुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

–सोरठा–

गजदंतों के चार, जिनचैत्यालय शासते।
तिनकी गुण मणिमाल, मैं अब गाऊँ भाव से।।1।।

–रोला छंद–

जय जय मंदरमेरु, विदिशा के गजदंता।
जय जय श्री जिनगेह, भव भव पाप हरंता।।

जय जय सौमनसाद्रि, विद्युत्प्रभ अभिरामा।
निषधाचल अर मेरु संस्पर्शे शुभ नामा।।2।।

गंधमादनो नाम, माल्यवान अभिरामा।
नीलगिरी अर मेरु संस्पर्शे गुण धामा।।
प्रथम तृतिय पर सात, कूट मनोहर सोहें।
दुतिय चतुर्थे माहिं, नव नव हैं मन मोहे।।3।।

मेरु निकट के कूट सिद्धायतन कहे हैं।
उनमें श्री जिनगेह, शाश्वत सिद्ध रहे हैं।।
शेष कूट पे रम्य, देवों के गृह माने।
देवगृहों के मध्य, श्री जिनभवन बखाने।।4।।

नग के दोनों ओर, रम्य तलहटी जानो।
उपवन वेदी छोर, मणिमय तोरण मानो।।
गिरि ऊपर दो ओर, वेदी उपवन सोहें।
वापी तरुवर पंक्ति, सुरनर के मन मोहें।।5।।

चारण ऋषिगण आय, जिन स्तवन करे हैं।
आतम ध्यान लगाय, अन्तर्द्वंद हरे हैं।।
अकृत्रिम जिनबिंब, वंदे पाप नशावें।
परमान्द पियूष, पीकर निज सुख पावें।।6।।

स्वर्गपुरी से नित्य, सुर-सुरललना आके।
वीणा आदि बजाय, नृत्य करें गुण गाके।।
विद्याधर नर नार, जिनवर स्तुति पढ़े हैं।
मोह महारिपु मार, शिव सोपान चढ़े हैं।।7।।

वीतराग जिनमूर्ति निरख निरख हरषाते ।
भविजन तुम गुण गाय निज मन कमल खिलाते।।
ग्रन्थों के विस्तार, तुम गुणमाल कहें हैं।
गणधर भी गुण रत्न, गणत न पार लहें हैं।।8।।

इस विध सुन तुम कीर्ति, मैंने शरण लही है।
जो कुछ हो कर्त्तव्य, करिये आज वही है।।
हे प्रभु! तुमको छोड़ और नहीं मुझ स्वामी।
जो चाहो सो नाथ! करिये अंतरयामी।।9।।

मुझको कुछ ना चाह, एक यही अब चाहूं।
सब संकल्प विकल्प, तज तेरे गुण गाऊँ।।
हे देवों के देव, करो कामना पूरी।
तुम त्रिभुवन के नाथ! रहे न बात अधूरी ।।10।।

–घत्ता–

तुम गुणमणिमाला, जगप्रतिपाला, जो भविजन कंठे धरहीं।
सो 'ज्ञानमती' ले, निज संपति ले, तत्क्षण भवसागर तरहीं।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिविदिक्स्थितचतुर्गजदंतपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 37)

मन्दरमेरु सम्बन्धी पुष्करतरु शाल्मलितरु जिनालय पूजा

-अथ स्थापना-नरेन्द्र छंद-

पुष्करतरु से अंकित पुष्कर, द्वीप जु सार्थक नामा।
सुरगिरि के दक्षिण-उत्तर में, भोगभूमि अभिरामा।।
उत्तरकुरु ईशान कोण में, पद्मवृक्ष मन मोहे।
देवकुरू नैऋत में शाल्मलि, तरु पे सुरगण सोहें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टकं-लक्ष्मीधरा छंद-(नाथ तेरे कभी होते...)

तीर्थवारी महास्वच्छ झारी भरी।
तीर्थकर्तार के पाद धारा करी।।
दो तरू शाख पे दोय जिनमंदिरा।
पूजते जो उन्हें लेय शिव इंदिरा[1]।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णद्रव के सदृश कुंकुमादी लिये।
राग की दाह को मेटने पूजिये।।दो तरू.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

1. लक्ष्मी।

सोम[1] रश्मी सदृश श्वेत अक्षत लिये।
आत्मनिधि पावने पुंज रचना किये।।
दो तरू शाख पे दोय जिनमंदिरा।
पूजते जो उन्हें लेय शिव इंदिरा।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कुन्द मंदार मल्ली सुमन ले लिये।
मारहर[2] नाथ पादाब्ज में अर्पिये।।दो तरू.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यःपुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

गूझिया औ तिकोने भरे थाल में।
भूख व्याधी हरो नाथ पूजूँ तुम्हें।।दो तरू.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रज्वलित दीप लेके करूं आरती।
चित्त में हो प्रगट ज्ञान की भारती।।दो तरू.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप दशगंध ले अग्नि में खेवते।
मोह शत्रू जले आप पद सेवते।।दो तरू.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम नींबू नरंगी सु अंगूर हैं।
पूज लें आत्मपीयूष को पूर हैं।।दो तरू.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

1. चन्द्रकिरण। 2. कामहर।

नीर गंधादि ले स्वर्ण थाली भरूँ।
नाथ पद पूजते सर्वसिद्धी वरूं।।दो तरू.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षशाल्मलीवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

यमुना सरिता नीर, कंचन झारी में भरा।
जिनपद धारा देत, शांति करो सब लोक में।।10।।

शांतये शांतिधारा।

वकुल कमल अरविंद, सुरभित फूलों को चुने।
जिनपद पंकज अर्प्य, यश सौरभ चहुँ दिश भ्रमे।।11।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

पृथ्वीकायिक वृक्ष, सर्वरत्नमय सोहने।
ताके श्रीजिन सद्म, मन वच तन से पूजहूँ।।1।।

इति श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छंद–

मंदरमेरू से इशान में पद्मवृक्ष[1] रत्नों का।
उसकी उत्तर शाखा पे है, जिनमंदिर भव नौका।।
जलगंधादिक अर्घ्य सजाकर, नितप्रति पूज रचाऊँ।
परम अतीन्द्रिय ज्ञान सौख्यमय, अविचल पद को पाऊँ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिईशानकोणे पुष्करवृक्षस्थितजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरगिरि के नैऋत्य कोण में, शाल्मली तरु जानो।
उसकी दक्षिण शाखा पर, जिनगेह अकृत्रिम मानो।।

1. जम्बूद्वीपपण्णत्ति पृ.192 पर पुष्कर वृक्ष को पद्मवृक्ष कहा है। यथा-"दीण्हं वरपउरूक्खाणं"।

जलगंधादिक अर्घ्य सजाकर, नितप्रति पूज रचाऊँ।
परम अतीन्द्रिय ज्ञान सौख्यमय, अविचल पद को पाऊँ।।।2।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिनैऋत्यकोणे शाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य-दोहा–

पुष्कर शाल्मलि वृक्ष के, अमित[1] वृक्ष परिवार।
तिन सबके जिनगेह को, पूजूँ भवदधि तार।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

–सोरठा–

स्वयंसिद्ध जिनराज, अकृत्रिम जिनगेह में।
पूर्ण करो मम आश, गाऊँ अब जयमालिका।।1।।

तोटक छंद (चाल–जय केवल भानु....)

जय पुष्कर वृक्ष महाफलदं, जय शाल्मलि वृक्ष महासुखदं।
जय वृक्ष तने जिनमंदिर को, जय सिद्धिवधू प्रिय जिनवर को।।2।।

तरु में मरकतमणि नीलम के, कर्केतन स्वर्णमयी पत्ते।
बहुवर्ण रतनमय अंकुर हैं, रतनों के फल औ पुष्प कहे।।3।।

तरु सिद्ध अनादि अनंत कहे, तहं चामर किंकणि आदि रहें।
अति तुंग सघन द्रुम शोभ रहे, शुभ वायु चले हिलते तरु हैं।।4।।

इन शाख विषे जिनमंदिर जी, महिमा वरणंत पुरंदर[2] जी।
सुर इंद्र नरेंद्र फणीन्द्र सदा, गुण गावत भक्ति भरे सु मुदा।।5।।

1. अगणित। 2. इन्द्र।

जिननाथ! त्रिलोक पिता तुम हो, तुमही भववारिधि तारक हो।
बिन कारण बंधु तुम्हीं प्रभु हो, तिहुंलोक तने तुमही गुरु हो।।6।।
तुम शंकर विष्णु विधी तुम ही, तुम बुद्ध हितंकर ब्रह्म तुम्हीं।
भुवनैक शिरोमणि देव तुम्हीं, शरणागत रक्षक देव तुम्हीं।।7।।
तुम ज्योति चिदंबर मुक्तिपती, तुम पूर्ण दिगंबर विश्वपती।
सरवारथसिद्धि विधायक हो, समता परमामृत दायक हो।।8।।
तुम भक्त मनोरथ पूर्ण करें, क्षण में निज संपति पूर्ण भरें।
यमराज महाभट चूर्ण करें, वर 'ज्ञानमती' सुख तूर्ण वरें।।9।।

–घत्ता–

तुम जिनवर भास्कर, कर्म भरम हर, शिव संपति कर शरण लही।
जो तुम गुणमाला, पढ़े रसाला, सो पावहिं शिव सौख्य मही।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिधातकीशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

1. शीघ्र

(पूजा नं. 38)

मन्दरमेरु संबंधि सोलह वक्षार जिनालय पूजा

अथ स्थापना–गीता छंद

मंदरगिरी के पूर्व पश्चिम, सीत सीतोदा बहें।
उनके उभय तट की तरफ, वक्षार सोलह हैं कहें।।
स्वर्णाभतनु गिरि पे जिनेश्वर, भवन सोलह जानिये।
आह्वानना करके सदा, जिनदेव पूजन ठानिये।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्

–अथाष्टकं–तोटक छंद–

पद्माकर[1] नीर भरे कलसा, पद पंकज धार करूं हरसा।
वक्षारगिरी जिन सद्म जजूँ, भव व्याधि हरो पद पद्म भजूं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिरि चंदन स्वर्णसमा, जिनपाद जजूँ नित माथ नमा।
वक्षारगिरी जिन सद्म जजूँ, भव व्याधि हरो पद पद्म भजूं।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सित अक्षत चंद्र समान लिये, प्रभु पुंज करूं तुम संमुख ये।
वक्षारगिरी जिन सद्म जजूँ, भव व्याधि हरो पद पद्म भजूं।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

1. पद्म सरोवर ।

मचकुंद गुलाब, जुही सुमना, मदनारिजयी को जजूँ सुमना।
वक्षारगिरी जिन सद्म जजूँ, भव व्याधि हरो पद पद्म भजूं।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत पूरित मालपुआदि लिये, क्षुधरोग विनाश करो प्रभु ये।
वक्षारगिरी जिन सद्म जजूँ, भव व्याधि हरो पद पद्म भजूं।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणि दीप कपूर जले उसमें, जिनपूजत मोह नशे क्षण में।
वक्षारगिरी जिन सद्म जजूँ, भव व्याधि हरो पद पद्म भजूं।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध हुताशन[1] संग जले, अरि कर्म चमू[2] भयवंत टले।
वक्षारगिरी जिन सद्म जजूँ, भव व्याधि हरो पद पद्म भजूं।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल आम्र अनार सुथाल भरे, फल उत्तम इच्छित सौख्य भरे।
वक्षारगिरी जिन सद्म जजूँ, भव व्याधि हरो पद पद्म भजूं।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल आदिक द्रव्य लिये कर में, तुम पूजत इष्ट लहूँ वर मैं।
वक्षारगिरी जिन सद्म जजूँ, भव व्याधि हरो पद पद्म भजूं।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

सीतानदी सुनीर, जिनपद पंकज धार दे।
वेग हरूं भवपीर, शांतीधारा शांतिकर।।10।।

शांतये शांतिधारा।।

1. अग्नि। 2. सेना ।

बेला कमल गुलाब, चंप चमेली ले घने।
जिनवर पद अरविंद, पूजत ही सुख संपदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

–दोहा–

परमानंद पयोधि में, मग्न रहें जिनराज ।
तिनकी पूजा हेतु मैं, सुमन चढ़ाऊँ आज।।1।।

इति श्रीमंदरमेरुसंबंधिवक्षारनगस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छंद–

मंदरमेरू सीतानदि के, उत्तर में वक्षारा।
भद्रसाल वेदी के सन्निध ''चित्रकूट'' अति प्यारा।।
तापर चार कूट नदि सन्निध, सिद्धकूट मनहारी।
श्री कैवल्यरमा वरने को, नित पूजूँ सुखकारी।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थितचित्रकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

''पद्मकूट'' वक्षार दूसरा, वन उपवन से सोहे।
सुर किन्नर गन्धर्व खगेश्वर, जिन गुण गाते सोहें।।
मृत्युंजयि की प्रतिमा राजे, सिद्धकूट मनहारी।
श्री कैवल्यरमा वरने को, नित पूजूँ सुखकारी।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थितपद्मकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

''नलिनकूट'' वक्षार अचल है, अनुपम निधि को धारे।
देव देवियाँ भक्ति भाव से, आ जिन सुयश उचारें।।
कर्मविजयि[1] की प्रतिमा उसमें, सिद्धकूट मनहारी।
श्री कैवल्यरमा वरने को, नित पूजूँ सुखकारी।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थितनलिनकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. कर्म को नाश करने वाले जिनेन्द्र।

''एकशैल'' वक्षार अचल पे, अगणित भविजन आते।
सम्यक्रत्न हाथ में लेते, जिनवर के गुण गाते।।
मृत्युंजयि की प्रतिमा सुन्दर, सिद्धकूट मनहारी।
श्री कैवल्यरमा वरने को, नित पूजूँ सुखकारी।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थितएकशैलवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतानदि के उत्तर में, जो देवारण्य समीपे।
गिरि वक्षार ''त्रिकूट'' नाम का, कनक वर्णमय दीपे।।
ता पर चार कूट नदि पासे, सिद्धकूट मनहारी।
श्री कैवल्यरमा वरने को, नित पूजूँ सुखकारी।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थितत्रिकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वक्षाराचल नाम ''वैश्रवण'' शोभे सुरभवनों से।
इन्द्रचक्रवर्ती धरणीपति, पूजें नित रतनों से।।
मृत्युंजयि की प्रतिमा सुन्दर, सिद्धकूट मनहारी।
श्री कैवल्यरमा वरने को, नित पूजूँ सुखकारी।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थितवैश्रवणवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अंजन' नग वक्षार मनोहर शाश्वत सिद्ध कहा है।
सुरललनायें क्रीड़ा करतीं, अद्भुत ऋद्धि जहाँ है।।
मृत्युंजयि की प्रतिमा सुन्दर, सिद्धकूट मनहारी।
श्री कैवल्यरमा वरने को, नित पूजूँ सुखकारी।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थितअंजनवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आत्मांजन' वक्षार आठवां, सुर किन्नर मिल आवें।
जिनमहिमा को समझ समझकर, समकित ज्योति जगावें।।मृत्युं.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थितआत्मांजनवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपर विदेह नदी सीतोदा, दक्षिण दिश में जानो।
भद्रसाल ढिग वक्षाराचल, 'श्रद्धावान' बखानो।।
मृत्युंजयि की प्रतिमा सुन्दर, सिद्धकूट मनहारी।
श्री कैवल्यरमा वरने को, नित पूजूँ सुखकारी।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थितश्रद्धावान्वक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'विजटावान' अचल सुन्दर है, वेदी उपवन तापे।
इंद्र नमन करते मणियों युत, विलसत मुकुट झुकाके।।मृत्युं.।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थितविजटावान्वक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आशीविष' वक्षार अकृत्रिम, द्रुमपंक्तीवन सोहे।
विद्याबल से श्रावकगण आ, पूजन कर मल धोवें।।मृत्युं.।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थित-आशीविषवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचल 'सुखावह' सुख को देता, जो जिन गुण आलापे।
गगनगमनचारी ऋषियों के, पावन युगल वहाँ पे।।मृत्युं.।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थितसुखावहवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा के उत्तर तट पे, भूतारण्य समीपे।
ताके सन्निध ''चन्द्रमालगिरि'', रचना अद्भुत दीपे।।मृत्युं.।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थितचन्द्रमालवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सूर्यमाल' वक्षार सूर्य सम, सुवरण आभा धारे।
सुरवनिताएँ नित आ आकर, जिनवर कीर्ति उचारें।।मृत्युं.।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थितसूर्यमालवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नागमाल' वक्षार अनूपम, विद्याधरगण आवें।
जन्म जन्म दुःख नाशन कारण, जिनवर के गुण गावें।।मृत्युं.।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थितनागमालवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'देवमाल' वक्षार गिरी पे, देव देवियां आके।
वीणा ताल मृदंग बजा कर, नृत्य करें हर्षाके ।।मृत्युं.।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थितदेवमालवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–अडिल्ल छन्द–

मंदरमेरू के पूरब पश्चिम विषे।
सोलह गिरि वक्षार अकृत्रिम नित दिसें।।
ताके सोलह जिनमंदिर पूजों सदा।
रोग शोक दुःख दारिद नहिं होवे कदा।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

भवविजयी जिनराज हैं, भव संकट हरतार।
भविजन तुम गुण गायके, होते भवदधि पार।।1।।

-शम्भु छन्द-

जय जय मंदरमेरू चौथा, ताके पूरब दिश सीता है।
जय जय सुरगिरि के पश्चिम दिश, सीतोदा नदी सुगीता है।।
दोनों नदि के दक्षिण उत्तर, हैं चार चार वक्षारगिरी।
नदि कहीं विभंगा मध्य-मध्य, जो द्वादश हैं जल स्वच्छ भरी।।2।।

इन पर्वत और नदी के मधि, वर क्षेत्र विदेह कहाते हैं।
ये अंतराल के क्षेत्र सभी, बत्तीस गिनाए जाते हैं।।
इन सबमें आरजखंड कहे, उनमें तीर्थंकर होते हैं।
चक्री बलदेव हरी प्रतिहरि, ये महापुरुष नित होते हैं।।3।।

वक्षार गिरी हैं सब सोलह, जो कनकवर्ण आभाधारी।
सब में हैं कूट सुचार चार, मणि कंचनमय शोभाकारी।।
प्रत्येक गिरी पर नदी निकट, जो सिद्धकूट कहलाता है।
उसमें अकृत्रिम स्वयंसिद्ध, जिनमंदिर शोभा पाता है।।4।।

जिनभवनों में जिनप्रतिमायें, हैं शाश्वत सिद्ध कही जातीं।
बहु रत्नों की सुन्दर आकृति, छवि वीतराग मन को भाती।।
रत्नों के सिंहासन ऊपर, प्रतिमा पद्मासन से राजें।
भामंडल की कांती ऐसी, जिससे कोटी सूरज लाजें।।5।।

मणि मुक्ता लटक रहीं जिनमें, त्रय छत्र फिरें महिमाशाली।
ढोरें नित चौंसठ चमर यक्ष, निर्झर तम श्वेत चमकशाली।।
वसु मंगल द्रव्य अनूपम हैं, मंगल घट धूप घड़े शोभें।
मणि कंचन की मालायें औ, पुष्पों की माला मन लोभें।।6।

मानस्तंभों में जिनमूर्ती, दर्शन कर मान गलित होवे।
सब अद्भुत रचना रत्नमयी, दर्शक का मिथ्या मल धोवे।।
प्रतिमंदिर इक सौ आठ बिंब, सब पाप कलाप नशाते हैं।
मुक्तीलक्ष्मी के प्रिय वल्लभ, सबको शिवमार्ग दिखाते हैं।।7।।

जो दर्शन पूजन करते हैं, वे रत्नत्रय निधि पाते हैं।
जो वंदन करें परोक्ष सदा, वे भी स्वातम सुख पाते हैं।।
बस नाथ! सुयश तुम सुन करके, चरणों में आन पुकारा है।
अब मुझको भी प्रभु पार करो, बस तेरा एक सहारा है।।8।।

–घत्ता–

सब कर्म निकंदा, हर भव फंदा, आनंदकंदा जो ध्यावें।
निज 'ज्ञानमती' कर, निज संपति भर, मुक्तिरमा वर सुख पावें।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितषोडशसिद्धकूटजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 39)

मन्दरमेरु संबंधि चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–गीता छंद–

वर अर्ध पुष्करद्वीप में, जो मेरु मंदर नाम है।
ताके सुपूरब अपर में, बत्तीस देश ललाम हैं।।
दक्षिण सु उत्तर भरत ऐरावत कहे जो क्षेत्र हैं।
चौंतीस इनके मध्य रूपाचल अकृत्रिम देह हैं।।1।।

–दोहा–

इनके चौंतिस जिनभवन, जिनप्रतिमा गुणखान।
थापूं भक्ति समेत मैं, करो सकल कल्याण।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरोःपूर्वपश्चिमदक्षिणोत्तरसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरोःपूर्वपश्चिमदक्षिणोत्तरसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरोःपूर्वपश्चिमदक्षिणोत्तरसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–नाराच छंद–

(चाल–पार्श्वनाथ देव सेव....)

तीर्थरूप शुद्ध स्वच्छ सिंधु नीर लाइये।
गर्भवास दुःख नाश आप को चढ़ाइये।।
रूप्य अद्रि के जिनेन्द्र, गेह पूजते चलो।
रोग शोक नाश के, अखंड सौख्य ले भलो।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंकुमादि अष्टगंध, से जिनेन्द्र पूजिये।
राग आग दाह नाश, पूर्ण शांत हूजिये।।रूप्य अद्रि.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्र तुल्य श्वेत शालि, पुंज को रचाइये।
देह सौख्य छोड़ आत्म, सौख्य पुंज पाइये।।रूप्य अद्रि.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंद केतकी गुलाब, वर्ण वर्ण के लिए।
मारमल्लहारि[1] तीर्थनाथ चर्ण में दिये।।रूप्य अद्रि.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

खीर पूरिका जलेबियाँ भराय थाल में।
आप पाद पूजते क्षुधा महाव्यथा हने।।रूप्य अद्रि.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप में कपूर ज्योति अंधकार को हने।
आरती करंत अंतरंग ध्वांत को हने।।रूप्य अद्रि.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप गंध लेय अग्निपात्र में जलाइये।
मोह कर्म भस्म को, उड़ाय सौख्य पाइये।।रूप्य अद्रि.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

मातुलिंग[2] आम्र सेव सन्तरा मंगाइये।
आप पूजते हि सिद्धि संपदा सुपाइये।।रूप्य अद्रि.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

1. कामदेव विजयी। 2. विजौरा।

नीर गंध अक्षतादि अर्घ्य को बनाइये।
मुक्ति अंगना निमित्त नाथ को चढ़ाइये।।
रूप्य अद्रि के जिनेन्द्र, गेह पूजते चलो।
रोग शोक नाश के, अखंड सौख्य ले भलो।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

गंगनदी को नीर, तुम पद में धारा करूं।
शांति करो जिनराज, चउसंघ को सबको सदा।।10।।

शांतये शांतिधारा।।

कमल केतकी फूल, हर्षित मन से लायके।
जिनवर चरण चढ़ाय, सर्व सौख्य संपति बढ़े।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

बत्तिस क्षेत्र विदेह, भरतैरावत एक इक।
सब चौंतिस जिनगेह, पुष्पांजलि कर पूजहूँ।।1।।

इति श्रीमंदरमेरुसंबंधिविजयार्धपर्वतस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–गीताछंद-

मंदर सुमेरू पूर्व में सीता नदी के उत्तरे।
वन भद्रसाल समीप 'कच्छा' देश अति सुन्दर शरे।।
तामध्य रूपाचल अतुल नवकूट से मन को हरे।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थकच्छादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनुपम 'सुकच्छा' देश में, षट् खंड रचना जानिये।
तामध्य विजयारध अतुल बहुभांति महिमा मानिये।।

विद्याधरी वीणा बजाकर, भक्ति भर पूजा करें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसुकच्छादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुंदर 'महाकच्छा' कहा, तामध्य रूपाचल सही।
वन वेदिका वापी सुरों के, गेह की अनुपम मही।।
मुनिवृंद करते वंदना, निज कर्म कलिमल को हरें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थमहाकच्छादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कच्छकवती' सुविदेह में, रचना अकृत्रिम जानिये।
तामध्य रूपाचल अतुल, नवकूट संयुत मानिये।।
आकाशगामी ऋषि मुनी, श्रावक सदा भक्ती करें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थकच्छकावतीदेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर देश 'आवर्ता' सरस, तामध्य विजयारध गिरी।
गाते जिनेश्वर का सुयश नित, यक्ष किन्नर किन्नरी।।
शाश्वत जिनालय वंदना, करते भविक भक्ती भरें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थआवर्तादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है क्षेत्र 'लांगलिवर्तिका' भविजन सदा जन्में वहां।
भव बल्लियों को काट कर, शिव प्राप्त कर सकते वहां।।
इस मध्य रजताचल सुखद, बहु भव्य के कल्मष हरें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थलांगलावर्तादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धन धान्य पूरित संपदा यह 'पुष्कला' वर देश है।
जिस मध्य रूपाचल कहा, हरता भविक मन क्लेश है।।
देवांगनायें नित मधुर संगीत जहँ पर उच्चरें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थपुष्कलादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर 'पुष्कलावति' देश में, विजयार्ध बीचोंबीच है।
नवकूट में इक जिनसदन[1], नाशे भविक भव कीच है।।
स्वात्मैक परमानंद अमृत, के रसिक गुण विस्तरें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थपुष्कलावतीदेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वत्सा' विदेह अतुल्य ता मधि, आर्यखंड निरापदा।
इस देश के बस बीच में है, रूप्यगिरि वर शर्मदा[2]।।
त्रैलोक्यनायक के गुणों की, कीर्ति बुधजन विस्तरें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थवत्सादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दर 'सुवत्सा' देश में शाश्वत रजतगिरि सोहना।
नवकूट रत्नों के बने, सुरसद्म से मन मोहना।।
सुर अप्सरा मर्दल सुवीणा, को बजा नर्तन करें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसुवत्सादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनहर 'महावत्सा' विषे, विजयार्ध पर्वत सोहता।
गंधर्व देवों के मधुर संगीत, से मन मोहता।।

---

1. जिनमंदिर। 2. सुखदाता ।

मुनि वीतरागी के तहां, ध्यानाग्नि से भव वन जरें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थमहावत्सादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर 'वत्सकावति' देश में, रूपादि अनुपम मानिये।
विद्याधरों की पंक्तियों से, भीड़ तहँ पर जानिये।।
इन्द्रादिगण आके वहां, मणिमौलि नत वंदन करें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थवत्सकावतीदेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर देश 'रम्या' मध्य में, रजताद्रि रत्नों की खनी।
भव के विजेता नाथ की, महिमा जहां अतिशय घनी।।
सौ इन्द्र मिल कर पूजने को, आ रहे भक्ती भरे ।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थरम्यादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुंदर 'सुरम्या' देश में, विजयार्ध पर्वत सोहना।
किन्नर गणों की बांसुरी, ध्वनि से मधुर मन मोहना।।
वर ऋद्धिधारी मुनि तहां, बहुभक्ति से विचरण करें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसुरम्यादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभदेश 'रमणीया' विषे, विजयार्ध गिरि रजताभ[1] है।
विद्याधरों की श्रेणियां, जिनमंदिरों से सार्थ हैं।।
नग तीन कटनी से सहित, बहु भांति की रचना धरें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थरमणीयादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. चाँदी का।

वर 'मंगलावति' देश में, रजताद्रि बीचोंबीच है।
जो जन नहीं श्रद्धा करें, रूलते सदा भव बीच हैं।।
खगपति[1] सदा परिवारयुत, जिनवर सुयश वर्णन करें।
श्री सिद्धकूट जिनेन्द्र मंदिर, पूज शिवलक्ष्मी वरें।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थमंगलावतीदेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–रोला छंद–

मंदरमेरू अपर, नदी के दक्षिण जानो।
भद्रसाल के पास, 'पद्मा' देश बखानो।।
मध्य अचल विजयार्ध जिनगृह से सुखकारी।
पूजूँ अर्घ्यं चढ़ाय, भव भव दुख परिहारी।।17।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थपद्मादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुपद्मा' जान, मधि रजताद्रि बखाना।
अनुपम सुख की खान, खेचरपति से माना।।
सिद्धकूट ता माहिं जिनमंदिर सुखकारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, भव भव दुख परिहारी।।18।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुपद्मादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'महापद्मा' सुविदेह, रजताचल अभिरामा।
नवकूटों युत श्रेष्ठ, सुर गावें जिन नामा।।
सिद्धकूट ता माहिं जिनमंदिर सुखकारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, भव भव दुख परिहारी।।19।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थमहापद्मादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. विद्याधरपति ।

देश 'पद्मकावती' तामधि रजतगिरी है।
कनक रतन से पूर्ण अविचल सौख्यश्री है।।
सिद्धकूट ता माहिं, जिनमंदिर सुखकारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, भव भव दुख परिहारी।।20।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थपद्मकावतीदेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शंखा' देश विदेह देव असंख्य वहां पे।
आते रहते नित्य प्रमुदित चित्त तहां पे।।
ताके मधि विजयार्ध, जिनगृह से सुखकारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, भव भव दुख परिहारी।।21।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थशंखादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिना' देश विदेह, भव्य नयन मन मोहे।
ताके मधि विजयार्ध नवकूटों युत सोहे।।
सिद्धकूट ता माहिं, जिनमंदिर सुखकारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, भव भव दुख परिहारी।।22।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थनलिनादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कुमुदा' देश विदेह, मध्य रजतगिरि सोहे।
भविमन कुमुद विकास, चन्द्र किरण सम सोहे।।
सिद्धकूट ता माहिं, जिनमंदिर सुखकारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, भव भव दुख परिहारी।।23।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थकुमुदादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सरिता' देश सुमध्य, अनुपम रजतगिरी है।
जिनवच सरिता तत्र, भविमन पंक हरी है।।सिद्ध.।।24।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसरितादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा नदि जान, ताके उत्तर भागे।
'वप्रा' देश महान, रूपाचल मधि भागे।।
सिद्धकूट ता माहिं, जिनमंदिर सुखकारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, भव भव दुख परिहारी।।25।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थवप्रादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुवप्रा' रम्य, तामधि रजतगिरी है।
सुर ललनायें नित्य, आवें भक्ति भरी हैं।।सिद्ध.।।26।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुवप्रादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'महावप्रादेश' तामें रहें नगेशा।
जिनगुण गाते नित्य, ब्रह्मा विष्णु महेशा।।सिद्ध.।।27।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थमहावप्रादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'वप्रकावती' रजताचल मधि धारे।
मुनिगण जिनवर दर्श, करते सुयश उचारें।।सिद्ध.।।28।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थवप्रकावतीदेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधा' देश विदेह, रूपाचल से सोहे।
स्वातम रस पीयूष, पीके मुनि शिव जोहें।।सिद्ध.।।29।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थगंधादेशस्थितविजयार्धपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुगंधा' रम्य, जिनवच सुरभि वहां है।
जन मन होत सुगंध, नग विजयार्ध वहां है।।सिद्ध.।।30।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुगंधादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'गंधिला' जान, जन मन कमल खिलावे।
मध्य रजत नग सिद्ध, जिनवच सुधा पिलावे।।सिद्ध.।।31।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थगंधिलादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधमालिनी' देश, मधि रजताद्रि तहां है।
श्रद्धावंत मलंत, का सम्यक्त्व वहाँ है।।सिद्ध.।।32।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थगंधमालिनीदेशस्थितविज-यार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-कुसुमलता छंद-

पूरब पुष्कर द्वीप अर्ध में, 'भरतक्षेत्र' दक्षिण दिश जान।
बीचोंबीच कहा विजयारध, तिस ऊपर नव कूट महान।।
इनमें से इक सिद्धकूट पर, जिनमंदिर अविचल अभिराम।
गर्भवास दुख नाशन कारण, अर्घ्य चढ़ाय करूं परणाम।।33।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिभरतक्षेत्रस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिना-लयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंरदमेरू के उत्तर दिश, 'ऐरावत' वर क्षेत्र महान।
मध्य रजतगिरि चांदी सम है, त्रय कटनी युत अतुल निधान।।
तिस पर सिद्धकूट में जिनगृह, अकृत्रिम अनुपम सुखकार।
पुनर्जन्म दुःख नाशन हेतू, अर्घ्य चढ़ाय जजूँ रुचि धार।।34।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिना-लयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-

मंदरमेरू के पूरब औ, पश्चिम दिश बत्तीस विदेह।
दक्षिण अरु उत्तर दिश में हैं, भरतक्षेत्र ऐरावत एह।।

इन सबके मधि रजतगिरी हैं, चौंतिस रजतवर्ण उनहार।
सबके इक-इक चैत्यालय को, अर्घ्य चढ़ाय नमूं गुणधार।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरोः पूर्वपश्चिमदक्षिणोत्तरसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य-***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

-दोहा-

दर्श ज्ञान सुख वीर्य ये, चार अनंत प्रमाण।
मेरे भी गुण पूरिये, चहुँगति से कर त्राण।।1।।

-सखी छंद-(चाल-आलोचना पाठ)-

पुष्कर वर पूर्व कहावे, मंदरगिरि मध्य सुहावे।
गिरि पूरब अपर दिशा में, बत्तिस विजयारध तामें।।2।।

दक्षिण दिश भरत सुक्षेत्रा, उत्तर ऐरावत क्षेत्रा।
इनके दो रजत गिरीशा, होते सब मिल चौंतीसा।।3।।

इन पे जिनधाम कहे हैं, वे सब भव क्लेश दहे हैं।
उन वंदत सकल सुरेशा, हम पूजत यहीं हमेशा।।4।।

मंदरगिरि पूर्व विदेहे, सीता नदि मध्य बहे हैं।
अठ क्षेत्र नदी उत्तर में, जिन 'भद्रबाहु' उन इक में।।5।।

अठ क्षेत्र नदी दक्षिण में, तीर्थेश 'भुजंगम' उनमें।
मंदरगिरि अपर विदेहे, सीतोदा नदी बहे है।।6।।

अठ क्षेत्र नदी दक्षिण में, 'ईश्वर' तीर्थंकर उनमें।
अठ क्षेत्र नदी उत्तर में, जिनवर 'नेमिप्रभ' उनमें।।7।।

ये चार जिनेश्वर नित ही, विहरें सु विदेहनि बिचहीं।
बत्तीस विदेह कहे हैं, तहं पे षट् खंड रहे हैं।।8।।

सबमें आरजखंड इक है, तीर्थंकर जनम सतत हैं।
ये शाश्वत तीर्थ करंता, नित विहरमाण भगवंता।।9।।

भविजन को नित सुख देते, भवभय संकट हर लेते।
यह सुन मैं शरणे आयो, भव भव दुख से अकुलायो।।10।।

हे नाथ! अरज इक मेरी, सुनिये नहिं करिये देरी।
इस जग में भ्रमण करायो, प्रभु काल अनंत गमायो।।11।।

चिरकाल निगोद निवासा, मुश्किल से हुआ निकासा।
पृथ्वी जल अग्नि पवन में, तनु धर धर किया मरण मैं।।12।।

जब वनस्पती तनु पायो, नाना विध स्वांग धरायो।
कहिं फूल फलों की ढ़ेरी, कहिं कोंपल पत्र घनेरी।।13।।

कोई काटे रौंदे खाये, कोई भाजी साग पकाये।
कहिं दमड़ी मूल्य बिकाये, कहिं करवत चीर दुखाये।।14।।

जो दुःख सहे अनजाने, नहिं मुख से जाय बखाने।
अजि कठिन कठिन त्रस हूवो, लट शंख तनू धर मूवो।।15।।

चिंवटी खटमल तन धारे, बिच्छू आदिक अवतारे।
मधुमक्खी भ्रमर जु हूवो, तन धर धर पुनि पुनि मूवो।।16।।

पंचेन्द्रिय पशु तन धार्यो, कहिं क्रूर पशू बन मार्यो।
संक्लेशभाव से मर्यो, तब नरकगती में पर्यो।।17।।

दुख भोगे तहाँ अनन्ता, तुम जानत हो भगवंता।
नर योनि लई जब मैंने, तहँ भोगे भोग सु मैंने।।18।।

फिर भी नहिं साता पायो, नाना विध कष्ट उठायो।
कहिं इष्ट वियोग सह्यो है, आनिष्ट संयोग भयो है।।19।।

कहिं धन जन नष्ट हुए हैं, कहिं परिजन दुष्ट हुए हैं।
कहिं तन में व्याधि व्यथा है, समरथ अन्याय रचा है।।20।।

सुरयोनि लिया भी दुःखी, समकित बिन कभी न सुक्खी।
भवनत्रिक में मन व्याधी, कर्मनि की आदि उपाधी।।21।।

इस विध चहुँगति दुख पायो, सुख लेश निमित भरमायो।
जिनराज कृपा तुम पाई, समकित निधि हाथ में आई।।22।।

जब तक प्रभु मुक्ति न होवे, यह सम्यक् रतन न खोवे।
बस यह ही अरज सुनीजे, अंतिम सु समाधी कीजे।।23।।

–घत्ता–

जय जय चौंतीसा, रजतगिरीशा, जय जिनगृह चौंतीस जजूँ।
कैवल्य 'ज्ञानमति' शिवसुख संपति, हो मुझ प्रापति तुमहिं भजूँ।।24।।

ॐ ह्रीं श्रीमंदरमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो जयमाला निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 40)

पूर्व पुष्करार्धद्वीप भरतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना-गीता छंद

वर पूर्व पुष्कर द्वीप में, जो भरत क्षेत्र महान् है।
उसमें चतुर्थकाल में हों तीर्थंकर भगवान हैं।।
उन वर्तमान जिनेश्वरों की मैं करूँ इत थापना।
पूजूँ अतुल बहु भक्ति से, चाहूँ सदा हित आपना।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-अडिल्ल छंद

सीतानदि को नीर कलश भर लाइये।
जिनवर पद पंकज में धार कराइये।।
वर्तमान चौबीस जिनेश्वर को जजूँ।
रोग शोक भय नाश सहज सुख को भजूँ।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयज चंदन गंध सुगंधित लाइये।
तीर्थंकर पद पंकज अग्र चढ़ाइये।।वर्तमान.।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल अक्षत मुक्ता फल सम लाइये।
जिनवर आगे पुंज चढ़ा सुख पाइये।।वर्तमान.।।3।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

वकुल कमल चंपक बेला सुमनादि ले।
मदनजयी जिनपाद पद्म पूजूँ भले।।
वर्तमान चौबीस जिनेश्वर को जजूँ।
रोग शोक भय नाश सहज सुख को भजूँ।।4।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

कलाकंद मोदक घृत मालपुआ लिये।
क्षुधा व्याधिक्षय हेतू आज चढ़ा दिये।।वर्तमान.।।5।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत दीपक की ज्योति जले जगमग करे।
तुम पूजा तत्काल मोह तक क्षय करे।।वर्तमान.।।6।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर तगर सित चंदन आदि मिलायके।
अग्निपात्र में खेऊँ भाव बढ़ायके।।वर्तमान.।।7।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अनंनास अंगूर आम आदिक लिये।
महामोक्षफल हेतु तुम्हें अर्पण किये।।वर्तमान.।।8।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलगंधादिक अर्घ्य लिया भर थाल मैं।
रत्नत्रय निधि हेतु जजूँ त्रयकाल मैं।।वर्तमान.।।9।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-सोरठा-

ज्ञान चेतनारूप, परमेष्ठी चिद्रूप हैं।
पुष्पांजलि से पूज, सकल दुःख दारिद हरूँ।।1।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-चौपाई-

श्री 'जगन्नाथ' तीर्थंकर, सुरगणनुत भव्य हितंकर।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीजगन्नाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थेश 'प्रभास' कहाते, सुरनर मुनिपति यश गाते।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीप्रभासनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'स्वर स्वामी' जिनदेवा, सुर करते तुम पद सेवा।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीस्वरस्वामिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'भरतेश' जिनेश महंता, पूजें भविजन गुणवंता।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीभरतेशजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'दीर्घानन' जिन राजा, वे सिद्ध करें सब काजा।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीदीर्घाननजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'विख्यात कीर्ति' तीर्थंकर, उन वाणी सर्व प्रियंकर।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविख्यातकीर्तिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अवसानि' जिनेश्वर जग में, उनका यश है त्रिभुवन में।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअवसानिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिननाथ 'प्रबोध' सुहितकर, उन नाम मंत्र भी दुखहर।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीप्रबोधजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन 'तपोनाथ' जग स्वामी, त्रिभुवन के अंतर्यामी।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीतपोनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन 'पावक' नाम तुम्हारा, आतम अनुभव दातारा।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपावकजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'त्रिपुरेश्वर' जगपति तुम हो, चिन्मूर्ति चिदंबर तुम हो।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीत्रिपुरेश्वरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'सौगत' देव हमेशा, तुम ध्याते विष्णु महेशा।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।12।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसौगतजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'वासव' नाथ हमारे, भव भव के संकट टारें।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।13।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवासवनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनराज 'मनोहर' नामी, सुख दायक त्रिभुवन स्वामी।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।14।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमनोहरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शुभ कर्म ईश' तीर्थंकर, सब भविजन को क्षेमंकर।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।15।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशुभकर्मईशजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनराज 'इष्टसेवित' तुम, कर इष्ट अनिष्ट हरो तुम।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।16।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीइष्टसेवितजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'विमलेन्द्र' जिनेन्द्र सुखालय, संपूर्ण गुणों के आलय।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।17।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविमलेन्द्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'धर्मवास' सुखदाता, भक्तों के भाग्य विधाता।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।18।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधर्मवासजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जग मान्य 'प्रसाद' जिनेश्वर, तुम त्रिभुवन के परमेश्वर।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।19।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीप्रसादजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'प्रभामृगांक' जिनेशा, तुम पूजें सकल सुरेशा।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।20।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीप्रभामृगांकजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'उज्झित कलंक' जिनराजा, तुमही भव जलधि जहाजा।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।21।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीउज्झितकलंकजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'स्फटिक प्रभाख्य' जिनेश्वर, सब प्राणिमात्र के ईश्वर।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।22।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीस्फटिकप्रभाजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनराज 'गजेन्द्र' महंता, निज आतम सुख विलसंता।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।23।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीगजेन्द्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनदेव 'ध्यान जय' जिष्णू, तुम पूजक बनें सहिष्णू।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके।।24।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीध्यानजयजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-दोहा-

इंद्रिय विषयों से विरत, परम अतींद्रिय सौख्य।
नमूँ नमूँ तीर्थेश सब, पाऊँ सौख्य मनोज्ञ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीजगन्नाथादिध्यानजयपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

चाल (हे दीनबंधु.....)

देवाधिदेव आप सकल दोष दूर हो।
देवाधिदेव आप सकल सौख्य पूर हो।।
निज आतमा को आप ही परमात्मा किया।
निज में ही आप मग्न हो निजधाम पा लिया।।1।।
क्रोधादि शत्रुओं का आपने दमन किया।
संपूर्ण कषायों को आपने शमन किया।।
इंद्रिय विषय को जीत अतीन्द्रिय सुखी हुये।
प्रत्यक्ष ज्ञान से ही आप केवली हुये।।2।।
संपूर्ण उपद्रव टले हैं आप जाप से।
संपूर्ण मनोरथ फले हैं आप नाम से।।
प्रभु आपको न इष्ट का वियोग हो कभी।
होवे नहीं अनिष्ट का संयोग भी कभी।।3।।

सबके लिये आराध्य इष्ट आप ही कहे।
सबही अनिष्ट नष्ट हों क्षण मात्र ना रहें।।
संपूर्ण रोग शोक भी तुम भक्त के टलें।
धन धान्य अतुल सौख्य भी होवें भले भले।।4।।
इस जग में मुक्ति अंगना के नाथ आपही।
निजकी अनंत ऋद्धियों के साथ आपही।।
चैतन्य चमत्कार परमसौख्य धाम हो।
चित्पिंड हो अखंड ही त्रिभुवन ललाम हो।।5।।
मैं आपकी शरणागती में आज आ गया।
अपनी अमूल्य ज्ञान कला को भी पा गया।।
ये ज्ञान निधी भवदधी में डूब ना जावे।
करिये कृपा जो मुक्ति तक भी साथ में आवे।।6।।
हे नाथ! मोहराज को अब दूर कीजिये।
निजके अखंड गुण समस्त पूर्ण कीजिये।
मुझ शत्रु जो यमराज उसे चूर्ण कीजिये।
मुझ स्वात्म सुधारस प्रवाह पूर दीजिये।।7।।

-दोहा-

आत्यंतिक सुख शांतिमय, तीर्थंकर भगवान्।
'ज्ञानमती' लक्ष्मी मुझे, दे कीजे धनवान।।8।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 41)

पूर्व पुष्करार्धद्वीप ऐरावतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना-नरेन्द्र छंद

पूरब पुष्कर ऐरावत के, वर्तमान तीर्थंकर।
चिच्चैतन्य सुधारस प्यासे, भविजन को क्षेमंकर।।
उनको इत आह्वानन करके, पूजूँ मन वच तन से।
आतम अनुभव अमृत हेतु, वंदूँ अंजलि करके।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर-समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर-समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर-समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-गीता छंद

अगणित कुओं का नीर पीया, प्यास फिर भी ना बुझी।
इस हेतु जल से पूजहूँ, अब मेट दो बाधा सभी।।
चौबीस तीर्थंकर जगत में, सर्व सुख दातार हैं।
जो पूजते तुम चरण अंबुज, वे भवोदधि पार हैं।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव सिंधु में भी चाह दावानल हमें झुलसा रहा।
इस हेतु चंदन से जजूँ, अब दुःख नहिं जाता सहा।।चौबीस.।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

निज आत्म सुख जो सहज मेरा, खंड खंड हुआ सभी।
उसके अखंडित हेतु अक्षत, पुंज से पूजूँ अभी।।चौबीस.।।3।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

इस मदन ने बस जगत में, जन सर्व को वश में किया।
इसके निमूलन हेतु सुरभित, सुमन तुम अर्पण किया।।
चौबीस तीर्थंकर जगत में, सर्व सुख दातार हैं।
जो पूजते तुम चरण अंबुज, वे भवोदधि पार हैं।।4।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

तन में क्षुधा व्याधी सदा, औषधि न कुछ उसके लिये।
इस हेतु उत्तम सरस व्यंजन, आप ढिग अर्पण किये।।चौबीस.।।5।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अज्ञान तम अति घोर छाया, आप र दीखे नहीं।
इस हेतु दीपक से जजूँ, निज ज्ञान रवि प्रगटे सही।।चौबीस.।।6।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

इन कर्म ने मुझ संपदा को, लूट ली मुझ पास से।
इस हेतु इनको नाश करने, धूप खेऊं चाव से।।चौबीस.।।7।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

वांछित मिले इस हेतु जग में, देव सब पूजे सदा।
पर सफल अब तक ना हुआ, इस हेतु फल तुम अर्पता।।चौबीस.।।8।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीरादि में वर रत्न धरके, अर्घ्य सुंदर ले लिया।
अनमोल निज संपत्ति हेतु, अर्घ्य तुम अर्पण किया।।चौबीस.।।9।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-सोरठा-

सिद्धि वधू भरतार, निज में ही रमते सदा।
भुक्ति मुक्ति करतार, इसी हेतु भविजन जजें।।1।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-चौपाई-

श्री 'शंकर' जिनदेवजी, जग में शं करतार।
अर्घ्य चढ़ाकर मैं जजूँ, होवे निज पद सार।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशंकरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अक्षवास' जिनराज को, मिला सौख्य निर्वाण।
हृदय कर्णिका में सदा, मुनिजन करते ध्यान।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअक्षवासजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'नग्नाधिप' देव तुम, बहिरंतर निर्ग्रंथ।
नग्न दिगम्बर रूप तुम, सत्य मोक्ष का पंथ।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनग्नाधिपजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'नग्नाधिपतीश' हो, नमन करें सुरवृंद।
मैं पूजूँ नित अर्घ्य ले, हरो सकल दुख द्वंद।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनग्नाधिपतीशजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ 'नष्टपाखंड' को, विश्व नमाता माथ।
मैं भी अर्घ्य चढ़ाय के, फिर ना होऊँ अनाथ।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनष्टपाखंडजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'स्वप्नदेव' जिननाथ को, नमूँ नमूँ तन शीश।
हरो अमंगल विश्व के, भरो सकल सुख ईश।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीस्वप्नदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आप 'तपोधन' आत्मधन, पाकर भये सुतृप्त।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय के, पाऊँ सौख्य प्रशस्त।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीतपोधनजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'पुष्पकेतु' जिनराज हैं, मुक्तिरमा भरतार।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय के, पाऊँ सौख्य अपार।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपुष्पकेतुजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'धार्मिक' जिनराज का, धर्मचक्र हितकार।
जो भविजन शरणा गहें, नाशें निज संसार।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधार्मिकजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'चंद्रकेतु' भगवान को, नमते नाग नरेश।
स्याद्वाद अम्भोधि के, वर्धन हेतु महेश।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीचंद्रकेतुजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'अनुरक्त' सुज्योति को, नमन करूँ शतवार।
तुम में जो अनुरक्त जन, वे उतरें भव पार।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअनुरक्तसुज्योतिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वीतराग' जिनदेव के, चरण कमल का ध्यान।
जो जन करते भाव से, पावें सौख्य निधान।।12।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवीतरागजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'उद्योत' जिनेश तुम, ज्ञान भानु तमहार।
पूजूँ सकल विभाग तज, लहूँ ज्ञान भंडार।।13।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीउद्योतजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'तमोपेक्ष' भगवान के, गुणगण अपरंपार।
गणधर भी नहिं गा सकें, मैं पूजूं सुखसार।।14।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीतमोपेक्षजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'मधुनाद' जिनेन्द्र को, सुरनर खगपति आय।
पूजें भक्ति बढ़ाय के, मैं पूजूँ हरषाय।।15।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमधुनादजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'मरुदेव' महान हो, अद्भुत तुम माहात्म्य।
मैं पूजूँ नित भक्ति से, होऊँ सब जन मान्य।।16।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमरुदेवीजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'दमनाथ' जिनेश को, नमें जितेन्द्रिय साधु।
मैं भी पूजूँ अर्घ्य ले, हरूँ सकल दुःख वाघ।।17।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीदमनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वृषभस्वामि' आनंदघन, चिन्मय ज्योति स्वरूप।
जो पूजें श्रद्धान धर, पावें सौख्य अनूप।।18।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवृषभस्वामिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अहो 'शिलातन' तीर्थपति, व्रतगुणशील निधान।
तुम्हें जजें जो भक्ति से, करें अमंगल हान।।19।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशिलातनजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'विश्वनाथ' के ज्ञान में, झलके विश्व समस्त।
त्रैकालिक पर्याययुत, सकल वस्तु प्रत्यक्ष।।20।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविश्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'महेन्द्र' भगवान हैं, त्रिभुवनपति महनीय।
मैं पूजूँ नित आप मुझ, हरो दशा दयनीय।।21।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमहेन्द्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर 'नंद' जगत प्रभो, परमानंद निमग्न।
तुमको पूजें जो मुदित, वे नर सदा प्रसन्न।।22।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनंदजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सकल 'तमोहर' आप हैं, भविजन कमल दिनेश।
जो पूजें तुम प्रीति धर, हरें सकल दुख क्लेश।।23।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीतमोहरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'ब्रह्मज' जिनदेव को, बंदूँ बारंबार।
हरूँ मोक्ष पथ विघ्न सब, लहूँ सकल सुखकार।।24।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीब्रह्मजजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-गीता छंद-

जो आप में ही रत हो, आपको वश पा लिया।
उन चरण में शत इंद्र ने, भी आप शीश झुका दिया।।
मैं पूजहूँ उनको सदा वे, सौख्य के भण्डार हैं।
वे काम मोह व मृत्यु तीनों मल्ल के हंतार हैं।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शंकरादिब्रह्मजपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

-सोरठा-

जय जय श्री जिनराज, पृथ्वीतल पर आवते।
बरसें रत्न अपार, सुरपति मिल उत्सव करें।।1।।

-शंभु छंद-

प्रभु तुम जब गर्भ बसे आके, उसके छह महिने पहले ही।
सौधर्म इंद्र की आज्ञा से, बहुरत्नवृष्टि धनपति ने की।।
मरकतमणि इंद्र नीलमणि औ, वरपद्मरागमणियां सोहें।
माता के आंगन में बरसें, मोटी धारा जनमन मोहे।।1।।

प्रतिदिन साढ़े बारह करोड़, रत्नों की वर्षा होती है।
पंद्रह महीने तक यह वर्षा, सब जन का दारिद खोती है।।
जिनमाता पिछली रात्री में, सोहल स्वप्नों को देखे हैं।
प्रातः पतिदेव निकट जाकर, उन सबका शुभ फल पूछे हैं।।2।।

पतिदेव कहें हे देवि! सुनो, तुम तीर्थंकर जननी होंगी।
त्रिभुवनपति शत इंद्रों वंदित, सुत को जनि भवहरणी होंगी।।
ऐरावत हाथी दिखने से, तुमको उत्तम सुत होवेगा।
उत्तुंग बैल के दिखने से, त्रिभुवन में जेष्ठ सु होवेगा।।3।।

औ सिंह देखने से अनंत, बल युक्त मान्य कहलायेगा।
मालाद्वय दिखने से सुधर्ममय, उत्तम तीर्थ चलायेगा।।
लक्ष्मी के दिखने से सुमेरु गिरि, पर उसका अभिषव होगा।
पूरण शशि से जिन आनंदे, भास्कर से प्रभामयी होगा।।4।।
द्वयकलशों से निधि का स्वामी, मछली युग दिखीं सुखी होगा।
सरवर से नाना लक्षण युत, सागर से वह केवलि होगा।।
सिंहासन को देखा तुमने, उससे वह जगद्गुरू होगा।
सुर के विमान के दिखने से, अवतीर्ण स्वर्ग से वह होगा।।5।।
नागेन्द्र भवन से अवधिज्ञान, रत्नों से गुण आकर होगा।
निर्धूम अग्नि से कर्मेधन, को भस्म करे ऐसा होगा।।
फल सुन रोमांच हुई माता, हर्षित मन निज घर आती है।
श्री ह्री धृति आदिक देवी मिल, सेवा करके सुख पाती हैं।।6।।
पति की आज्ञा से शची स्वयं, निज गुप्त वेश में आती है।
माता की अनुपम सेवा कर, बहु अतिशय पुण्य कमाती हैं।।
जब गूढ़ प्रश्न करती देवी, माता प्रत्युत्तर देती हैं।
त्रयज्ञानी सुत का ही प्रभाव, जो अनुपम उत्तर देती हैं।।7।।
इसविध से माता का माहात्म्य, प्रभु तुम प्रसाद से होता है।
तुम नाम मंत्र भी अद्भुत हैं, भविजन का अघ मल धोता है।।
मैं इसीलिये तुम शरण लिया, भगवन्! अब मेरी आश भरो।
निज 'ज्ञानमती' संपति देकर, स्वामिन् अब मुझे कृतार्थ करो।।8।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 42)

पूर्व पुष्करार्ध विदेहक्षेत्र तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना-गीता छंद

वर पूर्व पुष्कर अर्ध में जो पूर्व अपर विदेह हैं।
उनमें सदा तीर्थेश विहरें भव्यजन सुखदेय हैं।।
चंद्रबाहु श्रीभुजंगमय ईश्वर व नेमीप्रभ जिना।
पूजूँ इन्हें आह्वानन कर पाऊँ अतुल सुख आपना।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणचंद्रबाहुभुजंग-म-ईश्वर-नेमिप्रभनामचतुस्तीर्थंकर समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणचंद्रबाहुभुजंग-म-ईश्वर-नेमिप्रभनामचतुस्तीर्थंकर समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणचंद्रबाहुभुजंग-म-ईश्वर-नेमिप्रभनामचतुस्तीर्थंकर समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-नरेन्द्र छंद

पद्म सरोवर का जल लेकर कंचन झारी भरिये।
तीर्थंकर पद धारा देकर जन्ममरण को हरिये।।
विहरमाण चारों तीर्थंकर त्रिभुवन मंगलकारी।
मैं पूजूं नित सत्त्व हितंकर आतम गुण भंडारी।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणचंद्रबाहु-आदिचतु-स्तीर्थंकरेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिरि चंदन काश्मीरी केशर संग घिसायो।
जिनवर चरण सरोरुह चर्चत अतिशय पुण्य कमायो।।वि.।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणचंद्रबाहु-आदिचतु-स्तीर्थंकरेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मोतीसम तंदुल उज्ज्वल ले धोकर थाल भराऊँ।
तीर्थंकर पद पुंज चढ़ाकर अक्षय सुख को पाऊँ।।वि.।।3।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणचंद्रबाहु-आदिचतु-स्तीर्थंकरेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चंपा हरसिंगार चमेली माला गूँथ बनाई।
तीर्थंकरपद कमल चढ़ाकर काम व्यथा विनशाई।।वि.।।4।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणचंद्रबाहु-आदिचतु-स्तीर्थंकरेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

फेली गुझिया पूरणपोली बरफी और समोसे।
प्रभु के सन्मुख अर्पण करते क्षुधा डाकिनी नाशे।।वि.।।5।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणचंद्रबाहु-आदिचतु-स्तीर्थंकरेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नदीप की ज्योती जगमग करती तिमिर विनाशे।
प्रभु तुम आरति करते करते ज्ञान ज्योति परकाशे।।वि.।।6।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणचंद्रबाहु-आदिचतु-स्तीर्थंकरेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपदशांगी धूपघटों में खेवत उठे सुगंधी।
पापपुंज जलते इक क्षण में फैले सुयश सुगंधी।।वि.।।7।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणचंद्रबाहु-आदिचतु-स्तीर्थंकरेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सेव अनार आम सीताफल ताजे सरस फलों से।
पूजूँ चरणकमल जिनवर के मिले मोक्षफल सुख से।।वि.।।8।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणचंद्रबाहु-आदिचतु-स्तीर्थंकरेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फल अर्घ सजाकर उसमें चाँदी पुष्प मिलाऊँ।
वाद्य गीत संगीत नृत्य कर प्रभु को अर्घ चढ़ाऊँ।।वि.।।9।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणचंद्रबाहु-आदिचतु-स्तीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

नाथ! पादपंकज, जल से त्रयधारा करूँ।
अतिशय शांतीहेत, शांतीधारा विश्व में।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार गुलाब, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।
मिले आत्मसुख लाभ, जिनपदपंकज पूजते।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-दोहा-

पूरब पुष्कर द्वीप में, विहरमाण तीर्थेश।
पुष्पांजलि कर पूजते, मिले चिदानंद वेश।।1।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-चौपाई-

पूरब पुष्कर पूरब विदेह, सीता नदि के उत्तर तट में।
पितु-देवनंदि रेणुका मात, जनमें प्रभु नगरि विनीता में।।
तुम पद्मचिन्ह है 'चंद्रबाहु', मैं तुम चरणांबुज को ध्याऊँ।
जब तक नहीं मुक्ति मिले प्रभु जी, तुम चरणों में ही रम जाऊँ।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्रीचंद्रबाहुजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूरब पुष्कर पूरब विदेह, सीतानदि के दक्षिण दिश में।
विजयानगरी में पिता महाबल, माता जिनमति से जन्मे।।
तुम चंद्र चिन्ह है जनवत्सल, तीर्थेश 'भुजंगम' दया करो।
मैं सम्यग् रत्नत्रय बल से, निजको पालूँ यह कृपा करो।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्रीभुजंगमजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदरमेरू पश्चिम विदेह, सीतोदा नदि के दक्षिण में।
है नगरि सुसीमा माँ ज्वाला, गलसेन पिता पावन तुमसे।।
तुम चिन्ह सूर्य है 'ईश्वर' जिन, भविजन मन कमल खिलाते हो।
मैं पूजूँ आप मुमुक्षु को, मुक्ती से शीघ्र मिलाते हो।।3।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्रीईश्वरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदर मेरू पश्चिम विदेह, सीतोदा नदि के उत्तर में।
हैं नगरि अयोध्या के स्वामी, उनकी रानी से प्रभु जन्में।।
वृष लांछन युत हे 'नेमीप्रभु', सद्धर्भ ध्वजा को फहराते।
जो तुमको वंदन करते हैं, वे आतम सौरभ लहराते।।4।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्रीनेमिप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य-दोहा

नित्य निरंजन ज्योतिमय, परमपिता परमेश।
पूजूँ अर्घ चढ़ाय के, जिनवर चरण हमेश।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्रीचंद्रबाहुभुजंगम ईश्वरनेमिप्रभनामचतुस्तीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

-नरेन्द्र छंद-

जय जय तीर्थंकर क्षेमंकर गणधर मुनिगण वंदे।
जय जय समवसरण परमेश्वर वंदत मन आनंदे।।
जय जय चंद्रबाहु तीर्थंकर जय तीर्थेश भुजंगम।
जय जय ईश्वर तीर्थंकर प्रभु जय नेमीनाथ अनुपम।।1।।

प्रभु तुम समवसरण अतिशायी धनपति रचना करते।
बीस हजार सीढ़ियों ऊपर शिला नीलमणि धरते।।
धूलिसाल परकोटा सुंदर पंचवर्ण रत्नों के।
मानस्तंभ चार दिश सुंदर अतिशय ऊँचे चमकें।।2।।

इनके चारों दिशी बावड़ी जल अति स्वच्छ भरा है।
आस पास के कुंडनीर में पग धोती जनता है।।

प्रथम चैत्यप्रासाद भूमि में जिनगृह अतिशय ऊँचे।
खाई लताभूमि उपवन में पुष्प खिले अति नीके।।3।।
वनभूमती के चारों दिश में चैत्यवृक्ष में प्रतिमा।
कल्पभूमि सिद्धार्थवृक्ष को नमूँ नमूँ अति महिमा।।
ध्वजाभूमि की उच्च ध्वजायें लहर लहर लहरायें।
भवनभूमि के जिनबिंबों को हम नित शीश झुकायें।।4।।
श्री मंडप में बारह कोठे मुनिगण सुर नर बैठे।
पशुगण भी उपदेश श्रवण कर शांतचित्त वहाँ बैठे।।
गणधर गुरु के पावन चरणों झुक झुक शीश नमाऊँ।
सर्व रिद्धि के स्वामी गुरु को वंदत विघ्न नशाऊँ।।5।।
गंधकुटी के मध्य सिंहासन जिनवर अधर विराजें।
प्रातिहार्य की शोभा अनुपम कोटि सूर्य शशि लाजें।।
सौ इंद्रों से पूजित जिनवर त्रिभुवन के गुरु मानें।
नमूँ नमूँ मैं हाथ जोड़कर मेरे भव दुख हाने।।6।।

-दोहा-

चिन्मय चिंतामणि प्रभो, चिंतित फल दातार।
'ज्ञानमती' सुख संपदा, दीजे निज गुण सार।।7।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थचंद्रबाहुभुजंगम-ईश्वरनेमि-प्रभनाम-विहरमाणचतुस्तीर्थंकरेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 43)

पूर्व पुष्करार्ध नवदेवता पूजा

अथ स्थापना-नरेन्द्र छंद

पूरब पुष्कर द्वीप अर्ध में, कर्मभूमि चौंतिस हैं।
एक भरत इक ऐरावत है देश विदेह बत्तिस हैं।।
अर्हत्सिद्धाचार्य उपाध्याय साधु परमगुरु माने।
जिनवृष श्रुत जिनबिंब जिनालय पूजत भवदुख हाने।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-नाराच छंद

नाथ! आप पादपद्म तीन धार दे जजूँ।
ताप त्रय विनाश हेतु बार बार मैं भजूँ।।
तीर्थनाथ सिद्ध साधु जैनधर्म को जजूँ।
जैनबिंब धाम अर्च सर्व सौख्य को भजूँ।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ! आप चर्ण में सुगंधि गंध चर्चते।
देह व्याधि नष्ट हो निजात्म कीर्ति वर्धते।।तीर्थ.।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ! आप के निकट में शालि पुंज को धरूँ।
पूर्ण सौख्य दीजिये समस्त कर्म को हरूँ।।
तीर्थनाथ सिद्ध साधु जैनधर्म को जजूँ।
जैनबिंब धाम अर्च सर्व सौख्य को भजूँ।।3।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मल्लिका गुलाब मोगरा चुनाय के लिये।
नाथ! आप चर्ण में चढ़ाय हर्ष हो हिये।।तीर्थ.।।4।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घेवरादि थाल में भराय के चढ़ावते।
भूख व्याधि नष्ट हो असीम शक्ति पावते।।तीर्थ.।।5।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप ज्योति को प्रजाल आरती करूँ अबे।
मोह ध्वांत दूर हो सुज्ञान सूर्य भी उगे।।तीर्थ.।।6।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप खेय अग्नि में समस्त कर्म भस्म हों।
स्वात्म सौख्य हो भले अपूर्व ज्ञानरश्मि हो।।तीर्थ.।।7।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम संतरा अनार आपको चढ़ाय के।
मुक्ति वल्लभा निमित्त आपको मनाय के।।तीर्थ.।।8।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ में सुवर्ण पुष्प लेय के चढ़ाय के।
आत्मगुण अनंत शीघ्र नाथ! दीजिये अबे।।तीर्थ.।।9।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

यमुना सरिता नीर, प्रभु चरणों धारा करूँ।
मिले निजात्म समीर, शांतीधारा शं करें।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुरभित खिले सरोज, जिनचरणों अर्पण करूँ।
निर्मद करूँ मनोज, पाऊँ जिनगुण संपदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-दोहा-

पूरब पुष्कर द्वीप में, कर्मभूमि चौंतीस।
पुष्पांजलि कर पूजहूँ, नमूँ नमूँ नत शीश।।1।।

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-नरेन्द्र छंद-

'कच्छा' देश विदेह मेरु मंदर के पूरब में है।
छह खंडों में आर्यखंड इक, क्षेमापुर उसमें है।।
आर्यखंड में कर्मभूमि नित, जिनवर सदा विहरते।
मुनिगण धर्म जिनालय प्रतिमा, जजत भव्य सुख भरते।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहकच्छादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुकच्छा' छह खंडों में, आर्यखंड सुखभूमी।
क्षेमपुरी नगरी है मधि मे, पुण्यपुरुष की भूमी।।आर्य.।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहसुकच्छादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महाकच्छा' में आरजखंड कर्मभूमी है।
वहाँ अरिष्टा है रजधानी, शाश्वतकी भूमी है।।
आर्यखंड में कर्मभूमि नित, जिनवर सदा विहरते।
मुनिगण धर्म जिनालय प्रतिमा, जजत भव्य सुख भरते।।3।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहमहाकच्छादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'कच्छकावती' मध्य में, रक्ता रक्तोदा हैं।
मध्य रजतगिरि आर्यखंड मधि, नगरि अरिष्टपुरी है।।आर्य.।।4।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहकच्छकावतीदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता नदि के उत्तर में, 'आवर्ता' देश विदेहा।
आर्यखंड में नगरी खड्गा, वहाँ बनें गतदेहा।।आर्य.।।5।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहआवर्तादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'लांगलावर्ता' शाश्वत, पूर्वविदेह कहाता।
आर्यखंड में पुरी मंजूषा, वहाँ न लेश असाता।।आर्य.।।6।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहलागंलावर्तादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कला' के छहखंड में, आर्यखंड मनहारी।
'औषधि' नगरी है रजधानी, पुण्य पुरुष अवतारी।।आर्य.।।7।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहपुष्कलादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कलावती' वहाँ पर, छह खंड बने सदा से।
आर्यखंड में पुंडरीकिणी पुरी सुमुक्ति वहाँ से।।आर्य.।।8।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहपुष्कलावतीदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता नदि के दक्षिण दिश में, देवारण्य समीपे।
'वत्सादेश' सुआर्य खंड में, नगरि 'सुसीमा' दीपे।।आर्य.।।9।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहवत्सादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुवत्सा' आर्यखंड में, पुरी 'कुंडला' सोहे।
तीर्थंकर चक्री हलधर नर, मुनिगण भी मन मोहे।।आर्य.।।10।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहसुवत्सादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महावत्सा' में छह खंड, आर्यखंड के बीचे।
'अपराजिता' पुरी में मुनिगण, भव्यखेत को सींचे।।आर्य.।।11।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहमहावत्सादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्यो-पाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'वत्सकावती' वहाँ पर, जन वात्सल्य भरे हैं।
'प्रभंकर' पुरि आर्यखंड में, जिनवर जन्म धरे हैं।।आर्य.।।12।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहवत्सकावतीदेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रम्या' देश विदेह कहाता, 'अंका' है रजधानी।
आर्यखंड में जन्मे मानव, वरें स्वयं शिवरानी।।आर्य.।।13।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहरम्यादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुरम्या' छह खंडों में, आर्यखंड सुखकारी।
'पद्मावति' नगरी रजधानी, तीर्थंकर की प्यारी।।आर्य.।।14।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहसुरम्यादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रमणीया' है देश विदेहा, आर्यखंड के मधि में।
नगरी 'शुभा' शोभती सुंदर, तीर्थंकर हों उसमें।।आर्य.।।15।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहरमणीयादेशस्थितआर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्यो-पाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'मंगलावती' सुहाता, आर्यखंड के बीचे।
'रत्नसंचया' है शुभ नगरी, जिनवच भविजन सींचे।।
आर्यखंड में कर्मभूमि नित, जिनवर सदा विहरते।
मुनिगण धर्म जिनालय प्रतिमा, जजत भव्य सुख भरते।।16।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहमंगलावतीदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-चौपाई-

'पद्मा' देश सुअपर विदेहे, आर्यखंड में 'अश्वपुरी है।
तीर्थंकर मुनिगण जिनगेहा, जजूँ नित्य मैं धर मन नेहा।।17।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहपद्मा देशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्यो-पाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुपद्मा' में छहखंडा, सिंहपुरी मधि आरज खंडा।
तीर्थंकर मुनिगण जिनगेहा, जजूँ नित्य मैं धर मन नेहा।।18।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहसुपद्मादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महापद्मा' आरज में, 'महापुरी' रजधानी मधि में।
तीर्थंकर मुनिगण जिनगेहा, जजूँ नित्य मैं धर मन नेहा।।19।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहमहापद्मादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पद्मकावती' सुसोहे, आर्यखंड मधि विजयपुरी है।
तीर्थंकर मुनिगण जिनगेहा, जजूँ नित्य मैं धर मन नेहा।।20।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहपद्मकावतीदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शंखा' देश विदेह अनूपा, आर्यखंड में 'अरजा' भूपा।
तीर्थंकर मुनिगण जिनगेहा, जजूँ नित्य मैं धर मन नेहा।।21।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहशंखा देशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिना' देश छहों खंडों में, विरजा नगरी आर्यखंड में।
तीर्थंकर मुनिगण जिनगेहा, जजूँ नित्य मैं धर मन नेहा।।22।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहनलिनादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कुमुदा' देश सु आर्यखंड में, पुरी अशोका ठीक मध्य में।
तीर्थंकर मुनिगण जिनगेहा, जजूँ नित्य मैं धर मन नेहा।।23।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहकुमुदादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सरित्' देश के आर्यखंड में, पुरी 'वीतशोका' है मधि में।
तीर्थंकर मुनिगण जिनगेहा, जजूँ नित्य मैं धर मन नेहा।।24।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहसरित्देशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वप्रा' देश में आर्यखंड में, रजधानी 'विजया' पुरि मधि में।
तीर्थंकर मुनिगण जिनगेहा, जजूँ नित्य मैं धर मन नेहा।।25।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहवप्रादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुवप्रा' आर्यखंड में, पुरी वैजयंता' है मधि।
तीर्थंकर मुनिगण जिनगेहा, जजूँ नित्य मैं धर मन नेहा।।26।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहसुवप्रादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महावप्रा' आरज में, पुरी 'जयंता' जिनवर जन्में।
तीर्थंकर मुनिगण जिनगेहा, जजूँ नित्य मैं धर मन नेहा।।27।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहमहावप्रादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'वप्रकावती' आर्य में, 'अपराजिता' पुरी है मधि।
तीर्थंकर मुनिगण जिनगेहा, जजूँ नित्य मैं धर मन नेहा।।28।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहवप्रकावतीदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गंधा देश सुआरजखंड में, 'चक्रपुरी' में जिनवर जन्में।
तीर्थंकर मुनिगण जिनगेहा, जजूँ नित्य मैं धर मन नेहा।।29।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहगंधादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुगंधा' के आरज में, 'खड्गपुरी' रजधानी मधि में।
तीर्थंकर मुनिगण जिनगेहा, जजूँ नित्य मैं धर मन नेहा।।30।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहसुगंधादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'गंधिला' आर्यखंड है, मध्य 'अयोध्या' रजधानी है।
तीर्थंकर मुनिगण जिनगेहा, जजूँ नित्य मैं धर मन नेहा।।31।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहगंधिलादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधमालिनी' आर्यखंड में, पुरी 'अवध्या' रजधानी में।
तीर्थंकर मुनिगण जिनगेहा, जजूँ नित्य मैं धर मन नेहा।।32।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहगंधमालिनीदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-गीता छंद-

इस पूर्वपुष्करद्वीप में दक्षिणदिशी शुभ 'भरत' है।
रजताद्रि गंगासिन्धु से छहखंड में इक 'आर्य' है।।
मधि में अयोध्या राजधानी तीर्थंकर जन्में वहाँ।
इस आर्यखंड में देवता नव हो रहे पूजूँ यहाँ।।33।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिदक्षिणदिक्भरतक्षेत्रार्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस द्वीप में उत्तरदिशी वरक्षेत्र ऐरावत कहा।
छहखंड में मधि आर्य में नगरी 'अवध्या' शुभ अहा।।
तीर्थंकरादि जन्म से नव देवता से पूज्य हैं।
मैं अर्घ लेकर पूजहूँ निज आत्मा हो शुद्ध है।।34।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-उत्तरदिक्ऐरावतक्षेत्रार्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्यं-

चौंतीस हैं ये कर्म भूमी तीर्थंकर होते यहाँ।
भवि कर्म हनकर सिद्ध बनते साधुगण विहरें यहाँ।।
जिनबिंब जिनमंदिर अमित मैं पूजहूँ नितभक्ति से।
आनिष्ट योग व इष्ट के वीयोग विनशें भक्ति से।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इन कर्मभूमी में सदा ही आर्यिकायें विहरतीं।
कुल शीलव्रत से शुद्ध हैं बस एक साड़ी पहनतीं।।
उपचार के महाव्रत धरें सुरइन्द्र नरपति वंद्य हैं।
मैं पूजहूँ नित भक्ति से ये भक्तवत्सल मात हैं।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितसर्वार्यिकाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थकरों के गर्भ जन्मोत्सव व तप ज्ञानादि से।
जो पूज्य तीरथ हो गये उनको नमूँ नित भाव से।।
गणधर मुनीश्वर के वहाँ पर ज्ञान मुक्ति स्थान हैं।
उन तीर्थक्षेत्रों को जजूँ ये मुक्ति कारण मान्य हैं।।3।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थिततीर्थंकरगणधरमुनि-गणपंचकल्याणकादितीर्थक्षेत्रेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

जयमाला

-शंभु छंद-

जय जय पुष्कर के तीर्थंकर, जय सिद्ध साधु गण परमेष्ठी।
जय जय जिनधर्म जिनागम हों, जय जय जिनगृह जिनवर मूर्ती।।
जय जय जय सर्व आर्यिकायें, जो आतम अनुभव करता है।
जय सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण, ये भवदधि तारण युक्ती हैं।।1।।

इकतालिस सहस पाँच सौ उन्यासी योजन का 'भरत' कहा।
उनतिस हजार सात सौ चौरानवे[1] योजनों मात्र रहा।।
बत्तीस विदेह में एक एक, क्षेत्रों का व्यास प्रमाण कहा।
इनमें छहखंडों मध्य आर्यखंडों में जिनमुनि भ्रमण कहा।।2।।

बहुआरंभ और परिग्रह से, नरकायू बंध हुआ करता।
मायाचारी अरु आर्तध्यान से, तिर्यगायु का बंध करता।।
अल्पारंभ अल्पपरिग्रह से, नर आयु बंध हुआ करता।
नितप्रति कोमल परिणामों से, मानव आयु का बंध करता।।3।।

बिन शीलव्रतों के अशुभभाव, नरकायु तिर्यक् के कारण है।
शुभभाव शीलव्रत के बिन भी, नर आयु देव के कारण हैं।।
मुनि के महाव्रत संयम आदि, अणुव्रत आदी से देव आयु।
पूजा दानादि क्रियाओं से, बंधती है उत्तम देव आयु।।4।।

बिन इच्छा व्रत से पालें या, नानाविध तप जो करते हैं।
वे भी देवायु बंध करें, समकित बिन भी सुर बनते हैं।।
सम्यग्दर्शन से देवायू, यह निश्चय शास्त्र बताते हैं।
सम्यग्दृष्टी जन दुर्गति में, नहिं जाते दिव में जाते हैं।।5।।

तीनों लोकों त्रयकालों में, सम्यक्त्व समान न हितकारी।
मिथ्यात्व समान न शत्रू है, समकित ही है शिवसुखकारी।।

1. सिद्धांतसार दीपक, पृ. 363।

हे नाथ! आपकी भक्ती से, सम्यग्दर्शन दृढ़ बन जावे।
नरकादि गती में नहिं जाऊँ, इक दो भव पा भव नश जावे।।6।।

हो भेदज्ञान निश्चल मेरा, बस निज का ही नित ध्यान रहे।
चारित्र सुदृढ़ होवे मेरा, अंतिम क्षण तक शुभ ध्यान रहे।।
दुःखों का क्षय होवे पुनरपि, कर्मों का क्षय होवे प्रभुजी।
हो बोधिलाभ फिर सुगति गमन, ऐसा ही वर दीजे प्रभुजी।।7।।

हो अंत समाधीमरण नाथ! जिनगुण की संप्राप्ती होवे।
प्रभु 'ज्ञानमती' की अर्ज सुनों, इनसे अतिरिक्त न कुछ होवे।।
जब तक नहिं निजपद मिले नाथ! तब तक मन में तुम चरण रहें।
मेरा मन तुम पद में रत हो, इक क्षण भी अन्य कहीं न रहे।।8।।

-दोहा-

अर्हत्सिद्धाचार्य गुरू, पाठक साधु महान्।
जिनवृष श्रुत प्रतिमा निलय, नमूँ नमूँ गुणखान।।9।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 44)

विद्युन्माली मेरु पूजा

अथ स्थापना-गीता छंद

श्री मेरु विद्युन्मालि पंचम द्वीप पुष्कर अपर में।
तीर्थंकरों का न्हवन होता है सदा तिस उपरि में।।
सोलह जिनालय हैं वहाँ सुरवंद्य जिन प्रतिमा तहाँ।
आह्वानन कर पूजूँ सदा मैं भक्ति श्रद्धा से यहाँ।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थविद्युन्मालिमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिम्ब-समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थविद्युन्मालिमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिम्ब-समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थविद्युन्मालिमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिम्ब-समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-शंभु छंद

क्षीरोदधि का शुचि जल लेकर, तुम चरण चढ़ाने आया हूँ।
भव-भव का कलिमल धोने को, श्रद्धा से अति हरषाया हूँ।।
विद्युन्माली मेरू पंचम, उसमें सोलह जिन आलय हैं।
उन सबमें भवविजयी प्रतिमा, पूजत ही मिले सुखालय है।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थविद्युन्मालिमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिन-बिम्बेभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हरि चंदन कुंकुम गंध लिये, जिन चरण चढ़ाने आया हूँ।
मोहारिताप संतप्त हृदय, प्रभु शीतल करने आया हूँ।।विद्यु.।।2।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थविद्युन्मालिमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिन-बिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षीरांबुधि फेन सदृश उज्जवल, अक्षत धोकर के लाया हूँ।
क्षय विरहित अक्षत सुख हेतू, प्रभु पुंज चढ़ाने आया हूँ।।विद्यु.।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थविद्युन्मालिमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिन-बिम्बेभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

बेला चंपक अरविंद कुमुद, सुरभित पुष्पों को लाया हूँ।
मदनारिजयी तव चरणों में, मैं अर्पण करने आया हूँ।।विद्यु.।।4।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थविद्युन्मालिमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिन-बिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पूरणपोली खाजा गूझा, मोदक आदिक बहु लाया हूँ।
निज आतम अनुभव अमृत हित, नैवेद्य चढ़ाने आया हूँ।।विद्यु.।।5।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थविद्युन्मालिमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिन-बिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणिमय दीपक में ज्योति जले, सब अंधकार क्षण में नाशे।
दीपक से पूजा करते ही, सज्ज्ञानज्योति निज में भासे।।विद्यु.।।6।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थविद्युन्मालिमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिन-बिम्बेभ्यः मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध विमिश्रित धूप सुरभि, धूपायन में खेते क्षण ही।
कटुकर्म दहन हो जाते हैं, मिलता समरस सुख तत्क्षण ही।।विद्यु.।।7।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थविद्युन्मालिमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिन-बिम्बेभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

एला केला अंगूरों के, गुच्छे अति सरस मधुर लाया।
परमानंदामृत चखने हित, फल से पूजन कर सुख पाया।।विद्यु.।।8।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थविद्युन्मालिमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिन-बिम्बेभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत पुष्प चरू, वर दीप धूप फल लाया हूँ।
निज गुण अनंत की प्राप्ति हेतु, तुम अर्घ्य चढ़ाने आया हूँ।।विद्यु.।।9।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थविद्युन्मालिमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिन-बिम्बेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

परम शांति के हेतु, शांतीधारा मैं करूँ।
सकल विश्व में शांति, सकल संघ में हो सदा।।10।।

शांतये शांतिधारा।

चंपक हरसिंगार, पुष्प सुगंधित अर्पिते।
होवे सुख अमलान, दुःख दारिद्र पलायते।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-दोहा-

पंचम मेरू जिन भवन, शाश्वत नित शोभंत।
पुष्पांजलि कर पूजते, मिले स्वात्म आनंद।।1।।

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-गीता छंद-

श्री मेरु पंचम की धरा पर, भद्रसाल सुवन कहा।
ता पूर्व दिश जिनधाम शाश्वत, मूर्ति से शोभित अहा।।
जल गंध आदिक अर्घ्य लेकर, मैं करूँ नित अर्चना।
स्वातंत्र्य सुख साम्राज्य हेतू, मैं करूँ नित वंदना।।1।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस मेरु विद्युन्मालि में, वन भद्रसाल जु सोहता।
दक्षिण दिशा में जिनभवन, निज विभव से मन मोहता।।जल.।।2।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितदक्षिणदिक्जिनालयजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस मेरु प्रथमहि वन विषे पश्चिम दिशा में जिनभवन।
उसमें जिनेश्वर बिंब शाश्वत, राजते भव भय मथन।।जल.।।3।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थितपश्चिमदिक्जिनालयजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस मेरु के भूवन विषै उत्तरदिशी जिन सद्म हैं।
उसमें महामहनीय जिनवर, बिंब के पदपद्म हैं।।जल.।।4।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुसंबंधिभद्रसालवनस्थित-उत्तरदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-गीता छंद-

वर द्वीप पुष्कर अर्ध में हैं, पाँचवाँ सुरगिरि कहा।
नंदन विपिन में पूर्वदिक्, जिनगृह अनूपम छवि लहा।।
चंचल मनोमर्कटविजेता[1], साधुगण वंदन करें।
हम पूजते नित अर्घ्य ले, भवसंतती खंडन करें।।5।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरशैल पंचम में सदा, नंदन सुवन विख्यात है।
दक्षिण दिश में जिनभवन, पूजें भविक हरषात हैं।।चंचल.।।6।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितदक्षिणदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम सुराचल[2] में विपिन[3], नंदन अतुल महिमा धरे।
पश्चिम दिशा में जैनगृह, अतिशयभरी प्रतिमा धरे।।चंचल।।7।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनस्थितपश्चिमदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरशैल विद्युन्माालि में, नंदनवनी तरु पंक्ति से।
जन मन हरे उत्तरदिशा के, मणिमयी जिनसद्म[4] से।।चंचल।।8।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुसंबंधिनंदनवनस्थित-उत्तरदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-दोहा-

कनकाचल[5] पंचम विषे, वन सौमनस रसाल।
पूरबदिश में जिनभवन, अर्च हरूँ जंजाल।।9।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरगिरि वन सौमनस में, दक्षिण दिश जिनधाम।
तिनकी जिनप्रतिमा जजूं, पूर्ण होय सब काम।।10।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितदक्षिणदिक्जिनालयजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. मनरूपी बंदर को वश करने वाले। 2. मेरु। 3. वन। 4. जिनमंदिर। 5. मेरु

स्वर्णाचल[1] वन सौमनस, पश्चिम दिश जिनगेह।
इन्द्रवंद्य जिनबिंब को, पूजूँ धर मन नेह।।11।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थितपश्चिमदिक्जिनालयजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युन्माली मेरु में, वन सौमनस अनूप।
उत्तरदिश जिनवेश्म को, जजत मिले निजरूप।।12।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुसंबंधिसौमनसवनस्थित-उत्तरदिक्जिनालयजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-मोतीदाम छंद-

सुराचल पंचम में अभिराम, वनी पांडुक अतिरम्य ललाम।
जिनालय पूरबदिश में जान, जजूँ कर जोड़ करो शिवथान।।13।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुराद्री[1] विद्युन्माली नाम, सरस वन पांडुक मुनि विश्राम।
जिनालय दक्षिणदिश में सार, जजूँ कर जोड़ करो भव पार।।14।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितदक्षिणदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कनकपर्वत[2] पंचम शिवकार, सुवन पांडुक में सुर परिवार।
जिनालय पश्चिमदिश रत्नाभ, जजूँ जिननाथ करो शिवलाभ।।15।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितपश्चिमदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुवर्णाचल पंचम परधान, सुपांडुक वन है सौख्य निधान।
जिनेश्वरगृह उत्तर दिश जान, भरो मम आश जजूँ इह थान।।16।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुसंबंधिपांडुकवनस्थितउत्तरदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. मेरु।

-पूर्णार्घ्य-दोहा-

विद्युन्माली मेरु में, सोलह जिनवर धाम।
पूरण अर्घ्य संजोय के, जजूँ लहूँ शिवधाम।।1।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशजिनालयेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्रह सौ अठबीस हैं, जिनेश्वर बिंब महान।
पूरण अर्घ्य चढ़ाय के, नमूँ नमूँ गुण खान।।2।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशजिनालयमध्यविराजमानएकसहस्रसप्त-शत-अष्टाविंशतिजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पांडुक वन के विदिक् में, पांडुशिलादि प्रसिद्ध।
नमूँ नमूँ नित भाव से, लहूँ आत्मसुख सिद्ध।।3।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुविदिक्पांडुकादिशिलाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

-शंभु छंद-

जय जय विद्युन्माली मेरू, जय जय सुवरनमय जिनगेहा।
जय जय मृत्युंजयि जिनप्रतिमा, जय जय सुर पूजें धर नेहा।।
जय जय ऋषि गगन गमनचारी, श्रद्धा से वंदन करते हैं।
जय जय मुनि समरस आस्वादी स्वात्मा का चिंतन करते हैं।।1।।
मैं शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध एक, चिट्पिंड अखंड अरूपी हूँ।
स्वाभाविक दर्शन ज्ञान वीर्य, सुखरूप अचिन्त्य स्वरूपी हूँ।।
मैं हूँ अनंत गुण रत्नराशि, मैं परम ज्योतिमय परमात्मा।
मैं सकल विमल और अकल अमल हूँ, परमानंदमयी आत्मा।।2।।
यद्यपि व्यवहारनयापेक्षा मैं दीन दुखी संसारी हूँ।
इन कर्मों का कर्ता भोक्ता, नाना प्रकार तनुधारी हूँ।।
भव पंच परावर्तन कर कर, चहुँगति में घूमा करता हूँ।
बस जन्म मरण के चक्कर में, निशदिन ही झूमा करता हूँ।।3।।

फिर भी निश्चयनय से मैं ही, नित शुद्ध सिद्ध परमात्मा हूँ।
रस गंध वर्ण स्पर्श रहित, चिन्मूरति चैतन्यात्मा हूँ।।
ये राग रू द्वेष विभाव भाव, सब कर्मोदय से आते हैं।
जब कर्म बंध सम्बंध नहीं, तब कैसे ये रह पाते हैं।।4।।

निश्चय व्यवहार उभयनय से, मैं तत्त्वों का ज्ञाता होऊँ।
फिर नय का आश्रय छोड़ सभी, इक निर्विकल्प में रत होऊँ।।
मैं ध्याता हूँ तुम ध्येय ध्यान, फल आदिक भेद समाप्त करूँ।
बस एकाकी एकत्व लिये, निज में ही निज को प्राप्त करूँ।।5।।

प्रभु ऐसी स्थिति आने तक, तुम चरण कमल का ध्यान करूँ।
पूर्णैक 'ज्ञानमती' पाने तक, पूजूँ वंदूँ गुणगान करूँ।।
हे नाथ! तुम्हारी भक्ति का, मुझको फल केवल यही मिले।
बस पास तुम्हारे आ जाऊँ, ऐसा मेरा सौभाग्य खिले।।6।।

-दोहा-

पश्चिम पुष्कर द्वीप में, विद्युन्माली मेरु।
पूजत ही निज सुख मिले, मिटे जगत का फेर।।7।।

ॐ ह्रीं विद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 45)

विद्युन्मालीमेरु संबंधि षट् कुलाचल जिनालय पूजा

-अथ स्थापना-दोहा-

पश्चिम पुष्कर द्वीप में, छह कुल पर्वत जान।
तिनके श्री जिनधाम को, पूजूँ श्रद्धा ठान।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टकं-भुजंगप्रयात छंद (नरेन्द्रं फणीन्द्रं...)

पयोराशि[1] को नीर झारी भराके।
अनंते भवों की तृषा को बुझाके।।
कुलाद्री[2] छहों के जिनागार[3] पूजों।
अनंते भवों के दुखों से बचूं जो।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कपूरादि चंदन घिसा भर कटोरी।
महामोह संताप नाशो घनेरी।।कुलाद्री.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सुधासूति[4] सम तंदुलों को धुलाये।
चिदानंद चैतन्य पीयूष पाये।।

---

1. क्षीर समुद्र । 2. कुल पर्वत। 3. जिनमंदिर । 4. चंद्रमा।

कुलाद्री छहों के जिनागार पूजों।
अनंते भवों के दुखों से बचूं जो।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सरोजात[1] कल्हार[2] मंदार लाके।
महामार[3] जेता प्रभू को चढ़ाके।।कुलाद्री.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

कलाकंद लड्डू पुआ पूरियां हैं।
निजातम सुधा हेतु चरु अर्पिया है।।कुलाद्री.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कपूरादि की ज्योति उद्योतकारी।
मनोगेह में ज्ञान की ज्योति भारी।।कुलाद्री.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगनि पात्र में धूप खेऊँ सुगंधी।
सभी पाप राशी जले अग्नि संगी।।कुलाद्री.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अनंनास नींबू नरंगी मंगाके।
महामोक्ष की आश लेके चढ़ा के।।कुलाद्री.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

उदक गंध अक्षत प्रसूनादि लाऊँ।
निजातम विशुद्धी करो शीश नाऊँ।।

1. कमल। 2. लाल कमल। 3. काम विजयी।

कुलाद्री छहों के जिनागार पूजों।
अनंते भवों के दुखों से बचूं जो।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

पद्म सरोवर नीर, सुवरण झारी में भरूँ।
जिनपद धारा देय, भववारिधि से उत्तरूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुवरण पुष्प मंगाय, प्रभु चरणन अर्पण करूँ।
वर्ण गंध रस फास, विरहित जिनपद को वरूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

-अथ प्रत्येक अर्घ्य-दोहा-

धर्मामृत वर्षा करें, मेघ अलौकिक आप।
तुम गुण कण[1] को गावते, मिटें सकल संताप।।1।।

इति श्री विद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

मद अवलिप्तकपोल छन्द-(मेरी भावना)

विद्युन्माली दक्षिण दिश में, 'हिमवन' नग कलधौत[2] समान।
ग्यारह कूटों में अनुपम इक, सिद्धकूट जिनमंदिर जान।।
बीचोंबीच पद्म सरवर में कमल बीच श्रीदेवी थान।
जिनमंदिर जिनप्रतिमा पूजूँ, चिच्चैतन्य सुधारस[3] दान।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिहिमवन्पर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम सुरगिरि दक्षिण दिश में, चांदी सदृश 'महाहिमवान'।
बीच सरोवर महापद्म में, कमल मध्य ही देवी मान।।

1. लेश । 2. सुवर्ण। 3. अमृत।

आठ कूट में अनुपम इक है, सिद्धकूट अविचल गुणखान।
जिनमंदिर जिनप्रतिमा पूजूँ, चिच्चैतन्य सुधारस दान।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिमहाहिमवान्पर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कनकाचल[1] पंचम दक्षिण दिश, 'निषध' तप्त सुवरण छवि मान।
बीच तिगिंछ सरोवर मध्ये, कमल बीच धृतिदेवी जान।।
नव कूटों में अनुपम इक है, सिद्धकूट शिव मारग जान।
जिनमंदिर जिनप्रतिमा पूजूँ, चिच्चैतन्य सुधारस दान।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनिषधपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युन्माली मेरू उत्तर, 'नीलाचल' वैडूर्य समान।
मध्य केशरी द्रह में पंकज, बीच कीर्तिदेवी द्युतिमान।।
नवकूटों में सिद्धकूट पर, मणि रत्नों से खचित बखान।
जिनमंदिर जिनप्रतिमा पूजूँ, चिच्चैतन्य सुधारस दान।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिनीलपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम सुरनग के उत्तर में रजतवर्ण 'रुक्मीगिरि' जान।
मध्य सरोवर पुंडरीक में, कमल बीच बुद्धीसुरि मान।।
आठ कूट में अनुपम इक है, सिद्धकूट शिव पंथ महान्।
जिनमंदिर जिनप्रतिमा पूजूँ, चिच्चैतन्य सुधारस दान।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिरुक्मिपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णाचल पंचम के उत्तर, शिखरी पर्वत स्वर्ण समान।
मध्य महापुंडरीक सरोवर, जलज[2] बीच लक्ष्मी सुरि मान।।

1. मेरु। 2. कमल ।

ग्यारह कूटों में इक अनुपम, सिद्धकूट शाश्वत सुखखान।
जिनमंदिर जिनप्रतिमा पूजूँ, चिच्चैतन्य सुधारस दान।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिशिखरीपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य-दोहा-

पंचम[1] सुरगिरि के उभय, षट् कुलपर्वत सिद्ध।
तिनके षट् जिनवर भवन, पूजत लहूँ समृद्ध।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–सोरठा–

जय जय श्री जिनधाम, जय जय जग चूड़ामणी।
जय जय जिनवर नाम, सुमिरन से ही सुख मिले।।1।।

चाल (हे दीनबन्धु....)

जो शाश्वते जिनमूर्तियों की वंदना करें।
वे रोग शोक संकटों की खंडना करें।।
हे नाथ! मेरी कामना को पूर्ण कीजिये।
अनादि मोह भावना को चूर्ण कीजिये।।1।।
ये द्रव्य कर्म आत्मा से एक हो रहे।
ये भावकर्म निजस्वभाव में विकार हैं।।
नोकर्म आत्मा के विविध रूप बनाते।
तिर्यंच आदि देह धार नाच नचाते।।2।।

1. पाँचवा मेरु।

ज्ञानावरण है कर्म मेरे ज्ञान को ढके।
ये दर्शनावरण करम निजरूप को ढके।।
ये कर्म वेदनीय सुक्ख दुःख दे रहा।
ये मोहनीय कर्म मुझे मूढ़ कर रहा।।3।।

यह नाम कर्म नाना रूप मुझसे धराता।
औ गोत्र कर्म उच्च नीच कुल में घुमाता।।
आयू करम चारों गती में रोक धरे हैं।
औ अन्तराय कर्म सदा विघ्न करे हैं।।4।।

आठों करम के भेद कहे घाति अघाती।
उत्तर प्रकृती भेद से हैं आत्म विघाती।।
प्रत्येक कर्म के असंख्य भेद कहे हैं।
जो सर्वदा विपाक[1] में अनंत भये हैं।।5।।

इन अष्ट कर्मराशि में जो मोहनी कहा।
उससे अनंत काल तक निजरूप ना लहा।।
जो मोहनी को जीत के निर्मोह बन गये।
वे मृत्यु को भी मार के बस मोक्ष को गये।।6।।

हे देव! आप तो अनंत कर्मजयी हैं।
अनंत दर्श ज्ञान सौख्य वीर्यमयी हैं।।
बस आपने ही मोहनी का नाश किया है।
बस आपने ही मोक्ष में निवास किया है।।7।।

इस हेतु से मैं आपके ही पास में आया।
वसु कर्म नासने की युक्ति सीखने आया।।
करके कृपा करुणानिधान शक्ति दीजिये।
इस मोह शत्रु को सदा को नष्ट कीजिये।।8।।

1. उदय।

–दोहा–

दुःखितजन वत्सल प्रभो! करिये मुझ प्रतिपाल।
केवल 'ज्ञानमती' निधी, देकर करो निहाल।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषट्कुलाचलस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 46)

विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी चार गजदंत जिनालय पूजा

-अथ स्थापना-अडिल्ल छंद-

अमर द्वीप पुष्कर में, सुरगिरि पांचवों।
ताके विदिशा नागदंत चउ जानवों।।
तापे शाश्वत जिनमंदिर शिव द्वार हैं।
आह्वानन कर जजत, मिले भव पार है।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदंतसिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

-अथाष्टकं-रोला छन्द-

(चाल-अहो जगत् गुरुदेव)

यमुना सरिता अंबु[1], कंचन झारी भरिये।
भव तप शीतल हेतु, जिनपद धारा करिये।।
विद्युन्माली मेरु, विदिशा के गजदंता।
शाश्वत जिनगृह सिद्ध, पूजूं श्री भगवंता।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयज केशर संग, कनक कटोरी भरिये।
अलि गुंजत वरगंध, जिनपद चर्चन करिये।।

1. नीर।

विद्युन्माली मेरु, विदिशा के गजदंता।
शाश्वत जिनगृह सिद्ध, पूजूं श्री भगवंता।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

हार तुषार[1] समान, तंदुल धवल अखंडे।
विमल विशद गुण हेतु, पुंज करूं अघ खंडे।।वि.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरतरु के बहु पुष्प, नाना वर्ण वर्ण के।
कामजयी जिनदेव, अर्पूं आप चरण पे।।वि.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

बालूशाही खीर, मधुर इमरती लाये।
जनम जनम की भूख, नाशन हेतु चढ़ाये।।वि.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक ज्योति प्रकाश, निश अंधेर हरे है।
दीपक से जिन पूज, मन अंधेर टरे है।।वि.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप सुगंधित खेय, दिश दिश सौरभ फैले।
जिनपद पंकज सेय, कर्म जरें बहु मैले।।वि.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

लीची आम अनार, अनंनास फल लायो।
अनुपम फल की आश, करके आप चढ़ायो।।

1. बरफ

विद्युन्माली मेरु, विदिशा के गजदंता।
शाश्वत जिनगृह सिद्ध, पूजूं श्री भगवंता।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फल आदि मिलाय, कनक थाल भर लीने।
क्षायिकलब्धी[1] हेतु, प्रभु तुम अर्पण कीने।।वि.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल ले भृंग में।
श्रीजिनचरण सरोज, धारा देते भव मिटे।।10।।

शांतये शांतिधारा।।

सुरतरु के सुम लेय, प्रभु पद में अर्पण करूँ।
कामदेव मद नाश, पाऊँ आनंद धाम मैं।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

अकृत्रिम जिनवर भवन, गजदंतों पर जान।
तिनकी पूजन हेतु मैं, सुमन चढ़ाऊँ आन।।1।।

इति श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिगजदन्तपर्वतस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

चौबोल छन्द (चाल–मेरी भावना)

सुरगिरि के आग्नेय विदिश में, सौमनस्य गजदंत कहा।
रतनमयी यह पर्वत सुंदर, सात कूट से शोभ रहा।।
मेरु निकट श्री सिद्धकूट पर, जिनमंदिर छवि रतनमयी।
वहां शक्ति नहिं गमन करन की, अतः जजूँ तुम चरण यहीं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरोः आग्नेयविदिशायां सौमनसगजदन्तस्थितसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1.नवक्षायिक भाव।

स्वर्णाचल नैऋत्य विदिश में, विद्युत्प्रभ गजदंत दिपे।
नव कूटों युत तप्तकनकछवि[1], दिनकर लज्जित संत[2] छिपे।।
सुरगिरि सन्निध सिद्धकूट पर, जिनमंदिर शिवगमन मही।
वहां शक्ति नहिं गमन करन की, अतः जजूँ तुम चरण यहीं।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरोः नैऋत्यविदिशायां विद्युत्प्रभगजदन्तस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम सुरगिरि के वायव्ये[3], गंध मादनाचल सोहे।
स्वर्णवर्णमय सात कूट युत, सुर नर किन्नर मन मोहे।।
सुर नग सन्निध सिद्धकूट पर ,जिनगृह अनुपम अचल मही।
वहां शक्ति नहिं गमन करन की, अतः जजूँ तुम चरण यहीं।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरोः वायव्यविदिशायां गंधमादनगजदन्तस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरू के ईशान कोण में, माल्यवंत गजदंत रहे।
छवि वैडूर्यमणी सम अनुपम, नवकूटोंयुत संत कहें।।
सुरगिरि सन्निध सिद्धकूट पर, जिनगृह शाश्वत सिद्ध कहीं।
वहां शक्ति नहिं गमन करन की, अतः जजूँ तुम चरण यहीं।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरोः ईशानविदिशायां माल्यवद्गजदन्तस्थित-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–दोहा–

पंचम सुरगिरि के विदिश, हाथी दंत समान।
गजदंते चउ हैं तहाँ, जिनगृह जजूँ प्रधान।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

1. तपाए सोने से सदृश । 2. होता हुआ। 3. पश्चिम-उत्तर के मध्य की दिशा।

जयमाला

–रोला छन्द–

जय जय सिद्ध महंत, जय जय श्री भगवंता।
जय जय नादि अनंत, जय जय धर्म धरंता।।
जय जय सुर नर इन्द्र, नमत सदा शिर नाके।
जय जय मुनिगण वृंद, वंदें अखिल धरा के।।1।।

यह भव वन विकराल, नित्य[1] न दीखे कोई।
शाश्वत नित्य त्रिकाल, श्री जिनमंदिर होई।।
इस भव वारिधि बीच, शरण नहीं कोई जानो।
शरणागत प्रतिपाल, जिनवर भवन बखानो।।2।।

भव का भ्रमण अपार, पंच प्रकार कहा है।
द्रव्य क्षेत्र अरु काल, भव अरु भाव रहा है।।
अब तक काल अनंत, बहु परिवर्तन कीने।
अब आयो तुम पास, भ्रमण जलांजलि दीने।।3।।

मैं हूँ एक अनाथ, तन भी साथ न देवे।
एक तुम्हारी भक्ति, भव भव दुख हर लेवे।।
मैं हूँ सबसे भिन्न, चिच्चैतन्य स्वरूपी।
तुम दर्शन कर नाथ, पायो सुख अनरूपी।।4।।

यह तन अशुचि स्वभाव, निज आतम शुचि देवा।
कर्मकलंक विभाव, दूर करो जिनदेवा।।
रत्नत्रय से शुद्ध, परमविशुद्ध महात्मा।
आतम अनुभव पाय, शीघ्र बनूँ परमात्मा।।5।।

आस्रव बंध अनंत, भव भव भ्रमण करावें।
प्रभु इनको परसंग, भव भव माहिं रुलावें।।
कर्मास्रव को रोक संवर संत[2] करे हैं।
नाथ तुम्हारे पास, बहुविध कर्म झरे हैं।।6।।

1. यहाँ से बारह भावना शुरू हैं। 2. साधु।

पुरुषाकार त्रिलोक, मध्य कही त्रस नाली।
ऊर्ध्व अधः मधलोक, बाहर में नभ खाली।।
त्रस नाली के माहिं, त्रस स्थावर जीवा।
चहुंगति के दुख पाय, भ्रमण करंत सदीवा।।7।।

तुम चरणांबुज ध्याय, कर्म कलंक जलाके।
लोक शिखर पे जाय, आतम शुद्ध बनाके।।
दुर्लभ मानुष योनि, दुर्लभ श्री जिनसेवा।।
दुर्लभ समकित रत्न, संयम है दुख छेवा।।8।।

श्री जिनधर्म महान्, अनुपम सौख्य करंता।
देवे नितप्रति दान, केवल श्री भगवंता।।
भव वन में चिरकाल, मैंने भ्रमण किया जो।
जैनधर्म बिन नाथ, चहुँगति वास किया जो।।9।।

अब तुम धर्म जिनेश, पाय भयो धनवाना।
जिनगुण संपद हेतु, नित्य जजूँ शिवदाना।।
इंद्र समान विभूति, चक्रवर्ति सम भोगा।
तुम पद भक्ति विभूति, से फीके सब भोगा।।10।।

–घत्ता–

जय जय गजदंता, जिनगृह संता, जय सुख अनुपम अचल महा।
जो तुम पद ध्यावें, कर्म जलावें, 'ज्ञानमती' शिव सौख्य लहा।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तसिद्धकूटजिनालयस्थसर्व-जिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 47)

विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी पुष्कर वृक्ष शाल्मलि वृक्ष जिनालय पूजा

-अथ स्थापना-नरेन्द्र छंद-

(चाल-इह विधि राज करे.....)

पश्चिम पुष्कर अर्ध द्वीप में, मध्य कनक गिरि सोहे।
ताके दक्षिण उत्तर दिश में, भोगधरा[1] मन मोहें।।
उत्तर कुरु ईशान कोण में, पुष्करवृक्ष सुहावे।
दक्षिण देवकुरू नैऋत दिश, शाल्मलि तरु मन भावे।।1।।

-दोहा-

दोनों तरु की शाख पर, भूकायिक[2] जिनगेह।
जिनमूर्ती की थापना, करूँ भक्ति भर नेह।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरोः ईशाननैऋत्यकोणसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्ष-स्थितजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरोः ईशाननैऋत्यकोणसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्ष-स्थितजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह!अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरोः ईशाननैऋत्यकोणसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्ष-स्थितजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

-अथाष्टकं-रोला छन्द-

(चाल-मेरी भावना.....)

पद्माकर का जल अतिशीतल, पद्म पराग सुवास मिला।
रागभाव मल धोवन कारण, धार करूँ मन कंज[3] खिला।।

1.भोगभूमि। 2.पृथ्वीकायिक । 3.कमल।

पृथ्वीकायिक तरु शाखा पे, जिनमंदिर जग पूज्य कहें।
जो जन पूजें भक्ति भाव से, वे पद त्रिभुवन पूज्य लहें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

केशर घिस कर्पूर मिलाया, भ्रमर पंक्तियाँ आन पड़ें।
जिनपद पूजन से नश जाते, कर्म शत्रु भी बड़े-बड़े।।पृथ्वी.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चंद्र चंद्रिका सम सित तंदुल, पुंज चढ़ाऊँ भक्ति भरे।
अमृत कण सम निज समकित गुण पाऊँ अतिशय शुद्ध खरे।।पृथ्वी.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्पवृक्ष के सुमन सुगंधित, पारिजात वकुलादि खिले।
कामबाणविजयी जिनवल्लभ चरण जजत नवलब्धि[1] मिले।।पृथ्वी.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

रसगुल्ला रसपूर्ण अंदरसा, कलाकंद पयसार[2] लिये।
अमृतपिंड सदृश नेवज से, जिनपद पंकज पूज किये।।पृथ्वी.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हेमपात्र में घृत भर बत्ती, ज्योति जले तम नाश करे।
दीपक से करते जिन पूजन, हृदय पटल की भ्रांति हरे।।पृथ्वी.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्निपात्र में धूप जलाकर, अष्ट कर्म को दग्ध करें।
निज आतम के भावकर्म मल, द्रव्य कर्म भी भस्म करें।।

1.क्षायिक दर्शन आदि नव क्षायिक भाव। 2.मलाई।

पृथ्वीकायिक तरु शाखा पे, जिनमंदिर जग पूज्य कहें।
जो जन पूजें भक्ति भाव से, वे पद त्रिभुवन पूज्य लहें।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल अंगूर अनंनासादिक, सरस मधुर ले थाल भरे।
नव क्षायिक लब्धी फल इच्छुक, पूजूं तुम पादाब्ज[1] खरे।।पृथ्वी.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत माला चरु, दीप धूप फल अर्घ्य लिया।
त्रिभुवन पूजित पद के हेतू, तुम पदवारिज[2] अर्घ्य किया।।पृथ्वी.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

यमुना सरिता नीर, कंचन झारी में भरा।
जिनपद धारा देत, शांति करो सब लोक में।।10।।

शांतये शांतिधारा।।

वकुल मालती फूल, सुरभित निजकर से चुने।
जिनपद पंकज अर्प्य, यश सौरभ चहुंदिश भ्रमे।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

–सोरठा–

मुक्तिवधू भरतार, श्रीजिनवर के बिम्ब हैं।
पूजूं शिव करतार, पुष्पांजली चढ़ाय के।।1।।

इति श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिद्वयवृक्षस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

1. 2. चरणकमल।

–रोला छंद–

पश्चिम पुष्कर द्वीप, सुरगिरि के ईशाने।
पद्म वृक्ष की शाख, उत्तर दिश परधाने।।
तापे श्रीजिनगेह, नाना रत्नमयी है।
मृत्युंजयि जिन बिंब, पूजूँ सौख्य मही है।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कनकाचल नैऋत्य शाल्मलि द्रुम मन भावे।
दक्षिण शाखा उपरि, जिनवर भवन सुहावे।।
उनके श्री जिनबिम्ब, अकृत्रिम अविकारी।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, पाऊँ शिवतिय प्यारी।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

इन तरु के परिवार, अगणित शास्त्र बखाने।
उन सब में सुरवृंद, वैभव संयुत माने।।
प्रतिदेवन[1] गृह माहिं, जिनगृह शाश्वत जानो।
पूरण अर्घ्य बनाय, पूजत ही शिव थानो।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिसपरिवारपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिना-लयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

वीतराग विज्ञान घन, सर्वसार में सार।
वंदूँ श्री जिनदेव को, जिनप्रतिमा अविकार।।1।।

1. प्रत्येक देवों के।

(चाल–हे दीन बन्धु.....)

जय रत्नमयी वृक्ष ये अनादि अनंता।
जय पंचरत्न वर्ण सिद्धकूट धरंता।।
जय जय जिनेन्द्र देव के, जो भवन कहे हैं।
जय जय जिनेन्द्र मूर्तियां, जो पाप दहे हैं।।1।।
जिनमंदिरों में घंटिका औ किंकिणी बजें।
वीणा मृदंग बांसुरी, संगीत हैं सजे।।
मंगल कलश औ धूप घट अनेक धरे हैं।
जो देव देवियों के सदा चित्त हरे हैं।।2।।
रत्नों की स्वर्ण मोतियों की मालिकायें हैं।
कौशेय[1] वस्त्र सदृश रत्न की ध्वजायें हैं।।
उनमें बने हैं सिंह, हस्ति, हंस बैल जो।
मयूर, चक्र, गरुड़, चन्द्र, सूर्य, कमल जो।।3।।
इन दश प्रकार चिन्ह से चिन्हित हैं ध्वजायें।
जो भक्तगणों को सदा ही पास बुलायें।।
ये रत्नमयी होय के भी वायु से हिलें।
अद्भुत असंख्य रत्न हैं इस रूप में मिलें।।4।।
प्रत्येक जैनगेह में रचना अनंत है।
प्रत्येक में ही इक सौ आठ जैनबिंब हैं।।
प्रत्येक में तोरण दुवार[2] रत्न के बने।
जिनदेव मानतंभ[3] वहां मान को हनें।।5।।
ये जैनभवन हैं सदा सन्मार्ग के दाता।
निज आश्रितों को सत्य में हैं मुक्तिप्रदाता।।
इन नाम के जपे से नशे भूत की बाधा।
व्यंतर पिशाच प्रेत क्रूर, गृहों की बाधा।।6।।
इनके करे जो दर्श वे भवसिंधु तरे हैं।
जो भक्ति से पूजन करें वे सौख्य भरे हैं।।

1. रेशमी। 2.द्वार। 3. मानस्तम्भ।

इस लोक में धन धान्य पुत्र पौत्र को पाते।
चक्रेश की सी संपदा पा मौज उड़ाते।।7।।
जिनधर्म में अतिगाढ़ प्रेम धारते सदा।
पर लोक में इन्द्रादि विभव पावते मुदा।।
पश्चात् यहां तीर्थ की पदवी को धार के।
तीर्थंकरों का धर्मचक्र जग में चलाके।।8।।
आर्हन्त्य विभव पाय के भगवंत बनेंगे।
वे मुक्तिवल्लभा के भी तो कंत बनेंगे।।
इस विध से नाथ आपकी कीर्ती को मैं सुनी।
अतएव शरण आपकी ली सुन के तुम धुनी।।9।।
बस एक आश आज मेरी पूरिये प्रभो।
मोहादि कर्म वैरियों को चूरिये प्रभो।।
बस मैं स्वयं निज आत्मा को शुद्ध करूंगा।
सम्यक्त्व शुद्ध 'ज्ञानमती' सिद्धि वरूंगा।।10।।

–दोहा–

प्रभु तुम महिमा अगम है, तुम गुणरत्न अनंत।
इक गुण लव भी पाय मैं, तरूँ भवाब्धि अनंत।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपुष्करशाल्मलिवृक्षस्थितजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 48)

विद्युन्माली मेरु सम्बन्धी षोडश वक्षार जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–गीता छंद–

कनकाद्रि[1] विद्युन्मालि में जो पूर्व अपर विदेह हैं।
उनमें कहे वक्षार गिरि सोलह सुवर्णिमदेह[2] हैं।।
उन पे जिनालय शाश्वते सुरवंद्य सोलह जानिये।
जिनमूर्ति की कर थापना, यहँ पे महोत्सव ठानिये।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–

यमुना नदी का तीर्थसम जल, पूर्ण घट भर लाइये।
मन आधि व्याधी शांति हेतू, नाथ चरण चढ़ाइये।।
वक्षारगिरि के जिनभवन, सोलह अकृत्रिम सुख भरें।
जो पूजते नित चाव से, वे मुक्ति ललना को वरें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूरवासित गंध घिस, घनसार सुरभित लाइये।
आनंदघन निज आतमा के, प्राप्त हेतु चढ़ाइये।।वक्षार.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

1. मेरु। 2. सुवर्णमय।

मुनिराज मन सम धवल तंदुल, पुंज सन्मुख दीजिये।
आनंद कंद अखंड निज, आतम अतुल गुण लीजिये।।वक्षार.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदार कुंद कदंब मल्ली, पारिजात प्रसून ले।
झषकेतु[1] विजयी जिनचरण, पूजत अलौकिक गुण मिलें।वक्षार.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीखंड शर्कर दधि विमिश्रित खीर पूड़ी आदि हैं।
पीयूष[2] पिंड समान चरु से पूजते जिनपाद हैं।।वक्षार.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणिरत्न दीपक हाथ में ले आरती जिननाथ की।
करते मिटे अंतर तिमिर, फिर ज्योति प्रगटे ज्ञान की।।वक्षार.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

वर धूप धूपायन अगनि में, खेवते दुःख नाश हो।
चिंतामणी सम चिंतिते, फलदायि ज्ञान विकास हो।।वक्षार.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

नारंग नींबू आम्र कमरख, इक्षु अमृतफल घने।
जिन पूजते वांछित फले, शिववल्लभा के पति बनें।।वक्षार.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-स्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

1.कामदेव। 2. अमृत।

जल गंध अक्षत पुष्प चरु, दीपक सुधूप फलादि हैं।
वर कल्पतरु जिनपद जजें, मांगे बिना फलदायि हैं।।
वक्षारगिरि के जिनभवन, सोलह अकृत्रिम सुख भरें।
जो पूजते नित चाव से, वे मुक्ति ललना को वरें।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

सीतानदी सुनीर, जिनपद पंकज धार दे।
वेग हरूँ भवपीर, शांतीधारा शांतिकर।।10।।

शांतये शांतिधारा।

बेला कमल गुलाब, चंप चमेली ले घने।
जिनवर पद अरविंद, पूजत ही सुख संपदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ-प्रत्येक-अर्घ्य–दोहा–

तीर्थंकर प्रतिरूप[1] ये, सर्व विघ्न हरतार।
मैं नित पूजूँ चाव से, शाश्वत सुख दातार।।1।।

इति श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिवक्षारपर्वतस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छंद–

पश्चिम पुष्कर अर्ध द्वीप में, सुरगिरि पूर्व दिशा में।
सीता नदि के उत्तर तट से, भद्रसाल ढिग[2] तामें।।
'चित्रकूट' वक्षार अचल पर, जिनमंदिर सुखकारी।
सुरनर वंदित जिनप्रतिमा को, नितप्रति धोक हमारी।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थचित्रकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'पद्मकूट' वक्षार दूसरा, पुष्करार्ध में जानो।
उसके चार कूट में अनुपम , सिद्धकूट इक मानो।।

1. प्रतिबिंब। 2.निकट ।

जिन चैत्यालय शाश्वत अविचल, पूजूँ कर्म विडारी।
सुरनर वंदित जिनप्रतिमा को, नितप्रति धोक हमारी।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थपद्मकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिनकूट' वक्षार अतुल है पाप पंक मल धोवे।
जो जन इसके सिद्धकूट को, पूजें सब दुख खोवे।।
जिनगृह की छवि अतिशय प्यारी, भविजन मन सुखकारी।
सुरनर वंदित जिनप्रतिमा को, नितप्रति धोक हमारी।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थनलिनकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'एकशैल' वक्षार अनूपम, सुर किन्नर मन भावे।
सुवरण छवि से सूर्य तेजहर, जिनमंदिर मन भावे।।
विद्याधर विद्याधरियाँ भी गुण गावें चितहारी।
सुरनर वंदित जिनप्रतिमा को, नितप्रति धोक हमारी।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थएकशैलकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतानदि के दक्षिण तट पर, देवारण्य समीपे।
नग 'त्रिकूट' वक्षार सुवर्णिम, चार कूट से दीपे।।
सिद्धकूट जिनमंदिर अद्भुत, मुनिमन सम अविकारी।
सुरनर वंदित जिनप्रतिमा को, नितप्रति धोक हमारी।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थचित्रकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गिरि 'वैश्रवण' कहा वक्षारा, भूधर[2] मुकुटमणी है।
सिद्धकूट का श्री जिनमंदिर चिंतारत्नमणी है।।
वंदन करने वाले भवि के, भव भय संकटहारी।
सुरनर वंदित जिनप्रतिमा को, नितप्रति धोक हमारी।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थवैश्रवणकूटवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. पर्वत। 2. सिद्ध भगवान।

'अंजन' नग वक्षार अकृत्रिम, अमरगणों से सोहे।
इस ऊपर परमात्म निरंजन[1], का जिनमंदिर सोहे।।
वन वेदी वापी तोरण से, सुरगृह से चितहारी।
सुरनर वंदित जिनप्रतिमा को, नितप्रति धोक हमारी।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थअंजनवक्षारपर्वतसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आत्मांजन' वक्षार आठवां, अतुल निधी को धारे।
इस पे सिद्धकूट को जो जन, पूजें मोक्ष सिधारें।।
मृत्युंजयि जिनवर का मंदिर, अखिल अमल गुणधारी।
सुरनर वंदित जिनप्रतिमा को, नितप्रति धोक हमारी।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थआत्मांजनवक्षारपर्वतसिद्ध-कूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरू के पश्चिम दिश में है, अपर विदेह कहाता।
सीतोदा सरिता बहने से, उभय भाग बंट जाता।।
सरिता दक्षिण भद्रसाल के, ढिग वक्षार गिरी है।
'श्रद्धावान' उपरि जिनमंदिर, पूजूँ पाप हरी है।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थश्रद्धावानवक्षारपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'विजटावान्' अचल वक्षारा, चार कूट युत सोहे।
कनककांति से सिद्धकूट से, अतुल अपूरब सोहे।।
जिनमंदिर में मृत्युंजयि की, प्रतिमा सौख्यकरी हैं।
अर्घ्य चढ़ाकर मैं नित पूजूँ, भव भय ताप हरी हैं।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थविजटावान्वक्षारपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आशीविष' वक्षार स्वर्णसम, विविध गृहों को धारे।
सिद्धकूट पे श्री जिनमंदिर, कर्म कालिमा टारे।।

1. सिद्ध भगवान।

पद्मासन जिनप्रतिमा सुन्दर, सिंहासन पे राजे।
जो जन पूजन वंदन करते, कर्म अरीदल भाजे।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थआशीविषवक्षारपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचल 'सुखावह' बहु सुखदाता चारकूट से सोहे।
जो जन सिद्धकूट को वंदें, त्रिभुवन के पति होहें।।
साधूजन आकाशमार्ग से, जिनवंदन को आते।
जो जन पूजें श्रद्धा धर मन, वे अनुपम सुख पाते।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुखावहवक्षारपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा के उत्तर तट में, भूतारण्य निकट में।
'चंद्रमाल' वक्षार मनोहर, देव रमें उस तट में।।
चार कूट में सिद्धकूट इक, जिनमंदिर अभिरामा।
मैं इत अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ, पाऊँ शिव विश्रामा।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थचन्द्रमालवक्षारपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सूर्यमाल' वक्षार अनोखा, सूरजतेज लजावे।
सिद्धकूट में जिनवर मंदिर, मुनिमन कुमुद[1] खिलावे।।
भवविजयी की प्रतिमा मणिमय, पूजत पाप हरे हैं।
नित प्रति ध्यान धरें जो उनका, वे यमपाश[2] हरे हैं।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसूर्यमालवक्षारपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नागमाल' वक्षार भूमिधर[3], नवनिधि वैभवशाली।
सिद्धकूट में जिनचैत्यालय, अनुपम छवि मणिमाली।।

1. श्वेत कमल। 2. मृत्यु। 3. पर्वत।

भवविजयी की प्रतिमा मणिमय, पूजत पाप हरे हैं।
नित प्रति ध्यान धरें जो उनका, वे यमपाश हरे हैं।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थनागमालवक्षारपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'देवमाल' वक्षार सोलवां, स्वर्गपुरी सम शोभा।
चार कूट में एक कूट पर, जिनगृह अतुल अनोखा।।
भवविजयी की प्रतिमा मणिमय, पूजत पाप हरे हैं।
नित प्रति ध्यान धरें जो उनका, वे यमपाश[2] हरे हैं।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थदेवमालवक्षारपर्वत-सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-दोहा-

सुरगिरि पंचम के उभय, पूर्व अपर दिश जान।
सोलहगिरि वक्षार के, जिनगृह जजूँ महान।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिषोडशवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य-**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

-सोरठा-

जिनवर के गुण रत्न, अतुल अनंत अपार हैं।
गिनने की नहिं शक्ति, लेश कहूं गुणमालिका।।1।।

-गीता छन्द-

जय जय गिरी वक्षार के, सोलह जिनालय गुण भरे।
जय जय विदेहों में सतत, बत्तीस की रचना करें।।

इन एक-इक के मध्य में, बहती विभंगा नदि तहां।
जो कुलगिरी तल कुंड से, निकली मिले सीतादिमा।।2।।

प्रत्येक पर्वत नीलगिरि, सीता-सितोदा स्पर्शते।
उत्तर दिशी वक्षार गिरि, निषधाद्रि नदि स्पर्शते।।
सब हैं सुवर्णिम कांतिमय, औ चार कूटों से दिपे।
पर्वत निकट के कूट पर, दिक्कन्यका के गृह दिपें।।3।।

सरिता निकट के कूट पे, जिनगेह अकृत्रिम कहे।
मधि-मध्य के दो कूट पे, व्यंतर सुरों के गृह रहें।।
वन वेदिका तोरण अतुल, पुष्करिणियां जल से भरीं।
सब कूट के चहुंदिश बगीची, शोभतीं शाश्वत खरी।।4।।

जो भव्य भय भयभीत हैं, वे ही जिनालय वंदते।
जो भव्य भवदधि तीर हैं, वे दर्श कर अघ खंडते।।
जो मोह राग अरु द्वेष शत्रू, मारने को चाहते।
वे ही जिनेश्वर पादपंकज चित्त में नित धारते।।5।।

जो तुम शरण में आ गये, यमराज भी उनसे डरें।
जो तुम वचन में दृढ़ रहें, मोहारि उनसे भय करें।।
तुम नाम अक्षर जो जपें, वो आत्म अनुभव पावते।
तुम वच सुधारस[1] जो चखें, वो परम आनंद पावते।।6।।

बहु विघ्नकर रोगादि भय, शोकादि मानस व्याधियां।
तुम भक्ति करते शीघ्र ही भग जांय आधि उपाधियां।।
व्यंतर पिशाचादिक भयंकर, चोर क्रूर ग्रहादि भी।
बाधा न किंचित कर सकें, जिनको शरण है आपकी।।7।।

सब ग्रन्थ में गाया सुयश, यति में वृषभ[1] सब साधु ने।
सुनकर प्रभो तुम कीर्ति को, अब आ गया हूँ पास में।।
रक्षा करो या ना करो, बस नाथ! आप प्रमाण हैं।
जो आपका कर्तव्य हो, वह कीजिये बस मान्य है।।8।।

1. अमृत। 2. यतिवृषभाचार्य तिलोयपण्णत्ति कर्ता।

–दोहा–

भवहर जिनवर मूर्तियां, हरें सकल भवजाल।
शिवलक्ष्मी हित 'ज्ञानमति', वंदन करे त्रिकाल।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिवक्षारपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

1. यतिवृषभाचार्य तिलोयपण्णत्तिकर्ता।

(पूजा नं. 49)

विद्युन्मालीमेरु के चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–दोहा–

पश्चिम पुष्कर द्वीप में, पूर्व अपर सुविदेह।
दक्षिण-उत्तर में भरत-ऐरावत वर नेह।।
बत्तिस क्षेत्र विदेह औ, भरतैरावत जान।
चौंतिस रूपाचल विषे, जिनगृह पूजूँ आन।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थसर्वजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–बसंततिलका छंद–

गंगानदी सलिल शीतल कुंभ में है,
धारा करूं मुझ मनोगत मल हरे है।
चौंतीस रूप्यगिरि के जिनमंदिरों की,
पूजा करूँ जगत वंद्य जिनेश्वरों की।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूरवासित सुगंधित गंध लाके,
पूजूँ तुम्हें हृदय ताप व्यथा मिटाके।।चौंतीस.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

कामोद वासमति तंदुल शुभ्र लाया,
अक्षय अखंड पद हेतु तुम्हें चढ़ाया।
चौंतीस रूप्यगिरि के जिनमंदिरों की,
पूजा करूँ जगत वंद्य जिनेश्वरों की।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जाती कदंब अरविंद प्रसून लाया,
शृंगारहार मदनारि[1] तुम्हें चढ़ाया।।चौंतीस.।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मैसूरपाक[2] बरफी पकवान लाऊँ,
पीयूष पिंडसम स्वातम स्वाद पाऊँ।।चौंतीस.।।5।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर वर्त्तिक[3] शिखामय दीप लाऊँ,
पूजूं तुम्हें हृदय मोह सभी मिटाऊँ।।चौंतीस.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागरू सुरभि धूप जलाय करके,
आत्मा विशुद्ध मुझ होत जु कर्म जलके।।चौंतीस.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर आम अमरूद अनार लाया,
सर्वार्थसिद्धि फल हेतु तुम्हें चढ़ाया।।चौंतीस.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. शृंगार है हार जिसका ऐसा मदन-उसके शत्रु-जिनेन्द्रदेव। 2. मैसूर प्रांत की बरफी। 3. बत्ती।

नीरादि द्रव्य कर अर्घ्य सुवर्ण थाली,
पूजूं तुम्हें नहिं मनोरथ जाय खाली।
चौंतीस रूप्यगिरि के जिनमंदिरों की,
पूजा करूँ जगत वंद्य जिनेश्वरों की।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

गंगनदी को नीर, तुम पद धारा मैं करूं।
शांति करो जिनराज, चउसंघ को सबको सदा।।10।।

शांतये शांतिधारा।

कमल केतकी फूल, हर्षित मन से लायके।
जिनवर चरण चढ़ाय, सर्व सौख्य संपति बढ़े।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–सोरठा–

विद्युन्माली मेरू चउदिश चौंतिस रूप्यगिरि।
उनके श्री जिनगेह, पृथक् पृथक् पूजन करुँ।।1।।

इति श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिविजयार्धपर्वतस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–दोहा–

सीतानदि उत्तर तरफ, भद्रसाल वन पास।
'कच्छादेश' रजतगिरी, जिनगृह जजूँ हुलास।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थकच्छादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुकच्छा' मध्य में रूपाचल मनहार।
सिद्धकूट में जिनभवन, जजूँ सदा सुखकार।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसुकच्छादेशस्थितविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महाकच्छा' मधी, रूपाचल अभिराम।
सिद्धकूट का जिनभवन, पूजूँ करूँ प्रणाम।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थमहाकच्छादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'कच्छकावति' विषे, विजयारध सुखकार।
भवविजयी के जिनभवन, पूजूँ भव दुःख टार।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थकच्छकावतीदेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'आवर्ता' सुविदेह में, रूपाचल रजताभ।
ताके श्री जिनगेह को, पूजूँ करो कृतार्थ।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थआवर्तादेशस्थितविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'लांगलावति' विषे, रजताचल सुखकार।
सिद्धकूट पर जिनभवन, पूजूँ सुयश उचार।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थलांगलावतीदेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कला' में अचल, विजयारध मनहार।
ताके श्रीजिनगेह को, पूजूँ शिव सुखकार।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थपुष्कलादेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कलावती' मधि, रूपाचल सुखधाम।
जिनगृह के जिनबिंब को, पूजूँ नित शिवधाम।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थपुष्कलावतीदेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता के दक्षिण तरफ, देवारण्य समीप।
'वत्सा' के विजयार्ध का, जिनगृह जजूँ पुनीत।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थवत्सादेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुवत्सा' मध्य में, विजयारध गुणधाम।
उस पे जिनमंदिर जजूँ परमानन्द प्रदाम्[1]।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसुवत्सादेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महावत्सा' मधी, रूपाचल मनहार।
जिनमंदिर के बिंब को, पूजूँ शिव करतार।।11।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थमहावत्सादेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'वत्सकावति' विषे, रूपाचल सुखकाम।
तापे जिनगृह जिनकृती[2], पूजूँ भुवन ललाम।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थवत्सकावतीदेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रम्या' देश विदेह में, रजताचल गुणमाल।
जिनगृह के जिनबिंब को, पूजूँ जग प्रतिपाल।।13।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थरम्यादेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुरम्या' मध्य में, रूपाचल अभिराम।
जिनचैत्यालय को जजूँ, पाऊँ मोक्ष निधान।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थसुरम्यादेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रमणीया' सुविदेह में, रूप्यगिरी[3] रूपाभ[4]।
जिनगृह की जिनमूर्ति को, जजूँ नमाऊँ माथ।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थरमणीयादेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'मंगलावति' तहाँ, खग पर्वत सुखमाल।
जिनमंदिर में मूर्ति की, पूजा करूँ त्रिकाल।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वविदेहस्थमंगलावतिदेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. देने वाले। 2. प्रतिमा। 3. विजयार्ध पर्वत। 4. चांदी का ।

–रोला छन्द–

भद्रसालवन पास, सीतोदा नदि दायें।
'पद्मादेश' विदेह, मधि रूपाद्रि कहाये।।
तापे श्रीजिनगेह, सब भवचक्र[1] विनाशें।
जो पूजें धर नेह, केवल ज्ञान प्रकाशें।।17।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थपद्मादेशमध्यविजयार्ध-पर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुपद्मा' माहिं, रजताचल मन मोहे।
तापे श्रीजिनधाम, सुर किन्नर मन मोहे।।
ताके श्री जिनबिंब, भवि भव चक्र विनाशें।
जो पूजें धर प्रीति, केवल ज्ञान प्रकाशें।।18।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुपद्मादेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'महपद्मा' सुविदेह, तामे रजतगिरी है।
उसपे श्री जिनवेश्म, अद्भुत सौख्यसिरी है।। ताके.।।19।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थमहापद्मादेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पद्मकावति' मधि में रूप्यगिरी है।
त्रय कटनी युत रम्य, जिनगृह अतुल श्री है।।ताके.।।20।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थपद्मकावतीदेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शंखा' देश विदेह, शंख ध्वनी जहँ गूँजे।
बीच रजतगिरि एक, जिनमंदिर सुर पूजें।।ताके.।।21।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थशंखादेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. संसार भ्रमण।

'नलिनादेश' अपूर्व, शाश्वत सिद्ध कहा है।
बीच रजतगिरि शीश, जिनगृह नित्य कहा है।।
ताके श्री जिनबिंब, भवि भव चक्र विनाशें।
जो पूजें धर प्रीति, केवलज्ञान प्रकाशें।।22।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थनलिनादेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कुमुदा' देश अनूप, शिव का मार्ग प्रकासे।
बीच रजतगिरि श्रेष्ठ, जिनगृह अनुपम भासे।।ताके.।।23।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थकुमुदादेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सरिता' देश विदेह, छह खण्डोंयुत सोहे।
बीच कहा विजयार्ध, जिनगृह से मन मोहे।।ताके.।।24।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसरितादेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नदि के उत्तर माहिं, भूतारण्य समीपे।
'वप्रादेश' विदेह, बीच रजतगिरि दीपे।।ताके.।।25।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थवप्रादेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुवप्रा' मध्य, रूपाचल अविकारी।
नव कूटों में एक, जिनमंदिर सुखकारी।।ताके.।।26।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुवप्रादेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'महावप्रा' देश, अगणित विभव धरे हैं।
बीच रजतगिरि श्वेत, जिनवर सद्म धरे हैं।।ताके.।।27।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थमहावप्रादेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'वप्रकावति' देश, बीच रजतगिरि धारे।
नव कूटों में एक, जिनगृह भवदधि तारे।।
ताके श्री जिनबिंब, भवि भव चक्र विनाशें।
जो पूजें धर प्रीति, केवलज्ञान प्रकाशें।।28।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थवप्रकावतीदेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधा' देश विदेह, रौप्य अचल से सोहे।
त्रय कटनीयुत रम्य, ऊपर जिनगृह सोहे।।ताके.।।29।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थगंधादेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुगंधा' मध्य, खग पर्वत मन मोहे।
इन्द्रादिक से वंद्य, जिनमंदिर इक सोहे।।ताके.।।30।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थसुगंधादेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'गंधिला' बीच, रजतगिरी रजताभा।
नव कूटों में एक, जिनमंदिर मणि आभा।।ताके.।।31।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थगंधिलादेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधमालिनी' देश, रूप्यगिरी मधि धारे।
रत्नमयी इक कूट, जिनमंदिर को धारे।।ताके.।।32।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपश्चिमविदेहस्थगंधमालिनीदेशमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–नरेन्द्र छन्द–

पश्चिम पुष्कर अर्ध द्वीप में, सुरगिरि दक्षिण जानो।
भरत क्षेत्र के मध्य रूप्यगिरि, नव कूटों युत मानो।।

सिद्धकूट के जिनमंदिर में, रतनमयी प्रतिमा हैं।
जो जन अर्घ्य चढ़ाकर पूजें, लहें अतुल महिमा हैं।।33।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिभरतक्षेत्रमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युन्माली के उत्तर में, ऐरावत शुभ जानो।
मध्य रजतगिरि पे इक सौ दश, खग नगरी सरधानो।।
सिद्धकूट के जिनमंदिर में, रतनमयी प्रतिमा हैं।
जो जन अर्घ्य चढ़ाकर पूजें, लहें अतुल महिमा हैं।।34।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिऐरावतक्षेत्रमध्यविजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

विद्युन्माली मेरु उभय में, बत्तिस क्षेत्र विदेह कहे।
दक्षिण-उत्तर उभय भाग में, भरतैरावत क्षेत्र रहें।।
इन चौंतीस क्षेत्र के मधि में, एक एक विजयारध हैं।
सबके चौंतिस जिनभवनों को पूजूं शिवसुखकारक हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिपूर्वपश्चिमदक्षिणोत्तरदिक्चतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

चौंतीसों विजयार्ध के, अकृत्रिम जिनधाम।
तिनकी गुणमाला कहूँ, होय सफल मम काम।।1।।

–शम्भु छन्द–

जय जय विद्युन्माली सुरगिरि, जो शत इन्द्रों से वंदित हैं।
जय जय उसके पूरब पश्चिम, बत्तीस अचल विजयारध हैं।।

जय जय सुरगिरि दक्षिण-उत्तर भरतैरावत दो क्षेत्र कहे।
जय जय इनके मधि रूपाचल, ये सब मिलके चौंतीस कहे।।1।।
इन गिरि की पहली कटनी पर, अभियोग्य देव के भवन बने।
दूजी कटनी पे विद्याधर, उन नगर एक सौ दश गिननें।।
तीजी कटनी पे नव कूटोंयुत, सिद्धकूट इक है उनमें।
अठ कूटों पे सुरगृह जानो, जो सिद्धकूट जिनगृह उसमें।।2।।
सब रूपाचल चांदी सम है, सबमें विद्याधर रहते हैं।
सब पर वन उपवन वेदी हैं, रत्नों की रचना कहते हैं।।
जो हैं विदेह के बत्तिस गिरि, हैं शाश्वत कर्मभूमि उनमें।
भरतैरावत के रजताचल, बस अन्तर पड़ता इन द्वय में।।3।।
यहं पर हैं चौथे काल सदृश, आदी औ अन्त सदृश रचना।
विद्याधर में जाती कुल औ, साधित त्रय[1] विद्या को धरना।।
त्रय कारण से विद्या पाकर, खे गमनादिक[2] बहु रूप धरें।
इस हेतू से ये जन मानव, विद्याधर सार्थक नाम धरें।।4।।
ये खग अकृत्रिम चैत्यालय, में जाते वंदन करते हैं।
कोई कोई दीक्षा लेकर, तहँ कर्म काट शिव वरते हैं।।
विजयारध के जिनमंदिर में, बहु रत्नमयी जिनप्रतिमा हैं।
सुर नर विद्याधरगण पूजें, ये मृत्युंजयि की उपमा हैं।।5।।
जो मनोयोग से बंधे कर्म, वे उदय आय के फलते हैं।
जो वचन योग से बंधे कर्म, भी उदयागत हो खिरते हैं।।
जो काययोग से बंधे कर्म, वे भी सबको दुखदायक हैं।
ये अशुभ कर्म के उदय सभी, को रोग शोक भयदायक हैं।।6।।
जिन चरणों की पूजा करते, उन अशुभ कर्म सब झड़ते हैं।
अतिशयकारी हों पुण्य बंध, उनके मनवांछित फलते हैं।।
वे क्रम से इन्द्र चक्रवर्ती, बन महापुण्य रस चखते हैं।
पुन मोह अरी का शीश काट, वे मुक्ति रमापति बनते हैं।।7।।

1. जाति, कुल और साधना से सिद्ध। 2. आकाश में।

–दोहा–

तुम भक्ती पीयूष पी, जन जन हुये निहाल।
'ज्ञानमती' निज संपदा, भुगते शाश्वत काल।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीविद्युन्मालीमेरुसंबंधिचतुस्त्रिंशत्विजयार्धपर्वतसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 50)

पश्चिम पुष्करार्धद्वीप भरतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना-गीता छंद

पुष्कर अपर के भरत में संप्रति जिनेश्वर जो हुये।
समरस सुधास्वादी मुनी उनके चरण में नत हुये।।
उन वीतरागी सौम्य मुद्रा देख जन मन मोदते।
उनकी करूँ मैं अर्चना वे सफल कल्मष धोवते।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-भुजंगप्रयात छंद

मुनी चित्त सम स्वच्छ जल को लिया है।
प्रभू पाद में तीन धारा किया है।।
जजूँ तीर्थकर के चरण पंकजों को।
मिटाऊँ सभी जन्म के संकटों को।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

घिसा गंध कर्पूर मिश्रित किया है।
प्रभू चर्ण में चर्च समसुख लिया है।।जजूँ.।।2।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

पयोराशि के फेन समश्वेत शाली।
धरूँ पुंज सन्मुख बनूँ भाग्यशाली।।जजूँ।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जुही मोगरा कुंद की माल लेके।
चढ़ाऊँ तुम्हें स्वात्म सुख आश लेके।।जजूँ।।4।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

जलेबी इमरती भरे थाल लाऊं।
महातृप्तिकर आप चर्णों चढ़ाऊँ।।जजूँ।।5।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिखा दीप की बाह्य का ध्वांत नाशे।
करूँ आरती ज्ञान की ज्योति भासे।।जजूँ।।6।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जले धूप अग्नी विषे गंध फैले।
जलें कर्म वो जो सदा हैं विषैले।।जजूँ।।7।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पनस आम अंगूर गुच्छे भले हैं।
तुम्हें अर्पते सत्फलों को फले हैं।।जजूँ।।8।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलादी मिला अर्घ्य चरणों चढ़ाऊँ।
निजात्मीक संपत्ति मैं शीघ्र पाऊँ।।जजूँ।।9।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-दोहा-

अलंकार भूषण रहित, फिर भी सुन्दर आप।
आयुध शस्त्र विहीन हो, नमूँ नमूँ निष्पाप।।1।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-नरेन्द्र छंद-

श्री 'सर्वांगस्वामि' तीर्थंकर, अतिशय रूप सुहावे।
इंद्र हजार नेत्रकर निरखे, तो भी तृप्ति न पावे।।
मैं पूजूँ श्रद्धा उर धर के, समकित ज्योति जगाऊं।
निज आतम अनुभव रस पीकर, फेर न भव में आऊँ।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसर्वाङ्गस्वामिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'पद्माकर' जिनवर तुमही, भव्यकमल विकसाते।
केवल ज्ञानमयी किरणों से, तम अज्ञान भगाते।।मैं.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपद्माकरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ 'प्रभाकर' निजकांती से, दश दिश को नहलाते।
निज भामंडल में भव्यों को, सात जनम दिखलाते।।मैं.।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीप्रभाकरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हे 'बलनाथ' आप बल पाके, भक्त बने बलशाली।
मन वच काय बली ऋद्धी पा, हो जाते गुणशाली।।मैं.।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीबलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'योगीश्वर' जिनराज आपने, मुनि को योग सिखाया।
वृक्ष मूल अभ्रावकाश, आतापन आदि बताया।।मैं.।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीयोगीश्वरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'सूक्ष्मांग' वर्णगंधादिक, रहित अमूर्तिक चिन्मय।
इंद्रिय देहरहित हो फिर भी, परम अतीन्द्रिय सुखमय।।मैं.।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसूक्ष्मांगजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'व्रतचलातीत' जिनवर जी, कभी न व्रत से डिगते।
सर्व शीलव्रत गुण के भर्ता, सबको व्रत में धरते।।मैं.।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीव्रतचलातीतजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ 'कलंबक' निष्कलंक हैं, कर्मकलंक विनाशी।
भव्यों के कलिमल को धोकर, करें स्वच्छ अविनाशी।।मैं.।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकलंबकजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'परित्याग' जिनेश्वर तुमने, सर्वजगत को त्यागा।
पूर्ण दिगंबर हो तप कीना, धरा न किंचित् धागा।।मैं.।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपरित्यागजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ 'निषेधिक' पाप क्रिया को, तुमने पूर्ण निषेधा।
स्वयं क्षपक श्रेणी पर चढ़कर, घाति शत्रु को बेधा।।मैं.।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनिषेधिकजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'पापापहारि' जिनवरजी, पाप समूह विनाशा।
भव्यों ने भी तुम भक्ती से, अंतर्मल को नाशा।।मैं.।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपापापहारिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'सुस्वामी' जगके नामी, त्रिभुवन अंतर्यामी।
जो पूजें तुम चरण सरोरुह, वे होते शिवधामी।।मैं.।।12।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुस्वामिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'मुक्तिचंद' तीर्थंकर तुमने, मुक्ति धाम को पाया।
तुम पद भक्त जनों ने भी तो, मुक्ती पथ अपनाया।।
मैं पूजूँ श्रद्धा उर धर के, समकित ज्योति जगाऊं।
निज आतम अनुभव रस पीकर, फेर न भव में आऊँ।।13।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमुक्तिचंदजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'अप्राशिक' भगवान तुम्हीं हो, भवि जीवन सुखदाता।
जो जन पूजें भक्ति भाव से, हरते कर्म असाता।।मैं.।।14।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअप्राशिकजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'जयचंद' करम अरि जेता, भविजन को उपदेशें।
जो जन आते चरण शरण में, उनको शिवपुर भेजें।।मैं.।।15।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीजयचंदजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'मलाधारि' मलमूत्र पसीना, रहित देह तुम धारा।
भक्तों का मन निर्मल करने, तुम धुनि अमृत धारा।।मैं.।।16।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमलाधारिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ 'सुसंयत' संयमियों के, आश्रयभूत तुम्हीं हो।
सभी असंयत को संयत, करने में एक तुम्हीं हो।।मैं.।।17।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुसंयतजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'मलयसिंधु' जिन नाथ आपको, सुरपति खगपति पूजें।
नरपति मुनिपति भी नित वंदें, कर्म अरी से छूटें।।मैं.।।18।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमलयसिंधुजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभू 'अक्षधर' तीर्थंकर हैं, सर्व हितंकर जग में।
उनके वचन परम प्रीतिंकर, भविजन रमते उसमें।।मैं.।।19।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअक्षधरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ 'देवधर' किंकर है नित, सौधर्मेन्द्र तुम्हारा।
त्रिभुवन के भव्यों ने मिलकर, लीना आप सहारा।।मैं.।।20।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीदेवधरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभू 'देवगण' द्वादश गण के, अधिपति आप बखाने।
समवसरण में दिव्यध्वनी सुन, सबजन निजहित ठाने।।मैं.।।21।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीदेवगणजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'आगमिक' तीर्थंकर जग में, आ वृष तीर्थ चलाया।
भविजन खेती सिंचन हेतू, धर्मामृत बरसाया।।मैं.।।22।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीआगमिकजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री 'विनीत' तीर्थेश्वर तुमने, विनय धर्म उपदेशा।
दर्शन ज्ञान चरित तप औ, उपचार सहित निर्देशा।।मैं.।।23।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविनीतजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रतानंद' तीर्थंकर निज में, रत हो जिनके द्वारा।
परमानंद सुखामृत पीते, शतशत नमन हमारा।।मैं.।।24।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीरतानंदजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य-दोहा

क्रोध बिना भी आपने, कर्म शत्रु को घात।
निर्भय पद को पा लिया, नमूँ नमा कर माथ।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसर्वाङ्गस्वाम्यादिरतानंदपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

-रोला छंद-

जै जै श्री जिनदेव, अद्भुत अतिशय धारी।
जै जै श्री जिनदेव, सब जन को सुखकारी।।
जै जै श्री जिनदेव, गणपति तुम गुण गावें।
चार ज्ञान से युक्त, फिर भी पार न पावें।।1।।

तुम तन में मलमूत्र, नाहिं पसेव नहीं है।
रुधिर दुग्ध सम श्वेत, अतिशय रूप सही है।।
अति सुगंधमय देह, लक्षण सहस रु आठा।
प्रियहित वचन अपूर्व, अतुल वीर्य तन में था।।2।।

समचतुष्क आकार, वज्र वृषभ नाराचे।
ये दश अतिशय नाथ, जन्म समय से साथे।।
तुम सौंदर्य समुद्र, निरख निरख सुख पावे।
इंद्र नहीं हो तृप्त, नेत्र हजार बनावे।।3।।

इंद्र सहस्रों नाम, ले स्तवन उचारे।
निज जिह्वा औ वाणि, को पवित्र कर डारे।।
प्रभू आप श्रीमान, और स्वयंभू नामा।
नाम स्तवन जिनेश, करते शिवसुख कामा।।4।।

नाथ आप प्रतिबिंब, जो स्तवन करे हैं।
स्थापन संस्तवन, कर सब सौख्य भरे हैं।।
मल विरहित तुम देह, रूप अनूप तुम्हारा।
द्रव्य स्तवन जिनेश, भविजन एक सहारा।।5।।

तुम जन्मादिक भूमि, की स्तुती करें जो।
क्षेत्र स्तवन करंत, भव भव पाप हरें वो।।
गर्भादिक तिथिकाल, का स्तवन उचारें।
काल स्तवन हमेश, करके निज अघ टारें।।6।।

दर्शन ज्ञान अनंत, सुख औ वीर्य अनंते।
तुम गुण गान करंत, भाव स्तवन धरंते।।
नाम स्थापन द्रव्य, क्षेत्र काल भावों से।
छह विध से त्रयकाल, करते स्तुति जो रुचि से।।7।।

भक्ति नाव में बैठे, भवरारिधि वे तरते।
करें कर्म नग चूर, मुक्ति रमा को वरते।।

मैं भी तुम स्तोत्र, करूँ सदा मुद मन से।
पूजा अर्चा और, वंदन भी कर करके।।8।।

पाऊँ शक्ति अपूर्व, यम को मार भगाऊँ।
जिन आतम रस पूर, परमानंद उपाऊं।।
करो कृपा अब नाथ, पुनः नहीं कुछ मांगूँ।
'ज्ञानमती' सुख आश, पूर्ण करो पग लागूँ।।9।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 51)

पश्चिम पुष्करार्धद्वीप ऐरावतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना-गीता छंद

पुष्कर अपर में उत्तरी दिश, क्षेत्र ऐरावत कहा।
उस मध्य आरजखंड में, षट्काल परिवर्तन कहा।।
तीर्थेश चक्री आदि चौथे काल में होते वहाँ।
चौबीस जिनवर वर्तमानिक, को सदा पूजूँ यहाँ।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-नाराच छंद

शुक्लध्यान के समान स्वच्छ नीर लाइये।
नाथ के पदारविंद धार को कराइये।।
धर्मतीर्थनाथ की सदैव अर्चना करें।
पूर्ण हो स्वतंत्र वे यहाँ पे जन्म ना धरें।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थं-करेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णकांति के समान पीतगंध लाइये।
नाथ के पदारविंद अर्च सौख्य पाइये।।धर्म.।।2।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थं-करेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

दुग्धफेन के समान श्वेत शालि लाइये।
नाथ के पदाब्ज पास पुंज को रचाइये।।धर्म.।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंद मोगरा गुलाब पुष्प भांति-भांति के।
नाथ पाद पूजते हि हो न वश्य काम के।।धर्म.।।4।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

लड्डूकादि मिष्ट खाद्य चित्त को लुभावते।
भख वेदना निमूल हेतु ही चढ़ावते।।धर्म.।।5।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपज्योति सर्व अंधकार ना विनाशती।
आप पूजते स्वचित्त ज्ञान लौ प्रकाशती।।धर्म.।।6।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप खेवते दशांग पाप भस्म हो रहे।
आतमा विशुद्ध होय साम्य सौख्य को लहे।।धर्म.।।7।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम्र आदि सत्फलों को अर्पिये जिनेन्द्र को।
मोक्ष सौख्य प्राप्ति हेतु अर्चिये जिनेन्द्र को।।धर्म.।।8।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक संपदा जिनेश भक्त को मिले।
अर्घ्य को चढ़ावते निजात्म की कली खिले।।धर्म.।।9।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-दोहा-

समवसरण प्रभु आपका, दिव्य सभा का रूप।
मध्य कमल आसन उपरि, राजें तिहुँजग भूप।।1।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-रोला छंद-

श्री 'गांगेयक' देव, सोलह कारण भाके।
तीर्थंकर पद पाय, बसे मोक्ष में जाके।।
मैं पूजूँ धर प्रीति, कर्म कलंक नशाऊँ।
पंचम गति को पाय, फेर न भव में आवूँ।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीगांगेयकजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नल्लवासव' जिनराज, वासव शत तुम वंदे।
अनुपम सुख की आश, धरके तुम अभिनंदे।।मै.।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनल्लवासवजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

श्रीमत् 'भीम' जिनेन्द्र, भवभयभीत जनों को।
आप एक आधार, अतः नमें जन तुमको।।मै.।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीभीमजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

नाथ 'दयाधिक' आप, कर्म हनें निर्दय हो।
भक्तों के प्रति आप, पूरणसदय हृदय हो।।मै.।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीदयाधिकजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

श्री 'सुभद्र' जिनराज, भद्रजीव तुम पूजें।
करें आत्म कल्याण, ऐसी युक्ती सूझे।।मै.।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुभद्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

श्री 'स्वामी' का नित्य, जो जन आश्रय लेते।
पाते शिवपथ शुद्ध, भवजल को जल देते।।मै.।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीस्वामीजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

नाथ 'हनिक' ने घाति, कर्म हने शांती से।
किया भुवन परकाश, अनुपम निजकांती से।।मै.।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीहनिकजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

'नंदिघोष' का धर्म-घोष जगत में व्यापा।
भविजन हर्षित चित्त, पूजत हों निष्पापा।।मै.।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनन्दिघोषजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

'रूपबीज' जिन आप, वचनामृत जो पीते।
नष्ट करें भवबीज, मृत्युमल्ल भी जीते।।मै.।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीरूपबीजजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

'वज्रनाभ' जिनदेव, तुम पदकी भक्ती से।
पाऊँ ऐसी युक्ति, मुक्ति वरूँ शक्ती से।।मै.।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवज्रनाभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

श्री 'संतोष' जिनेश, तृष्णा नदी सुखाते।
अतिशय निस्पृह चित्त, फिर भी मार्ग दिखाते।।मै.।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसंतोषजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

नाथ 'सुधर्म' महान, धर्मामृत की वर्षा।
करते करुणावान, भवि को हर्षा हर्षा।।मै.।।12।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुधर्मजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

नाथ 'फणीश्वर' आप, मोह सर्प विष हरते।
जो पूजें तुम पाद, सब सुख सपंत्ति भरते।।मै.।।13।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीफणीश्वरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

'वीरचंद' जिनचंद्र, कर्म अरी के जेता।
जो तुम आश्रय लेय, वे होते दुःख भेत्ता।।
मैं पूजूँ धर प्रीति, कर्म कलंक नशाऊँ।
पंचम गति को पाय, फेर न भव में आवूँ।।14।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवीरचंदजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

श्री 'मेधानिक' नाथ, इंद्रिय सुख सब त्यागा।
निज आतम में वास, करके शिव सुख साधा।।मै.।।15।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमेधानिकजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

'स्वच्छनाथ' जिनराज, पूर्ण विशुद्ध हुए हो।
त्रिविध करम मल धोय, अनुपम शुद्ध हुये हो।।मै.।।16।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीस्वच्छनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

नाथ 'कोपक्षय' आप, क्रोधादिक क्षय करके।
फिर भी जीता आप, कर्म अरी शमदम से।।मै.।।17।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकोपक्षयजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

जो 'अकाम' जिन आप, चरण कमल जो ध्यावें।
कामदेवमद नाश, निज समरस सुख पावें।।मै.।।18।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअकामजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

'धर्मधाम' जिन नाम, जो नित मुख से बोलें।
निज में लें विश्राम, वे संसार न डोलें।।मै.।।19।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधर्मधामजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

'सूक्तिसेन' जिनदेव, द्वादश गण संबोधें।
निज निज भाषा माहिं, सब जनमन प्रतिबोधें।।मै.।।20।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसूक्तिसेनजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

'क्षेमंकर' जिननाथ, सब जग क्षेम करे हैं।
सब जन पूजें आप, सर्व अनिष्ट हरे हैं।।मै.।।21।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीक्षेमंकरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

'दयानाथ' जिनदेव, अगणित गुणगण धारें।
सुरनर मुनिगण आय, भक्ति स्तवन उचारें।।मै.।।22।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीदयानाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

श्री 'कीर्तिप' प्रभु आप, कीर्ति लता जग व्यापी।
जो गुण गावें नित्य, पावें यश अविनाशी।।मै.।।23।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकीर्तिपजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

नाथ 'शुभंकर' आप, सर्व अशुभ परिहारी।
करके शुभ तत्काल, हरो अमंगल भारी।।मै.।।24।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशुभंकरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

पूर्णार्घ्य-दोहा

पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय के, प्रभु तुम हो निर्दोष।
जन तुम भक्ति प्रभाव से, व्रत करते निर्दोष।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं गांगेयकादिशुभंकरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

-कुसुमलता छंद-

जय जय तीर्थंकर इस जग में, अभयंकर क्षेमंकर नाथ।
जय जय जिनवर मुक्ति वधूवर, त्रिभुवनजन को किया सनाथ।।
समवसरण में अद्भुत वैभव, हुआ आपका जो भगवान्।
वैसा अब तक किसी अन्य को, नहीं मिला है विभव महान्।।1।।
मरकत पद्मरागमणियों के, पत्ते फूल अमल अभिराम।
ऐसा तरु अशोक है हरता, भव्य जनों का शोक तमाम।।
मुक्ताफल लटके हैं जिनमें, तीनछत्र शशि बिंब समान।
प्रभु के तीन लोक की प्रभुता, सूचित करते महिमावान।।2।।

नाना रत्न जटित सिंहासन, मणिस्फटिक विनिर्मित जान।
उस पर आप अधर चतुरंगुल, राजें कमलापति भगवान।।
गाढ़ भक्तियुत अंजलि जोड़े, विकसित मुख सब गण के जीव।
चारों तरफ घेरकर प्रभु को, बैठे हैं जिन भक्ति अतीव।।3।।
दुंदुभि बाजे बजें उच्च ध्वनि, मानों कहते झट आवो।
विषय कषायों को छोड़ो अब प्रभु की चरण शरण आवो।।
गुंजे भ्रमर जिन्हों पे सुरतरु, के सुमनों की हो वर्षा।
डंठल नीचे कर ऊरध मुख, खिले कुसुम जनमन हर्षा।।4।।
सूर्य करोड़ों की द्युति लज्जित करता तुम भामंडल नाथ।
जिसके दर्शन से भाक्तिकगण, उसमें देखें निज भव सात।।
कुंद पुष्पसम श्वेत मनोहर, चौंसठ चामर ढुरें सदैव।
जो तुमको नमते ऊरधगति, पाते मानों कहें अतीव।।5।।
प्रातिहार्य ये आठ आपकी, बाहर लक्ष्मी करें बखान।
अंतर लक्ष्मी जैसा तुम में, वैसी ही तुम में भगवान।।
नहिं ऐसा कोई इस जग में, जिससे उपमा हो तुम आन।
प्रभो स्वयं उपमेय आप ही, और आप ही है उपमान।।6।।

-दोहा-

आप विभव जो वर्णते, वे हों विभव सनाथ।
'ज्ञानमती' सुखसंपदा, मिले उन्हें निज हाथ।।7।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 52)

पश्चिम पुष्करार्ध विहरमाण बीस तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापन-गीता छंद

वर अपर पुष्कर द्वीप में जो पूर्व अपर विदेह हैं।
उनमें जिनेश्वर विहरते भविजन धरें मन नेह हैं।।
उन चार तीर्थंकर जिनेश्वर की करूँ इत थापना।
पूजूँ अतुल भक्ती लिये पाऊँ अचल पद आपना।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्री-वीरसेनमहाभद्र-देवयशोऽजितवीर्यनामचतुस्तीर्थंकरसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्री-वीरसेनमहाभद्र-देवयशोऽजितवीर्यनामचतुस्तीर्थंकरसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्री-वीरसेनमहाभद्र-देवयशोऽजितवीर्यनामचतुस्तीर्थंकरसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-चालनंदीश्वर पूजा

मुनि मन सम पावन नीर, कंचन भृंग भरूँ।
मिट जावे भव भव पीर, जिनपद धार करूँ।।
श्री विहरमाण जिनराज, पूजूँ मन लाके।
मिल जावे निज साम्राज, समरस सुख पाके।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्रीवीरसेनादि-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीरी गंध सुगंध, चंदन संग किया।
जिन पादाम्बुज चर्चंत, आतम सौख्य लिया।।श्री.।।2।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्रीवीरसेनादि-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शशि किरणों सम अति श्वेत, तंदुल पुंज धरूँ।
निज अक्षत पद के हेतु, पूजत हर्ष भरूँ।।
श्री विहरमाण जिनराज, पूजूँ मन लाके।
मिल जावे निज साम्राज, समरस सुख पाके।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्रीवीरसेनादि-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

बेला चंपक की माल, चरणों अर्पत हूँ।
मिल जावे निजगुणमाल, तुम पद अर्चत हूँ।।श्री.।।4।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्रीवीरसेनादि-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पेड़ा बरफी पकवान, तुम ढिग भेंट करूँ।
हो क्षुधा वेदनी हान, आतम सौख्य भरूँ।।श्री.।।5।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्रीवीरसेनादि-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक की ज्योति उद्योत, बाह्य तिमिर नाशे।
तुम आरति से प्रद्योत, ज्ञानमणी भासे।।श्री.।।6।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्रीवीरसेनादि-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

वर धूप सुगंधित खेय, कर्म जलाऊँ मैं।
तुम चरण कमल को सेय, निजसुख पाऊँ मैं।।श्री.।।7।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्रीवीरसेनादि-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर सेव बादाम, तुम ढिग अर्पत हूँ।
मिल जावे निज विश्राम, तुम पद अर्चत हूँ।।श्री.।।8।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्रीवीरसेनादि-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंधादिक वसु अर्घ, आप चढ़ाऊँ मैं।
नवनिधि सुख होय अनर्घ, आप रिझाऊँ मैं।।श्री.।।9।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्रीवीरसेनादि-चतुस्तीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

नाथ! पाद पंकेज, जल से त्रयधारा करूँ।
अतिशय शांती हेत, शांतीधारा विश्व में।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार गुलाब, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।
मिले आत्मसुख लाभ, जिनपद पंकज पूजते।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-दोहा-

पश्चिम पुष्कर द्वीप में, विहरमाण तीर्थेश।
पुष्पांजलि कर पूजते, मिटे सर्व मन क्लेश।।1।।

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-शंभु छंद-

पश्चिम पुष्कर पूरब विदेह, सीता नदि के उत्तर जानो।
पुरि पुंडरीकिणी भानुमती, माता भूपाल पिता मानो।।
ऐरावत चिन्ह कहा श्रीमन्, जिन 'वीरसेन' त्रिभुवन विश्रुत।
मैं पूजूं भक्ति बढ़ा करके, तुम भाक्तिक हो गुणमणि मंडित।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्रीवीरसेन-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युन्माली मेरू पूरब, सुविदेह नदी के दक्षिण में।
विजयानगरी पति देवराज, हैं जनक उमा माता सच में।।

शशिचिन्ह सहित हे 'महाभद्र', तुम शरणागत के रक्षक हो।
मैं पूजूँ स्वातम निधि हेतु तुम धर्मचक्र के वर्तक हो।।2।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्रीमहाभद्र-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम पुष्कर पश्चिम विदेह, सीतोदा के दक्षिण दिश में।
श्रीभूपति पिता गंगादेवी मां नगरि सुसीमा में जन्में।।
तुम स्वस्तिक चिन्ह 'देवयश' जिन तुम घाति चतुष्टय के घाती।
मैं पूजूँ श्रद्धा से तुममें, सुअनंत चतुष्टय अविनाशी।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्रीदेवयश-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युन्माली मेरू पश्चिम, सुविदेह नदी के उत्तर में।
पितु श्री सुबोध हैं प्रसू कनकमाला सु अयोध्या नगरी में।।
प्रभु 'अजितवीर्य' तुम कमल चिन्ह' भविजन भवदाह शमन करते।
मैं पूजूँ भक्ती से नित प्रति, मेरे भवक्लेश न क्यों हरते।।4।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्रीअजितवीर्य-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य-दोहा

पश्चिम पुष्कर दीप में, शाश्वत चार जिनेश।
नमूँ नमूं नित भक्ति से, करो सर्व दुख शेष।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाणश्रीवीरसेन-महाभद्रदेवयशोऽजितवीर्यनामचतुस्तीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

-स्रग्विणी छंद-

नाथ! त्रैलोक्य में पूर्ण चंदा तुम्हें।
मैं नमूँ मैं नमूँ हे जिनंदा तुम्हें।।
पूरिये नाथ मेरी यही कामना।
फेर होवे न संसार में आवना।।1।।

सोलहों भावना भाय जिनपाद में।
तीर्थंकर हो गये आप ही आप में।।
मात के गर्भ में आप जब आ गये।
इंद्र उत्सव किये मातघर आ गये।।2।।

जन्मते आपके इंद्र आसन कंपे।
शंख ध्वनि वाद्य घंटा स्वयं बज उठे।।
इंद्र के मौलि शेखर स्वयं झुक गये।
कल्पतरु भी स्वयं पुष्प वर्षा रहे।।3।।

जै जया जै जया जै जया ध्वनि उठी।
इंद्र आदेश पा इंद्रसेना सजी।।
इंद्र ऐरावतारूढ़ हो चल पड़े।
इंद्र इंद्राणियां देव गण चल पड़े।।4।।

मेरु गिरि पर न्हवन आपका हो रहा।
जन्म कल्याण उत्सव अनोखा कहा।।
इंद्र हज्जार भुज कर न्हवन कर रहा।
नेत्र हज्जार कर रूप निरखे अहा।।5।।

तीर्थकर देव माहात्म्य त्रैलोक्य में।
ना हुआ अन्य का भी कभी लोक में।।
तीर्थकर पुण्य माहात्म्य मुनि गावते।
देव गणधर कहें पार ना पावते।।6।।

धन्य मैं धन्य मैं आज गुण गा रहा।
धन्य है ये घड़ी नाथ पूजूँ अहा।।
प्रार्थना नाथ मेरी ये सुन लीजिये।
'ज्ञानमती' पूर्ण हो युक्ति ये दीजिये।।7।।

-घत्ता-

जय जय जिनराजा, शिवतिय राजा, भविहित काजा, तुमहिं नमूँ।
जय जय जिन संपति, दीजे मुझ प्रति, अविचल गति हित नित प्रणमूँ।।8।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थविहरमाण-श्रीवीरसेनमहाभद्रदेवयशोऽजितवीर्यनामचतुस्तीर्थंकरेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 53)

पश्चिम पुष्करार्ध नवदेवता पूजा

अथ स्थापना-नरेन्द्र छंद

पश्चिम पुष्कर अर्ध द्वीप में कर्मभूमि हैं चौंतिस।
इनके आर्य खंड में नित प्रति जिनवर विहरें शिवप्रद।।
मुनिगण धर्म जिनालय जिनवर बिंब जजूँ मन लाके।
आह्वानन कर थापूँ इत मैं चिन्मय ज्योति जगाके।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-वसंततिलका छंद

गंगानदी सलिल से त्रयधार देऊँ।
हे नाथ! जन्म मृति को अब दूर कर दो।।
अर्हंत सिद्ध मुनिवृंद जजूँ रुची से।
जैनेंद्रगेह जिनबिंब नमूँ नमूँ मैं।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर चंदन घिसा चरणों समर्चूं।
हे नाथ! तापत्रय दूर करो हमारे।।
अर्हंत सिद्ध मुनिवृंद जजूँ रुची से।
जैनेंद्रगेह जिनबिंब नमूँ नमूँ मैं।।2।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मोती समान धवलाक्षत पुंज धरके।
पूजूँ तुम्हें प्रभु अखंड गुणानुरागी।।अर्हंत.।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

बेला गुलाब मचकुंद चढ़ाय चरणों।
हे नाथ! स्वात्मसुख शांति बढ़ाय दीजे।।अर्हंत.।।4।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

लड्डू पुआ इमरती हलुआ चढ़ाऊँ।
हे नाथ! भूख रुज शांत करो अनादी।।अर्हंत.।।5।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर ज्योति जलती हरती अंधेरा।
हे नाथ! आरति करूँ निज ज्ञान दीजे।।अर्हंत.।।6।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

खेऊँ दशांग वर धूप सु अग्नि में मैं।
हे नाथ! कर्म निर्मूल करो सभी ही।।अर्हंत.।।7।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर आम अखरोट चढ़ाय पूजूँ।
हे नाथ! मोक्षफल आश फले हमारी।।अर्हंत.।8।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीरादि अर्घ कनकाब्ज[1] तुम्हें चढ़ाऊँ।
हे नाथ! रत्नत्रय पूर्ण करो हमारे।।अर्हंत.।।9।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

यमुना सरिता नीर, प्रभु चरणों धारा करूँ।
मिले निजात्म समीर, शांतीधारा शं करे।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुरभित खिले सरोज, जिन चरणों अर्पण करूँ।
निर्मद करूँ मनोज, पाऊँ जिनगुण संपदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-सोरठा-

पश्चिम पुष्कर द्वीप में, जिनवर मुनिगण नित्य।
जिनगृह जिन प्रतिमा जजूँ, पुष्पांजलि कर इत्य[2]।।1।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

---

1. स्वर्णकमल। 2. यहाँ।

-नरेन्द्र छंद-

विद्युन्माली के पूरब में, सीता नदि उत्तर में।
'कच्छादेश' छहों खंडों युत, आर्यखंड मधि उसमें।।
तीर्थंकर मुनिगण नित विहरें, जिनवर धर्म प्रवर्ते।
जिनगृह जिनप्रतिमा को पूजूँ, ये भव भव दुख हर्ते।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहकच्छादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्कर के पूरब विदेह में, देश 'सुकच्छा' सोहे।
आर्यखंड में कर्मभूमि है, तीर्थंकर ध्वनि होहे।।तीर्थं.।।2।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहसुकच्छादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महाकच्छा' अतिसुंदर, सुरललनायें आतीं।
आर्यखंड में जिनवर के गुण, गातीं नहीं अघातीं।।तीर्थं.।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहमहाकच्छादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'कच्छकावती' मनोहर, मधि विजयार्ध रजत का।
आर्यखंड में विद्याधरियां, जिनगुण गातीं नीका।।तीर्थं.।।4।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहकच्छकावतीदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश वहाँ 'आवर्ता' सुंदर, इंद्र इंद्राणी आते।
आर्यखंड में जिन जन्मोत्सव, करते मोद मनाते।।तीर्थं.।।5।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहआवर्तादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'लांगलावर्ता' मनहर, आर्यखंड की शोभा।
चक्रवर्ति हलधर नारायण, राज्य करें मन लोभा।।तीर्थं.।।6।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहलांगलावर्तादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कला' धर्म पूर्ण है, जन जन सर्व सुखी हैं।
आर्यखंड में साधु तपस्वी, रहते स्वात्ममुखी हैं।।तीर्थं.।।7।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहपुष्कलादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'पुष्कलावती' आर्य में, पुंडरीकिणी नगरी।
तीर्थंकर की दिव्यध्वनी सुन, जन जन की मति सुधरी।।तीर्थं.।।8।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहपुष्कलावतीदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देवारण्य वेदिका सन्निध, सीता नदि दक्षिण में।
'वत्सा' देश धर्म वत्सलयुत, आर्यखंड इस मधि में।।तीर्थं.।।9।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहवत्सादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुवत्सा' के आरज में, धर्मप्रेम नित बरसे।
देव असुर क्या इंद्र स्वयं, यहां जन्मधरन को तरसें।।तीर्थं.।।10।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहसुवत्सादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महावत्सा' अतिसुंदर, मुनिगण समरस पीते।
आर्यखंड में धर्म ग्रहण कर, जन जन सुख से जीते।।
तीर्थंकर मुनिगण नित विहरें, जिनवर धर्म प्रवर्ते।
जिनगृह जिनप्रतिमा को पूजूँ, ये भव भव दुख हर्ते।।11।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहमहावत्सादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'वत्सकावती' यहां पर, आर्यखंड में नित ही।
कर्मभूमि चौथे युग सदृश, जिन कल्याणक नित ही।।तीर्थं.।।12।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहवत्सकावतीदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रम्या' देश विदेह मनोहर, सुर विद्याधर रमते।
आर्यखंड में जिनगुण गाते, किन्नर गण नहिं थकते।।तीर्थं.।।13।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहरम्यादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुरम्या' आर्यखंड में, वन उद्यान घनेरे।
सभी भव्य जन भक्ति भाव से, जिनगुण कहें सबेरे।।तीर्थं.।।14।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहसुरम्यादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'रमणीया' है देश मनोहर, आर्यखंड में ऋषिगण।
निज आत्मा में नित प्रति रमते, गाते जिनगुण मुनिगण।।तीर्थं.।।15।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहरमणीयादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'मंगलावती' मध्य में, आर्यखंड सुखकारी।
यतिगण नित्य आत्म अनुभवरस, पीते हैं गुणकारी।।तीर्थं.।।16।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वविदेहमंगलावतीदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-रोला छंद-

पश्चिम पुष्कर मध्य, अपर विदेह सुहावे।
'पद्मा' देश सुमध्य, आर्यखंड मन भावे।।
तीर्थंकर मुनिनाथ, जिन मंदिर सुखकारी।
जिन प्रतिमा जिनधर्म, जजूँ स्वात्म गुणकारी।।17।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहपद्मादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुपद्मा' मध्य, आर्यखंड मन मोहे।
जिनवर भवन उतंग, सुर नर कृत अति सोहें।।तीर्थं.।।18।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहसुपद्मादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'महापद्मा' यह आरजखंड वहाँ पे।
सुर किन्नर गुणगाय, जजें जिनेन्द्र वहां पे।।तीर्थं.।।19।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहमहापद्मादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश विदेह अपूर्व, कहा 'पद्मकावति' है।
वहाँ सदा जिनसूर्य, मुनिपंकज विकसत हैं।।तीर्थं.।।20।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहपद्मकावतीदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'शंखा' देश विदेह, भव्य देह को नाशें।
आर्यखंड में नित्य, केवलज्ञान प्रकाशें।।
तीर्थंकर मुनिनाथ, जिन मंदिर सुखकारी।
जिन प्रतिमा जिनधर्म, जजूँ स्वात्म गुणकारी।।21।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहशंखादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'नलिना' देश विदेह, आर्यखंड में दिनमणि।
मुनी बने गतदेह, पा लेते निज गुणमणि।।तीर्थं.।।22।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहनलिनादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'कुमुदा' देश अपूर्व, आर्यखंड में जिनशशि।
भवि मन कुमुद विकासि, शोभें नित शिवतियपति।।तीर्थं.।।23।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदहकुमुदादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'सरित्' विदेह महान, वहां धर्मसरिता है।
आरजखंड निधान, जिनवर शिवभर्ता है।।तीर्थं.।।24।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहसरित्देशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूतारण्य समीप, सीतोदा उत्तर में।
'वप्रा' देश विदेह, आर्यखंड इक उसमें।।तीर्थं.।।25।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहवप्रादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुवप्रा' मध्य, आर्यखंड अतिसोहे।
जैनधरम अभिनंद्य, भविजन का अघ धौहे।।तीर्थं.।।26।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहसुवप्रादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम देश विदेह, 'महावप्रा' सुखदानी।
आर्यखंड में साधु, करें कर्म की हानी।।तीर्थं.।।27।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहमहावप्रादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश विदेह महान्, नाम 'वप्रकावति' है।
आर्यखंड सुखखान, रमें वहां सुरपति हैं।।तीर्थं.।।28।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहवप्रकावतिदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधादेश' विदेह, आर्यखंड गुणखाना।
भवि जन धर मन नेह, नित्य जजें जिनधामा।।तीर्थं.।।29।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहगंधादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'सुगंधा' मध्य, जिनवर सुयश सुगंधी।
आर्यखंड में धर्म, भविजन मन आनंदी।।तीर्थं.।।30।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहसुगंधादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश 'गंधिला' नित्य, छहखंडों से शोभे।
आर्यखंड में भव्य, धर्मक्रिया से शोभें।।
तीर्थंकर मुनिनाथ, जिन मंदिर सुखकारी।
जिन प्रतिमा जिनधर्म, जजूँ स्वात्म गुणकारी।।31।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहगंधिलादेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'गंधमालिनी' देश, आर्यखंड इस मधि में।
मुनी दिगंबर भेष, धार रमें समरस में।।तीर्थं.।।32।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपश्चिमविदेहगंधमालिनीदेशस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चाल-शेर

इस अपर पुष्करार्ध में दक्षिण दिशा विषे।
है क्षेत्र 'भरत' नाम से, छहखंड उस विषे।।
इस आर्यखंड में जिनेंद्रदेव मुनिवरा।
जिन मूर्तियाँ जिनगेह जजूँ में रुचीधरा।।33।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिदक्षिणदिक्भरतक्षेत्रस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस द्वीप में उत्तरदिशी शुभ क्षेत्र 'ऐरावत'।
छहखंड मध्य आर्यखंड में मुनी संतत।।
तीर्थेश चौथे काल में चौबीस ही होते।
बस पाँचवें तक धर्म जजूँ पाप को धोते।।34।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-उत्तरदिक्ऐरावतक्षेत्रस्थित-आर्यखंडे अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-

पश्चिम सु पुष्करार्ध में चौंतीस कर्मभू।
जिनराज व मुनिराज जैन धर्म मुक्ति भू।।
जिन मूर्तियाँ जिनगेह जो कृत्रिम बहुत बने।
इन पूजते संसार के सब सौख्य हो घनें।।1।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इन कर्मभूमि में पवित्र आर्यिकायें हैं।
कुलशील शुद्ध धर्मध्वजा फहरहायें हैं।।
इन आर्यिकाओं की सदा मैं वंदना करूँ।
हे मात! श्रेष्ठ बुद्धि दो मैं अर्चना करूँ।।2।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-सर्वार्यिकाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इन कर्मभू में तीर्थकर के पंचकल्याणक।
गणधर व मुनिगणों के ज्ञान मोक्षस्थानक।।
उन सब पवित्र तीर्थ की मैं अर्चना करूँ।
सब तीर्थक्षेत्र वंद के यम खंडना करूँ।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थिततीर्थकरगणधरमुनिगण-पंचकल्याणकादितीर्थक्षेत्रेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-शंभु छंद-

सब इक सौ साठ विदेह क्षेत्र, भरतैरावत हैं पाँच पाँच।
ये इक सौ सत्तर कर्मभूमि, ढाई द्वीपों में मान्य साँच।।
इनमें ही तीर्थंकर जिनवर, चारणऋषि मुनिगण होते हैं।
इक साथ अधिक तीर्थंकर भी, इक सौ सत्तर हो सकते हैं।।

-दोहा-

नमूँ नमूँ नवदेवता, हरूँ जगत जंजाल।
करो कृपा मुझ पर प्रभो, त्रिभुवन नाथ कृपाल।।4।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपस्थएकशतसप्ततिकर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य- **ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।**

जयमाला

-दोहा-

कर्म भूमि में भव्यजन, कर्म काट हों मुक्त।
इनमें ही नवदेवता, गाऊँ गुण रुचियुक्त।।1।।

-शंभु छंद-

जय जय अर्हंत सिद्ध सूरी, जय उपाध्याय सब साधु मुनी।
जय जय जिनधर्म जिनागम की, जय जिनप्रतिमा जिनधाम मणी।।
बत्तीस विदेहों में शाश्वत, जिनधर्म एक ही चलता है।
बस भरत और ऐरावत में, षट् काल परावृत चलता है।।2।।
बत्तीस विदेहों में नित ही नवदेव विराजे रहते हैं।
जिनप्रतिमा जिनमंदिर वहाँ पर, सुर नर निर्मापित रहते हैं।।
भरतैरावत में चौथे युग में, अर्हत् सिद्ध हुआ करते।
पंचम तक सब मुनिधर्म शास्त्र, जिनमूर्ति जिनालय भी रहते।।3।।
जिनधर्मसुता सम आर्यिकायें, रत्नत्रय गुणमणि भूषित हैं।
ब्राह्मी सम जिनवर कन्यायें, निज आत्म सुधारस पूरित हैं।।
इन सब नवदेवों को मेरा, शत शत वंदन शत शत वंदन।
इन सभी आर्यिकाओं को भी, मेरा वंदन शत अभिनंदन।।4।।
मनवचतन से कौटिल्य करें, अरु विसंवाद जो करते हैं।
वे अशुभ नाम कर्मों को बांधे, बहुत दुःख को भरते हैं।।
मनवचनकाय को सरल रखें, विपरीत प्रवृत्ति नहीं करते।
शुभनाम कर्म का बंध करें, वे शुभ गति पाकर सुख भरते।।5।।

जो दर्शनशुद्धि आदि सोलह, भावन भाते तद्रूप बने।
वे तीर्थंकर प्रकृती बांधे, त्रिभुवन के नेता आप बने।।
परनिंदा आत्म प्रशंसा कर, परगुण को नित्य छिपाते हैं।
निज के अवगुण को गुण कहते, वे नीचगोत्र को बांधे हैं।।6।।
निज निंदा अन्य प्रशंसा कर, जो नम्र प्रवृत्ति रखते हैं।
नित उच्च गोत्र का बंध करें, वरवंश तिलक वो बनते हैं।।
जो पर के दान लाभ भोगों में विघ्न करें बाधा डालें।
वे अंतराय का बंध करें, निज कार्यों में बाधा डालें।।7।।
इन अशुभ नाम गोत्रों का मैं, बहु अंतराय का बंध किया।
हे नाथ! अशुभ का खंडन ही, इस हेतु आपकी शरण लिया।।
शुभ नाम गोत्र का उदय फले, कटु अंतराय की हानी हो।
हे नाथ! दर्शशुद्ध्यादिक से, शुभ प्रकृति बंध सुखदानी हो।।8।।
शुभ कर्म उदय से वज्रवृषभ, नाराच आदि संहनन मिलें।
शिव कारण सामग्री पाकर, रत्नत्रय कलियां तुरत खिलें।।
हे नाथ! सर्व आठों कर्मों का, मैं निर्मूल विनाश करूँ।
निज 'ज्ञानमती' ज्योती प्रगटे, जिससे निज आत्म विकास करूँ।।9।।

-दोहा-

कर्म भूमि में मुनि बनूँ, करूँ कर्म की हानि।
परमानंदामृत पियूँ, बनूँ स्वयं गुणखानि।।10।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्याय-सर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 54)

मानुषोत्तर पर्वत पूर्वदिक् जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–गीता छन्द–

वरद्वीप सोलह लाख योजन, नाम पुष्कर जानिये।
इस मध्य चूड़ी के सदृश नग मानुषोत्तर मानिये।।
इस पे चतुर्दिश चार अनुपम, सासते जिनगेह हैं।
थापूँ यहां पूरब दिशा, जिनगेह जिन धर नेह हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीपुष्करद्वीपमध्यस्थितमानुषोत्तरपर्वतसंबंधिपूर्वदिक्सिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीपुष्करद्वीपमध्यस्थितमानुषोत्तरपर्वतसंबंधिपूर्वदिक्सिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीपुष्करद्वीपमध्यस्थितमानुषोत्तरपर्वतसंबंधिपूर्वदिक्सिद्धकूट-जिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–(चाल-नंदीश्वर पूजा)–

भव भव में शीतल नीर, जी भर खूब पिया।
पर बुझी न मन की प्यास, आखिर ऊब गया।।
इस हेतू से जल लाय, तुम पद यजन करूँ।
निज आतम निधि को पाय, भव भव तपन हरूँ।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु मोह अग्नि की दाह, मुझको दहन करे।
हिमकण चंदन बर्फादि, नहिं भव ताप हरे।।
इस हेतू चंदन लाय, तुम पद यजन करूँ।
निज आतम निधि को पाय, भव भव तपन हरूँ।।2।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

धन धान्य विभव को पाय, नहिं व्यय को चाहूँ।
पर अब तक इनकी नाथ, रक्षा नहिं पाऊँ।।
इसलिये धवल ले शालि, तुम पद यजन करूँ।।
निज आतम निधि को पाय, भव भव तपन हरूँ।।3।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मन नयन घ्राण हर पुष्प, सुरभी खूब लिया।
पर भगवन तुम गुण गंध, अब तक नाहिं लिया।।
इसलिये विविध सुम लाय, तुम पद यजन करूँ।
निज आतम निधि को पाय, भव भव तपन हरूँ।।4।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भव भव में बहु पकवान, खाके तृप्त नहीं।
तुमने प्रभु क्षुध की व्याधि, नाशी तृप्ति लही।।
इसलिये मधुर चरु लाय, तुम पद यजन करूँ।
निज आतम निधि को पाय, भव भव तपन हरूँ।।5।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं चाहूं दीपक सूर्य, मन का तिमिर हरे।
पर झूठ हुई सब आश, समकित पाय खरे।।
निज द्युति हित दीपक लाय, तुम पद यजन करूँ।
निज आतम निधि को पाय, भव भव तपन हरूँ।।6।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दुख दूर करन हित नाथ! बहुते यत्न करे।
पर दुःख हरण में अन्य, कोई नाहिं अरे।।

इस हेतू धूप जलाय, तुम पद यजन करूँ।
निज आतम निधि को पाय, भव भव तपन हरूँ।।7।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

भव भव के सुख फल हेतु, बहुते देव यजे।
पर अब तक कोई नाहिं, शिव फल देय सके।।
इसलिये सरस फल लाय, तुम पद यजन करूँ।।
निज आतम निधि को पाय, भव भव तपन हरूँ।।8।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुमूल्य अतुल फल हेतु, सब जग घूम चुका।
पर मिली न अब तक तृप्ति, बहु पद चूम चुका।।
शिव फल हित अर्घ्य चढ़ाय, तुम पद यजन करूँ।
निज आतम निधि को पाय, भव भव तपन हरूँ।।9।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

सिंधु नदी को नीर, धार देय जिन पद कमल।
मिले भवोदधि तीर, शांतीधारा शम करे।।10।।

शांतये शांतिधारा।

वकुल मालती फूल, सुरभित करते दश दिशा।
मारमल्लहर[1] देव तुम पद अर्पूं मैं सदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य –दोहा–

मनुजोत्तर नग पूर्वदिश, जिनचैत्यालय सार।
पुष्पांजलि कर पूजहूँ, करो सकल सुख सार।।1।।

इति मानुषोत्तरपर्वतस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

1. काम मल्ल के विजेता।

–गीता छन्द–

नग मानुषोत्तर से परे, नहिं मनुष जा सकते कभी।
इस हेतु सार्थक नाम पर्वत, शास्त्र कहते हैं सभी।।
इस पूर्व दिश में जैनमंदिर, मूर्तियाँ जिनराज की।
पूजूँ चढ़ाकर अर्घ्य ले, पदवी मिले जिनराज की।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

जय जय शाश्वत जिनभवन, जय जय जिनवर मूर्ति।
जय जय जयमाला कहूँ, करुँ रतनत्रय पूर्ति।।1।।

–चौबोल छन्द (चाल–मेरी भावना)–

जय जय मनुजोत्तर नग जग में, जय जय उसकी अति महिमा।
जय जय पूरब दिश का जिनगृह, जय जय रतनमयी प्रतिमा।।
जय जय कर्मारी संहारक, जय जय जिन भव पार करें।
जय जय तीन लोक के नायक, भक्तों को सुख अतुल भरें।।2।।

सत्रह सौ इक्कीस सुयोजन, तुंग कहा यह ग्रन्थन में।
इक हजार बाइस योजन यह, मूल में है विस्तृत सच में।।
मध्य भाग में सत सौ तेइस, चउ सौ चौबीस ऊपर में।
स्वर्णमयी है अनादि अनिधन, चौदह महागुफा इसमें।।3।।

टंकोत्कीर्ण भीतरी तरफे, घटता बाहिर तरफ कहा।
दिव्य रत्नमय रचना बहुविध, सुर खेचर मन मोह रहा।।
पर्वत तल में औ ऊपर भी, तट वेदी चउ तरफ कहीं।
वेदी मध्य सरस उपवन में, तरु पंक्ती फल फूल रहीं।।4।।

इस पे चारों दिश जिनमंदिर, भविजन पूजें भक्ति करें।
पूरब दिश के जिन चैत्यालय, की पूजन हम नित्य करें।।
अगणित भव भव के अघ संचित, तत्क्षण ही निज शक्ति हरें।
निज फल देने में बल विरहित, साता में संक्रमण करें।।5।।

–घत्ता–

जय जय शिवभर्ता, सब अघहर्ता, निज सुख कर्ता तुमहिं नमें।
सो 'ज्ञानमती' कर, सर्वकुमति हर, शिव सुख पाकर चिरहिं रमें।।6।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपूर्वदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 55)

मानुषोत्तर पर्वत दक्षिण दिश जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–दोहा–

मनुजोत्तर नग के उपरि, दक्षिण दिश अभिराम।
जिनमंदिर जिनबिंब को, पूजूँ शिव सुख धाम।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं––सोरठा–

मधुर पुष्टकर नीर, सिंधु नदी का लाय के।
मनुजोत्तर दिश याम्य[1], जिन चैत्यालय नित जजूँ।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हिमकर चंदन शीत, कंचन द्रव सम परिणमे।
मनुजोत्तर दिश याम्य, जिन चैत्यालय नित जजूँ।।2।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शाली कलम अखंड, तंदुल धवल सुगंधिते।
मनुजोत्तर दिश याम्य, जिन चैत्यालय नित जजूँ।।3।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. दक्षिण।

सुरवृक्षों के फूल, विविध सुगंधित लायके।
मनुजोत्तर दिश याम्य, जिन चैत्यालय नित जजूँ।।4।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नानाविध घृत सिक्त, व्यंजन मधुर सुहावने।
मनुजोत्तर दिश याम्य, जिन चैत्यालय नित जजूँ।।5।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कंचनदीप प्रजाल, अंतर ध्वांत विनाशने।
मनुजोत्तर दिश याम्य, जिन चैत्यालय नित जजूँ।।6।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूरादि आदि सुगन्ध, धूप अग्नि में खेयके।
मनुजोत्तर दिश याम्य, जिन चैत्यालय नित जजूँ।।7।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल ले कल्पतरूज[1], सरस मधुर मनमोहने।
मनुजोत्तर दिश याम्य, जिन चैत्यालय नित जजूँ।।8।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंधादि मिलाय, अर्घ्य लिये कर पात्र में।
मनुजोत्तर दिश याम्य, जिन चैत्यालय नित जजूँ।।9।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

सिंधु नदी को नीर, धार देय जिनपद कमल।
मिले भवोदधि तीर, शांतीधारा मैं करूं।।10।।

शांतये शांतिधारा।

1. कल्पवृक्ष से उत्पन्न हुए।

वकुल मालती फूल, सुरभित करते दश दिशा।
मारमल्लहरदेव, तुम पद अर्पूं मैं सदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–

–दोहा–

मनुजोत्तर पे याम्यदिश, शाश्वत जिनगृह सिद्ध।
पुष्पांजलि कर पूजते, मिले नवोनिध रिद्ध।।1।।

इति मानुषोत्तरपर्वतस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–अडिल्ल छन्द–

नरपर्वत[1] पे दक्षिण दिश जिनगृह कहा।
अकृत्रिम जिनबिंब, सहित अद्भुत रहा।।
पापास्रव के संवर हेतू जिन जजूँ।
पुनः ध्यान रसलीन पूर्ण संवर भजूँ।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

*जाप्य–***ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिंबेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

भावन व्यंतर ज्योतिषी, कल्पवासिया देव।
जिनगुण मणिमाला पढ़े, मैं भी करहूं सेव।।1।।

रोला छन्द–(चाल–अहो जगत् गुरुदेव...)

मनुजोत्तर नग सिद्ध, स्वर्णिम शोभ रहा है।
चक्षु सुचक्षू[2] देव, दो से रक्ष कहा है।।
श्री जिनमहल अपूर्व, मुखमंडप अतिसोहे।
गर्भालय के मध्य, जिनप्रतिमा मन मोहे।।2।।

1. मानुषोत्तर पर्वत। 2. चक्षु और सुचक्षु नाम वाले।

जो पूजें धर प्रीत, चिन्मय ज्योति लहे हैं।
जो वंदे नत शीश, परमानन्द गहे हैं।।
जो जिनवर गुणमाल, निज ग्रीवा[1] में धारें।
मुक्ति रमा भरतार, होकर सब जग तारें।।3।।

जो प्रभु तुम गुण कीर्ति, सौरभ भुवि विस्तारें।
उनके गुण की गंध, फैले लोक मंझारे।।
जो प्रभु तुम चरणाब्ज, आश्रय आन गहे हैं।
वे सब जग में सिद्ध, समरथवान भये हैं।।4।।

जो तुम वच पीयूष, रुचि प्याली से पीवें।
वे अजरामर होय, काल अनंते जीवें।।
जो तुम ध्यान लगाय, मन एकाग्र करे हैं।
वे तत्क्षण ही मृत्यु, अरि पे वार करे हैं।।5।।

जिन हृदयाम्बुज आप, नितप्रति वास करे हैं।
उनकी नानाव्याधि क्षण में आप टरे हैं।।
तुम प्रभु ज्योतीपुंज, हृदय महल में आवो।
'ज्ञानमती' कर पूर्ण, भले फिर वापस जावो।।6।।

–दोहा–

गुणरत्नाकर नाथ तुम, को गण पावे पार।
अल्पमती अब जानके, भव से लेहु निकार।।7।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरिदक्षिणदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

1.कण्ठ।

(पूजा नं. 56)

मानुषोत्तर पर्वत पश्चिम दिश जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–सोरठा–

पश्चिमदिश जिनगेह, मनुजोत्तर गिरि पे कहा।
थापूँ भक्ति समेत, जिनवर प्रतिमा शासती।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्ब-समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्ब-समूह!अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्ब-समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

–अथाष्टकं–गीता छंद–

सीता नदी का सलिल शीतल, स्वर्ण झारी में भरूँ।
भव भव तृषा दुख शांति हेतू, नाथ पद धारा करूँ।।
नग मानुषोत्तर में अपर दिश, जिननिलय पूजा करूँ।
चिंतामणी चैतन्य धन, निज को हि परमात्मा करूँ।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीर चंदन मिश्रकर, कंचन कटोरी में भरूँ।
जग में अनादी से लगी संज्ञा चतुःज्वर[1] को हरूँ।।नग.।।2।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शशिरश्मि सम उज्ज्वल, अखंडित शालि से थाली भरूँ।
चिरकाल संचित पाप पुंजों, को तुरत खंडित करूँ।।

1. आहार भय मैथुन और परिग्रह ये चार संज्ञायें ज्वर सदृश हैं।

नग मानुषोत्तर में अपर दिश, जिननिलय पूजा करूँ।
चिंतामणी चैतन्य धन, निज को हि परमात्मा करूँ।।3।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदार चंपक कल्पतरु के पुष्प नाना विध भरूँ।
रतिपतिजयी[1] जिनराज के, पदकंज की पूजन करूँ।।नग.।।4।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीखंड पायस दुग्धफेनी, मोदकादी ले घने।
क्षुध प्यास की बाधा रहित तुमको जजत हो सुख घने।।नग.।।5।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर बत्ती की शिखा, उद्योत दश दिश में करे।
तुम ज्ञान ज्योतीरूप हो, इस हेतु हम अर्चन करें।।नग.।।6।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशगंध गंधित धूप लेकर, अग्नि में खेऊँ सदा।
सब कर्म पुंजों को जलाकर, आत्म सुख सेवूँ कदा।।नग.।।7।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर अमृत फल अनारों, से भराया थाल मैं।
तुम नाथ परमानंदकारी, अब नवाऊँ भाल मैं।।नग.।।8।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीरादि फल पर्यंत वसुविध, अर्घ्य से थाली भरूँ।
अनमोल संपति हेतु मैं, जिनपाद की अर्चा करूँ।।

1. कामदेव विजयी।

नग मानुषोत्तर में अपर दिश, जिननिलय पूजा करूँ।
चिंतामणी चैतन्य धन, निज को हि परमात्मा करूँ।।9।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्थितपश्चिमदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

सिंधुनदी को नीर, धार देय जिनपद कमल।
मिले भवोदधि तीर, शांतीधारा शम करे।।10।।

शांतये शांतिधारा।

वकुल मालती फूल, सुरभित करते दश दिशा।
मार मल्लहर[1] देव, तुम पद अर्पूं मैं सदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

–सोरठा–

पश्चिम दिश जिनगेह, मनुजोत्तर नग के उपरि।
बहुविध भक्ति समेत, पुष्पांजलि कर पूजहूँ।।1।।

इति मानुषोत्तरपर्वतस्थाने मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–गीता छन्द–

पर्वत नरोत्तर पे अपर दिश, रत्नमय जिनगेह है।
संसार सागर पार हेतू, मैं जजूँ धर नेह है।।
जल गंध आदिक द्रव्य लेकर, नाथ को अर्पण करूँ।
षट् क्रिया आवश्यक[2] प्रपूरण, हेतु प्रभु चरणन परूँ।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि पश्चिमदिशि सिद्धकूटजिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य परिपुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

1. कामदेव विजेता। 2. देवपूजा, गुरुपास्ति, स्वाध्याय, संयम, तप और दान।

जयमाला

–सोरठा–

विमलमूर्ति जिनधाम, अतुल विभव को कह सके।
प्रणमूँ आठों याम, गुणमणिमाला कंठ धर।।1।।

चाल– (हे दीन बन्धु....)

हे चित्स्वरूप जैनबिंब! मैं तुम्हें नमूँ।
हे आदि अंतशून्य! प्रकृतिरूप[1] मैं नमूँ।।
तुम हो अनादि परमब्रह्म ज्योतिस्वरूपी।
चैतन्य चिदानंद सहज रूप अरूपी।।1।

हो शुद्ध बुद्ध परम विश्वनाथ महेशा।
आनन्दकंद श्रीजिनंद नमत सुरेशा।
खेचर सुरों की टोलियाँ आ भक्ति भाव से।
हे नाथ! तुम्हें पूजती हैं नित्य चाव से।।2।।

इस मानुषोत्तराद्रि परे नर न जा सकें।
इस नग के इधर ढाई द्वीप में ही नर बसें।।
हैं एक सौ सत्तर कहीं जो कर्मभूमियाँ।
वे सब हैं ढाई द्वीप के अंदर की भूमियाँ।।3।।

हो ऋद्धि सहित साधुवृंद या हो खगेशा।
विद्याधरों के कुल में जन्म लेके नरेशा।।
या भूमिगोचरी मनुष्य गगन में चलें।
विद्या के बल से ढाई द्वीप में अधर चलें।।4।।

ये भव्य मेरुमंदिरों की वंदना करें।
निन्यानवे हजार योजन तक भी वीहरें।।
पर मानुषोत्तराद्रि से ऊपर न जा सकें।
ऐसी ही योग्यता कही है भव्य श्रद्धते।।5।।

1. स्वाभाविक नग्न रूप।

इस नग के ही भीतर के मनुज पुण्यशील हैं।
जो आत्मा की सिद्धि को करते अधीन हैं।।
वे भव्य समयसार रूप जिनको करे हैं।
संसार विषम वार्धि से वे शीघ्र तरें हैं।।6।।

मैंने भी मनुज योनि में ही जन्म लिया है।
सम्यक्त्वरत्न पाय जनम धन्य किया है।।
हे नाथ! निधी गिर न जाय भवसमुद्र में।
करके कृपा रक्षा करो चिंता न हो हमें।।7।।

–दोहा–

जय जय प्रभु त्रैलोक्यपति, आश्रित के प्रतिपाल।
'ज्ञानमती' निज संपदा, देकर करो खुशाल।।8।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि पश्चिमदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थ-सर्वजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 57)

मानुषोत्तरपर्वत उत्तरदिश जिनालय पूजा

–अथ स्थापना–अडिल्ल छन्द–

मनुजोत्तर नग ऊपर उत्तर दिश विषे।
सिद्धकूट में जिनमंदिर अनुपम दिपे।।
हेम रतन मणिनिर्मित, जिनवरबिंब को।
मैं थापूँ मन हर्ष हरूँ जग द्वंद को।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिन-बिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथाष्टकं–रोला छंद (चाल –अहो जगत...)

पयोराशि का नीर, धवल सुशीतल लीना।
निज आतम मलहीन, जिनवर पूजन कीना।।
मनुजोत्तर नग माहिं, उत्तर दिश जिनधामा।
कर्मगिरी[1] कर चूर, पाऊँ शिव विश्रामा।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

उदित सूर्य सम वर्ण, चंदन केशर लाया।
वर्ण गंध से शून्य, जिनवर चरण चढ़ाया।।मनु.।।2।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सोम[2] किरण समशालि, धोकर थाल भरा है।
अमल अखंडित ज्योति, जिन ढिग पुंज धरा है।।

1. कर्मरूपी पर्वत । 2. चंद्र।

मनुजोत्तर नग माहिं, उत्तर दिश जिनधामा।
कर्मगिरी कर चूर, पाऊँ शिव विश्रामा।।3।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जपा कुसुम मंदार, बेला जुही चमेली।
भवहर जिनपद धार, होवे मुक्ति सहेली।।मनु.।।4।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

लड्डू मोतीचूर, कलाकंद चरु लाया।
आशापाश विनाश, जिनवर निकट चढ़ाया।।मनु.।।5।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हेमपात्र घृत पूर, बत्ती शिखा प्रकाशे।
ज्ञानज्योति जिन पूज, मनमंदिर परकाशे।।मनु.।।6।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर तगर मिल धूप, अग्नी संग जलाऊँ।
निज आतम कर शुद्ध, कर्म कलंक नशाऊँ।।मनु.7।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल अंगूर अनार, घ्राण नयन मनहारी।
निज संपद फल हेतु, पूजूँ पद अविकारी।।मनु.।।8।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वसुविध अर्घ्य बनाय, पूजूँ तुम पद आके।
मोक्ष अनर्घ्य अमूल्य, लेऊँ भक्ति बढ़ाके।।

मनुजोत्तर नग माहिं, उत्तर दिश जिनधामा।
कर्मगिरी कर चूर, पाऊँ शिव विश्रामा।।9।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

सिंधु नदी को नीर, धार देय जिनपद कमल।
मिले भवोदधि तीर, शांतीधारा शम करे।।10।।

शांतये शांतिधारा।

वकुल मालती फूल, सुरभित करते दश दिशा।
मारमल्लहर देव, तुम पद अर्पूं मैं सदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

–अथ प्रत्येक अर्घ्य–दोहा–

समयसार शुद्ध आत्मा, चिच्चैतन्य प्रधान।
श्री जिनवर प्रतिभा अमल, कुसुमांजलि कर मान।।1।।

इति मानुषोत्तरनगस्थाने मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–अडिल्ल छंद–

मनुजोत्तर नग ऊपर उत्तर जानिये।
जिनवर आलय सौख्यालय पहिचानिये।।
नव क्षायिक लब्धी, के हेतू मैं जजूँ।
अष्टकर्म नग चूर, भक्ति से नित भजूँ।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य–**ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वतजिनालयस्थसर्वजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

सौम्य कलागुणपूर्ण जिन, वीतराग छविमान।
तुम गुण वर्णन शक्ति नहिं, फिर भी गाऊँ गान।।1।।

शम्भु छंद (चाल–श्रीपति जिनवर.....)

जय जय मनुजोत्तर नग जग में, जिस परे मनुष नहिं जा सकते।
जय जय उसके जिन चैत्यालय, जिसको सुर नर वंदन करते।।
इस पे बाईस सुकूट कहे, चउ दिश में त्रय त्रय माने हैं।
आग्नेय और ईशान विदिश में, दो दो ही सरधाने हैं।।1।।

वायव्य और नैऋत्य विदिश में, एक एक ही तुम जानो।
इन अठरा में चउ सिद्धकूट मिल करके बाइस तुम मानो।।
उत्तर दिश के श्री सिद्धकूट, मंदिर की पूजा करते हैं।
चारों दिश के जिनमंदिर की, अर्चा कर पातक हरते हैं।।2।।

कूटों के तल में शिखरों पर, चारों तरफी वनखंड कहे।
वेदी तोरण मणि द्वारों से, जो अतिशय सुंदर रम्य कहें।।
अठरा कूटों के सुरगृह में, जिनमंदिर शाश्वत माने हैं।
जो व्यंतरवासी देवों के, जिनगृह कहलाये जाते हैं।।3।।

चारों दिश में जिनमंदिर जो, श्री सिद्धकूट पे माने हैं।
निषधाचल सम वे जिनमंदिर, उनकी यह पूजा ठाने हैं।।
जिनगृह में मानस्तंभ कहे, जो मानगलित कर देते हैं।
जो दर्शन वंदन करते हैं, उनको सम्यक् निधि देते हैं।।4।।

रत्नों से बनी ध्वजायें हैं, जो पवन झकोरे हिलती हैं।
मणि कनक कुसुम की मालायें, वे चारों तरफ लटकती हैं।।
मंगलघट पूर्ण कलश शोभें, धूपों के घट महकाते हैं।
वसु मंगल द्रव्य सु इक सौ अठ, इक सौ अठ शोभा लाते हैं।।5।।

वसु प्रातिहार्य शोभें अनुपम, भामंडल रत्नमयी कोरे।
त्रय छत्र फिरें चौंसठ चमरों को, यक्ष युगल मिलके ढोरें।।
रत्नों के सिंहासन ऊपर, पद्मासन जिनप्रतिमा राजें।
जिनके दर्शन वंदन करते भव भव के पाप तुरत भाजें।।6।।

तुम पूजन करते नाथ! अभी, मेरे मन एक हुई वांछा।
दुःखों का क्षय कर्मों का क्षय, हो बोधी लाभ यही यांचा।।
नित सुगतिगमन होवे मेरा, सन्यास विधी से मरना हो।
जिनगुण संपति मिल जाय मुझे, फिर कभि न याचना करना हो।।7।।

–दोहा–

अकृत्रिम जिनरूप को, प्रणमूँ बारंबार।
'ज्ञानमती' निजरूप को तुरतहिं लेहुँ निहार।।8।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वतस्योपरि उत्तरदिक्सिद्धकूटजिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 58)

कृत्रिम जिनालय पूजा

अथ स्थापना-नरेन्द्र छंद

ढाई द्वीप में पाँच भरत हैं पाँच कहे ऐरावत।
पाँच महाविदेह क्षेत्रों में कर्मभूमि है शाश्वत।।
सुर नर निर्मापित बहु पूजित मुनि गण से नित वंदित।
जिनप्रतिमा जिनमंदिर अगणित थापूँ यहाँ जजूँ नित।।1।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिपंचदशकर्मभूमिस्थितकृत्रिमजिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिपंचदशकर्मभूमिस्थितकृत्रिमजिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिपंचदशकर्मभूमिस्थितकृत्रिमजिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अथ अष्टकं-भुजंगप्रयात छंद –

मुनीचित्त सम नीर उज्जवल लिया है।
प्रभू पाद में तीन धारा किया है।।
जजूँ जैनमंदिर त्रिकालीक जो हैं।
नमूँ जैनप्रतिमा जिनेश्वर सदृश हैं।।1।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिपंचदशकर्मभूमिस्थितकृत्रिमजिनालयजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कपूरादि से मिश्र चंदन घिसाया।
प्रभूपाद अरविंद में मैं चढ़ाया।।जजूँ.।।2।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिपंचदशकर्मभूमिस्थितकृत्रिमजिनालयजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

धुले श्वेत तंदुल धरूँ पुंज आगे।
मिले सौख्य अक्षय सभी दुःख भागे।।जजूँ.।।3।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिपंचदशकर्मभूमिस्थितकृत्रिमजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जुही मोगरा केवड़ा पुष्प लाऊँ।
प्रभू को चढ़ाते निजी सौख्य पाऊँ।।
जजूँ जैनमंदिर त्रिकालीक जो हैं।
नमूँ जैनप्रतिमा जिनेश्वर सदृश हैं।।4।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिपंचदशकर्मभूमिस्थितकृत्रिमजिनालयजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पुआ खीर मोदक इमरती चढ़ाऊँ।
क्षुधा व्याधि हरके अतुल तृप्ति पाऊँ।।जजूँ.।।5।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिपंचदशकर्मभूमिस्थितकृत्रिमजिनालयजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणीदीप की ज्योति तम को हरे हैं।
करूँ आरती ज्ञानज्योती भरे है।।जजूँ.।।6।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिपंचदशकर्मभूमिस्थितकृत्रिमजिनालयजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दशांगी सुरभि धूप खेऊँ अगनि में।
जलें कर्म वैरी मिले शांति चित्त में।।जजूँ.।।7।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिपंचदशकर्मभूमिस्थितकृत्रिमजिनालयजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अनंनास नींबू बिजौरा चढ़ाऊँ।
महामोक्ष की आश से शीश नाऊँ।।जजूँ.।।8।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिपंचदशकर्मभूमिस्थितकृत्रिमजिनालयजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

रजतपुष्प ले अर्घ अर्पण करूँ मैं।
प्रभो! रत्नत्रय हेतु अर्चन करूँ मैं।।जजूँ.।।9।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिपंचदशकर्मभूमिस्थितकृत्रिमजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-सोरठा-

जिनप्रतिमा जिनरूप, चरणों में धारा करूँ।
मिले स्वात्म चिद्रूप, शांतीधारा शिव करे।।10।।
शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार गुलाब, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।
मिले स्वात्मसुख लाभ, चहुंगति भ्रमण विनाश हो।।11।।
दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-दोहा-

गणधर मुनिगण इंद्रगण, नित्य नमें नतशीश।
पुष्पांजलि कर पूजहूँ, नमूँ नमूँ जगदीश।।1।।
इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-नरेन्द्र छंद-

जंबूद्वीप के दक्षिण दिश में, भरत क्षेत्र सुखकारी।
छह खंडों में आर्यखंड इक कर्मभूमि अति प्यारी।।
इंद्र चक्रवर्ती मानव गण जिनमंदिर बनवाते।
उनकी जिनप्रतिमा को पूजत कर्मशत्रु भग जाते।।1।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थसुरनरनिर्मितसर्वजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जम्बूद्वीप के उत्तर दिश में, ऐरावत अति सोहे।
छहखंडों में आर्यखंड इक कर्मभूमि जहाँ होहैं।।इंद्र.।।2।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थसुरनरनिर्मितसर्वजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जम्बूद्वीप के पूर्व अपर में क्षेत्र विदेह सुहावे।
बत्तिस कर्मभूमि में छह खंड आर्यखंड मन भावें।।इंद्र.।।3।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसंबंधिमहाविदेहक्षेत्रस्थसुरनरनिर्मितसर्वजिनालय-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्वधातकी में दक्षिणदिश भरतक्षेत्र छह खंडा।
आर्यखंड में चौथे युग में तीर्थंकर सुखकंदा।।
इंद्र चक्रवर्ती मानव गण जिनमंदिर बनवाते।
उनकी जिनप्रतिमा को पूजत कर्मशत्रु भग जाते।।4।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधि-भरतक्षेत्रस्थसुरनरनिर्मितसर्वजिनालयजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्व धातकी में उत्तरदिश ऐरावत शुभ सोहे।
छह खंडों मधि आर्यखंड में कर्मभूमि मन मोहे।।इंद्र.।।5।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थसुरनरनिर्मितसर्वजिनालयजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्व धातकी के पूर्वापर क्षेत्र विदेह सुहावे।
इसमें बत्तिस देश सभी में आर्यखंड मन भावे।।इंद्र.।।6।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिमहाविदेहक्षेत्रस्थसुरनरनिर्मितसर्वजिनालय-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपरधातकी में दक्षिणदिश, भरतक्षेत्र छहखंडा।
आर्यखंड में छह परिवर्तन कर्मभूमि सुखकंदा।।इंद्र.।।7।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थसुरनरनिर्मितसर्वजिनालय-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपरधातकी में उत्तर दिश, ऐरावत शुभक्षेत्रा।
छहखंडों मधि आर्यखंड में तृषित सुरों के नेत्रा।।इंद्र.।।8।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधि-ऐरावतक्षेत्रस्थसुरनरनिर्मितसर्वजिनालय-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपरधातकी में पूर्वापर महाविदेह कहावे।
उसमें बत्तिस देश सभी में कर्मभूमि मन भावे।।इंद्र.।।9।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिमहाविदेहक्षेत्रस्थसुरनरनिर्मितसर्व-जिनालय जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-गीता छंद-

वर पूर्वपुष्करद्वीप में दक्षिण दिशी शुभ भरत है।
इसमें छहों खंड मध्य में इक आर्यखंड सुलसंत है।।
सुर इंद्र चक्री मनुजगण जिनधाम बनवाते सदा।
उनमें जिनेश्वरमूर्तियाँ वंदूँ इन्हें ये सौख्यदा।।10।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थसुरनरनिर्मापितसर्वजिनालयजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस पूर्वपुष्करद्वीप में उत्तरदिशी ऐरावता।
छहखंड में इक आर्य है नर जन्म लेते सासता।।सुर.।।11।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थसुरनरनिर्मापितसर्वजिनालयजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस पूर्वपुष्करद्वीप में पूरब व पश्चिम दिक्क में।
बत्तीस देश विदेह में षट्खंड मध्ये आर्य में।।सुर.।।12।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिपूर्वापरविदेहक्षेत्रस्थसुरनरनिर्मापितसर्वजिनालय-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम सुपुष्करद्वीप में दक्षिण दिशी शुभ भरत है।
इस मध्य आरजखंड में जब कर्मभू वर्तत है।।सुर.।।13।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थसुरनरनिर्मापितसर्वजिनालयजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम सुपुष्करद्वीप में उत्तरदिशी ऐरावता।
इस मध्य आरजखंड में जब कर्मभू हो शर्मदा[1]।।सुर.।।14।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थसुरनरनिर्मापितसर्वजिनालय-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम सुपुष्करद्वीप में पूरब अपर सुविदेह हैं।
उनमें सदा है कर्मभूमी नर बनें गतदेह हैं।।सुर.।।15।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिमहाविदेहक्षेत्रस्थसुरनरनिर्मापितसर्वजिनालय-जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. सुख देने वाली

-पूर्णार्घ्य-

इन ढाई द्वीपों में कही हैं कर्मभू पंद्रह शुभा।
इन मध्य आरज खंड में जिनधर्म भास्कर की प्रभा।।
कृत्रिम जिनालय अगणिते मणिरत्न पार्थिव हैं यहाँ।
मैं जजूँ अर्घ चढ़ाय के देवें अतुल सुख निधि यहाँ।।1।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिपंचदशकर्मभूमिमध्यइंद्रचक्रवर्तिमनुष्यादिनिर्मापित-मणिरत्नस्वर्णपार्थिवघटितत्रैकालिक-सर्वजिनालयेभ्यःपूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इन ढाई द्वीपों के जिनालय सुर मनुजकृत अगणिते।
इन मध्य जिनवर बिंब राजें रत्नमणि के निर्मिते।।
चांदी कनक पाषाण आदि धातु की जिनमूर्तियाँ।
मैं नमूँ शीश नमायके ये भरें आत्म विभूतियाँ।।2।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिपंचदशकर्मभूमिमध्यसुरनरनिर्मापितजिनालयमध्य-विराजमानपर्वतदीगुहादिविराजमानमणिरत्नस्वर्णरजतअन्यधातुपाषाणघटित-सर्वजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य-**ॐ ह्रीं त्रिलोक्यशाश्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

-शंभु छंद-

जय जय अर्हंतों की प्रतिमा, जय जय सिद्धों की प्रतिमायें।
जय जय आचार्यों की प्रतिमा, जय उपाध्याय की प्रतिमायें।।
जय जय साधूगण की प्रतिमा, जय जय जय जिनवर प्रतिमायें।
जय जय तीर्थंकर की प्रतिमा, इन वंदत आत्म निधी पायें।।1।।

इस युग में सुरपति के आकर सब प्रथम अयोध्या पुरी रची।
इस मध्य जैनमंदिर रचके चहुँदिश में जिन रचना की।।
भरतेश्वर ने भि अयोध्या में बहुते जिनमंदिर बनवाये।
कैलाशगिरि पर त्रय चौबीसि बहत्तर मंदिर बनवाये।।2।।

हरिषेण चक्रपति ने रत्नों के अगणित मंदिर बनवाये।
श्रीरामचंद ने कुंथलगिरि पर बहुते मंदिर चिनवाये।।
युग आदी से अब तक लेकर जिनगृह असंख्य ही माने हैं।
उन सबकी जिनप्रतिमा पूजूँ ये भव भव के दुख हाने हैं।।3।।

जय पांच भरत के जिनमंदिर जय पाँच ऐरावत के मंदिर।
जय पाँच विदेहों के मंदिर जय मुनिगण वंदित जिनमंदिर।।
इन पाँच विदेहों के सब इक सौ साठ देश कहलाते हैं।
पण भरत पांच ऐरावत मिल इक सौ सत्तर बन जाते हैं।।4।।

इनमें भरतैरावत दश में षट् काल परावर्तन होते।
चौथे व पांचवें कालों में जिनमंदिर भविजन मल धोते।।
सब इक सौ आठ विदेहों में शाश्वत ही कर्मभूमि रहती।
जिनमंदिर वहाँ निरतंर हैं जिनधर्म ध्वजा वहां फरहरती।।5।।

सुरगण भी कभी कभी जिनगृह जिनप्रतिमा की रचना करते।
नरपति खगपति साधारण नर जिनगृह को निर्मापित करते।।
माणिक्य नीलमणि गरुत्मणी रत्नों की प्रतिमा बनवाते।
सोना चांदी पीतल तांबा पाषाण आदि की बनवाते।।6।।

फिर पंच कल्याण प्रतिष्ठाकर मूर्ती को पूज्य बनाते हैं।
जिनवर के गुण आरोपण कर वर प्राण प्रतिष्ठा करते हैं।।
ये मूर्ति अचेतन होकर भी चेतन भगवान बनें तब ही।
निज भक्तों को वांछित देकर चेतन भगवान करें तब ही।।7।।

अर्हंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधु पांच परमेष्ठी हैं।
जिनधर्म जिनागम जिनप्रतिमा जिनगृह मिल नवों देवता हैं।।
पांचों परमेष्ठी नवदेवों की मूर्ति मंदिरों में सोहें।।
माँ सरस्वती की मूर्ति मुनी गणधर की प्रतिमा मन मोहें।।8।।

निजमूर्ति सहस्रकूट मंदिर अरु तीस चौबीसी प्रतिमायें।
महाव्रत के पवित्र आर्यिकाओं की मूर्ति नमत ही सुख पाये।।

जिनशासन यक्ष यक्षिणी की मूर्ती जिनगृह में रहती हैं।
दिक्पाल क्षेत्रपालों की भी मूर्ती विघ्नों को हरती हैं।।9।।

इन पंद्रह कर्मभूमियों के सब जिनमंदिर मैं नमूँ नमूँ।
सब जिनवर की प्रतिमाओं को, मैं नित्य नमूँ मैं नित्य नमूँ।।
सब पंच परमगुरु आदि बिंब जितने भी कृत्रिम इस जग में।
मैं नमूँ नमूँ नित भक्ती से मुझ मनरथ पूरे हों क्षण में।।10।।

-दोहा-

जितने जिनमंदिर यहाँ, जिनप्रतिमा सुरवंद्य।
जजत स्वात्मसुख प्राप्त हो, ज्ञानमती आनंद।।11।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिपंचदशकर्मभूमिस्थितसर्वकृत्रिमजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 59)

ढ़ाईद्वीप समवसरण पूजा

अथ स्थापना-नरेन्द्र छंद

कर्मभूमि के आर्यखण्ड में, तीर्थंकर विहरे हैं।
समवसरण के मध्य राजतें, थविजन पाप हरे हैं।।
देश विदेहों में तीर्थंकर, समवसरण नित रहता।
भरतैरावत में चौथे ही, काल में यह दिख सकता।।1।।

-दोहा-

जिनवर समवसरण यही, धर्म सभा की भूमि।
आह्वानन कर मैं जजूँ, मिले आठवीं भूमि।।2।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधितीर्थंकरदेवसमवसरणसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधितीर्थंकरदेवसमवसरणसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधितीर्थंकरदेवसमवसरणसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अथ अष्टकं-सोरठा छंद –

सिंधुनदी को नीर, जल से पूजत मन शुची।
मिलता ज्ञान शरीर, समवसरण पूजूँ सदा।।1।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-सप्ततिशतकर्मभूमिविराजमानत्रैकालिकतीर्थंकर-देवसमवसरणेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल गंध सुगंध, चंदन चर्चे अघ टले।
मिले सौख्य अनिंद्य, समवसरण पूजूँ सदा।।2।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-सप्ततिशतकर्मभूमिविराजमानत्रैकालिकतीर्थंकर-देवसमवसरणेभ्यः चंदने निर्वपामीति स्वाहा।

शालि स्वच्छ अखंड, पुंज चढ़ाते अखय पद।
होवे ज्ञान अखंड, समवसरण पूजूँ सदा।।3।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-सप्ततिशतकर्मभूमिविराजमानत्रैकालिकतीर्थंकर-देवसमवसरणेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

बेला कमल गुलाब, पुष्प सुगंधित अर्पते।
मिटे सुतन मन व्याधि, समवसरण पूजूँ सदा।।4।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-सप्ततिशतकर्मभूमिविराजमानत्रैकालिकतीर्थंकर-देवसमवसरणेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

लड्डू मोती चूर, बहुविध चरू चढ़ावते।
होवे क्षुधा विदूर, समवसरण पूजूँ सदा।।5।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-सप्ततिशतकर्मभूमिविराजमानत्रैकालिकतीर्थंकर-देवसमवसरणेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत का दीप जलाय, करूँ आरती तम टलें।
भेद ज्ञान प्रकटाय, समवसरण पूजूँ सदा।।6।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-सप्ततिशतकर्मभूमिविराजमानत्रैकालिकतीर्थंकर-देवसमवसरणेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर तगर से मिश्र, धूप सुगंधित खेवते।
घातिकर्म हो भस्म, समवसरण पूजूँ सदा।।7।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-सप्ततिशतकर्मभूमिविराजमानत्रैकालिकतीर्थंकर-देवसमवसरणेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

लीची आम अनार, सरस फलों से पूजते।
मिले आत्मसुख सार, समवसरण पूजूँ सदा।।8।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-सप्ततिशतकर्मभूमिविराजमानत्रैकालिकतीर्थंकर-देवसमवसरणेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंधादिक लेय, अर्घ बनाकर पूजते।
मिलता सौख्य अमेय, समवसरण पूजूँ सदा।।9।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-सप्ततिशतकर्मभूमिविराजमानत्रैकालिकतीर्थंकर-देवसमवसरणेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतिधारा देत, शांति हो सब विश्व में।
पूर्ण स्वस्थता हेत, समवसरण पूजूँ सदा।।10।।

शांतये शांतिधारा।

मल्ली हरसिंगार, पुष्पांजलि अर्पण किये।
हो नवनिधि भंडार, समवसरण पूजूँ सदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

जम्बूद्वीप के समवसरण के अर्घ्य

-दोहा-

समवसरण यजते मिले, सर्व सिद्धि नवनिद्धि।
पुष्पांजलि चढ़ावते, सर्व मनोरथ सिद्ध।।1।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-नरेन्द्र छंद-

ऋषभदेव का समवसरण था, बारह योजन विस्तृत।
धूलीसाल कोट से वेष्टित, ऋद्धि सिद्धि नवनिधि भृत।।
धर्म सभा है गोल मनोहर, बारह गण से पूरित।
सुरनर पशु सुनते दिव्य ध्वनि, जजूँ भक्ति से मैं नित।।1।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतियुक्तश्रीऋषभदेव-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अजितनाथ का समवसरण था, साढ़े ग्यारह योजन।
नाम स्मरण मात्र से अब भी, करता पाप विमोचन।।
मानस्तंभ आदि को वंदत, मान गलित हो जावे।
जो जन पूजें मन वच तन से, स्वास्थ्य लाभ को पावें।।2।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीअजितनाथ-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संभव जिन का समवसरण, जो ग्यारह योजन माना।
गंधकुटी के मध्य जिनेश्वर, सिंहासन अमलाना।।

बीस हजार सीढ़ियाँ चढ़कर, बाल वृद्ध रोगी जन।
इक मुहूर्त में उन पर पहुँचे, यह अतिशय पूजें हम।।3।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीसंभवनाथ-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभिनंदन जिन समवसरण है, साढ़े दश योजन का।
रोग शोक दुख दारिद संकट,नाशे भव्य जनों का।।
मैं नित पूजूँ अर्घ सजाकर, आतम अनुभव पाऊँ।
अजर अमर पद परम धाम पा, नहीं पुनर्भव पाऊँ।।4।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतियुक्तसहितश्रीअभिनंदन-जिनसमवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुमतिनाथ का समवसरण है, दश योजन कहलाया।
भव्यों ने निज कुमति दूरकर, निज पर सुमति उपाया।।
पूजादान शील तप पालो, श्रावक धर्म सुनाया।
पंच महाव्रत मुनि धर्म है, पूजूँ मन वच काया।।5।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीसुमतिनाथ-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पद्म प्रभू की कमल छवी है, चौंतिस अतिशय धारी।
साढ़े नव योजन का शोभे, समवसरण सुखकारी।।
कोट वेदिका लता भूमि, आदिक युत इंद्र बनावे।
गणधर मुनिगण चक्रवर्ती गण, नमते शीश नमावें।।6।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीपद्मप्रभजिन-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु सुपार्श्व का समवसरण है, नव योजन का सुन्दर।
मानस्तंभ चार दिश में हैं, रचना करें पुरंदर।।
भामंडल में दर्शक भविजन, सात निजी भव देखें।
पूजूँ ध्याऊँ जिनगुण गाऊँ, आत्मनिधी तब दीखे।।7।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितसुपार्श्वनाथ-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चंद्र प्रभू का समवसरण था, साढ़े आठ सुयोजन।
चंद्रकिरण सम कांति मनोहर, हरती भव्यों का मन।।
घातिकर्म हन केवलज्ञानी, त्रिभुवन सूर्य कहाये।
चंद्रसूर्य सम सौख्य तेज हो, तुम गुणमणि को गायें।।8।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितचंद्रप्रभनाथ-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पदंत का समवसरण है, योजन आठ कहाया।
फिर भी असंख्यात भव्यों को, अपने मध्य समाया।।
देव-देवियाँ असंख्य रहते, नर पशु संख्याते हैं।
समवसरण की महिमा अनुपम, पूजत सुख पाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितपुष्पदंतजिन-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल जिनका समवसरण था, साढ़े सात सुयोजन।
उन प्रभु का बस नाम स्मरण ही, कर देता शीतल मन।।
देव देवियाँ गीत नृत्य से, जिनगुण गान उचरते।
जो पूजें नित भक्ति भाव से, वे भव वारिधि तरते।।10।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितशीतलनाथ-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री श्रेयांस का समवसरण था, योजन सात सुविस्तृत।
इन्द्रनील मणि भूमि मनोहर, हरता सुर नर का चित।।
पशु गण भी सब वैर छोड़कर, दिव्य ध्वनि को सुनते।
दो त्रय भव में तर जाते हैं, मैं पूजूँ तन मन से।।11।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रेयांसजिन-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वासुपूज्य का लाल कमल सम, सुरभित तनु अति सुंदर।
समवसरण साढ़े छह योजन, इन्द्र बना प्रभु किंकर।।

प्रातिहार्य मंगल द्रव्यादिक, शोभे समवसरण में।
चक्रवर्ति भी निज वैभव को, तुच्छ गिने उस क्षण में।।12।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितवासुपूज्य-जिनसमवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विमलनाथ का समवसरण था, छह योजन गोलाकृति।
चारों तरफ चार मुख प्रभु के, देख रहे सब जन इत।।
वापी में जलभरा वहाँ जो, उसमें निज भव देखें।
अतिशय प्रभु का कहा अनूपम, पूजत ही निज पेखें।।13।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितविमलनाथ-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण था अनंत जिनका, साढ़े पाँच सुयोजन।
चैत्य भूमि के चैत्य वृक्ष में, जिन प्रतिमाएं अनुपम।।
सम्यग्दृष्टी प्रभु वंदन कर, भव अनंत हरते हैं।
अनंतदर्शन ज्ञान प्राप्त हो, जो पूजन करते हैं।।14।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितअनंतनाथ-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण श्री धर्मनाथ का, योजन पाँच कहाया।
भविजन खेती को धर्मामृत, वर्षाकर हरसाया।।
सागार रु अनगार धर्म दो, भेद रूप माना है।
जिनवर समवसरण जो पूजें, पावें शिवथाना है।।15।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीधर्मनाथ-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण था शांतिनाथ का, साढ़े चार सुयोजन।
आत्यन्तिक सुख शांति हेतु, उन वाणी जन मनमोहन।।
मिथ्यादृष्टी अभव्य जन प्रभु, दर्शन नहिं कर पावे।
सम्यग्दृष्टी दर्शन करके, भव जलधी तर जावे।।16।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीशांतिनाथ-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंथुनाथ का समवसरण था, योजन चार विख्याता।
प्राणि मात्र पर दया करो सब, यह उपदेश सुनाता।।
जहाँ प्रभू का श्रीविहार हो, रोग उपद्रव टलते।
सब जन परमानंद प्राप्त कर, सुख से प्रभु को भजते।।17।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीकुंथुनाथ-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर जिनवर का समवसरण था, साढ़े तीन सुयोजन।
मोह अरी को जीत लिये तव, मिला विभव सर्वोत्तम।।
ज्ञान दर्शनावरण रजों को, अन्तराय को नाशें।
हम पूजें उन तीर्थंकर को, अंतर ज्योति प्रकाशें।।18।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीअरनाथ-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मल्लिनाथ का समवसरण था, योजन तीन कहाया।
कर्ममल्ल के विजयी प्रभु का, सुरनर मिल गुण गाया।।
आर्यखंड में श्रीविहार से, क्षेत्र पवित्र कहाये।
नाम लेत ही आपद टलती, शत्रु मित्र बन जायें।।19।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितमल्लिनाथ-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिसुवत का समवसरण था, ढाई योजन सुन्दर।
गणधर मुनिगण ऋषिगण सुरगण, नरगण पशुगण मनहर।।
द्वादश सभा मध्य सब बैठे, निज निज के कोठे में।
वंदन कर उपदेश श्रवण कर, निज आतम पोषें वे।।20।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितमुनिसुव्रतजिन-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नमि जिनवर का समवसरण था, दो योजन मन भाया।
सरवर पुष्प वाटिका वापी, महलों से मन भाया।।

नृत्य करें बहु देव अप्सरा, नाटक शालाओं में।
पूजन से भव भ्रमण दूर हो, पाप नशें इक क्षण में।।21।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितनमिजिन-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नेमिनाथ का समवसरण था, योजन डेढ़ बताया।
वरदत्तादिक गणधर गुरु ने, सबको बोध कराया।।
सभी आर्यिकाओं में मान्या, राजमती थीं गणिनी।
उस अचिन्त्य वैभव को जजते, मिले स्वात्म निर्झरणी।।22।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितनेमिनाथ-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पार्श्वनाथ का समवसरण था, एक कोश इक योजन।
कमठ शत्रु ने भी वहँ आकर, किया वैर का मोचन।।
पद्मावति धरणेन्द्र भक्त प्रभु, संकट मोचन विश्रुत।
चिंतामणि पारस की महिमा, कलियुग में भी अद्भुत।।23।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितपार्श्वनाथ-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महावीर का समवसरण था, इक योजन अतिशायी।
ढाई हजार वर्ष के पहले, सुरनर गण सुखदायी।।
उन प्रभु की ध्वनि गौतम ने चुनि, आज मिली हम सबको।
पूजूँ ध्याऊँ भक्ति बढ़ाऊँ शीघ्र नशाऊँ भव को।।24।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थभरतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीमहावीरस्वामि-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जम्बूद्वीप के ऐरावत में, आर्यखंड में नामी।
वर्तमान तीर्थंकर चौबिस, पंचकल्याणक स्वामी।।
बालचंद्र से वीरसेन तक, जिनवर समवसरण को।
श्रद्धा रुचि से पूजन करके, उनकी गहूँ शरण को।।25।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपऐरावतक्षेत्रार्यखंडे अचिन्त्यविभूतिसहितश्रीबालचंद्रसुव्रत-अग्निसेननंदिसेनश्रीदत्तव्रतधरसोमचंद्रधृतिदीर्घशतायुष्यविवसितश्रेयानविश्रुत-जलसिंहसेन-उपशांतगुप्तशासन-अनंतवीर्यपार्श्वअभिधानमरुदेवश्रीधरशामकंठ-अग्निप्रभअग्निदत्तवीरसेननामचतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्व विदेह देश में सोलह, आर्यखण्ड उन दो में।
सीमंधर युगमंधर जिनके, समवसरण हैं शोभें।।
उनको अगणित सुरनर मिलकर, भक्तिभाव से पूजें।
तीर्थंकर प्रभु के दर्शन कर, सर्व कर्म अरि धूजें।।26।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थषोडशपूर्वविदेहदेशसंबंधिसीमंधरयुगमंधरजिन-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपर विदेह देश में सोलह, आर्यखंड उन दो में।
बाहु सुबाहु तीर्थंकर के, समवसरण हैं शोभें।।
उनमें असंख्यात सुरगण हैं, नर पशु सब संख्यातें।
जिनभक्ती से आत्मशुद्ध कर, भव भव दुःख नशाते।।27।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थषोडशपश्चिमविदेहदेशसंबंधिबाहु-सुबाहुतीर्थंकर-समवसरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-

चौंतिस कर्म भूमि में जो हों, भूत भावि संप्रति में।
तीर्थंकर के समवसरण थे, होते अरु होवेंगे।।
उन सबको पूर्णार्घ समर्पित, करके जिन पद पाऊँ।
चौंतिस अतिशय सहित देव, तीर्थंकर के गुण गाऊँ।।1।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थचतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिसंजातत्रैकालिकानन्तानंततीर्थंकर-समवसरणेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धातकीखण्ड-पुष्करार्धद्वीप के समवसरण के अर्घ्य

-दोहा-

द्वीप धातकीखण्ड में, भरतक्षेत्र दो मान।
त्रैकालिक तीर्थेश सब, जजूँ अनंत प्रमाण।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वापरधातकीखण्डद्वीपसंबंधि-द्वयभरतक्षेत्रार्यखण्डयोः त्रैकालिका-नन्तानन्ततीर्थंकरसमवसरणेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वीप धातकीखण्ड में, ऐरावत दो सिद्ध।
त्रैकालिक तीर्थेश प्रभु, जजूँ अनंत प्रसिद्ध।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्वापरधातकीखण्डद्वीपसंबंधि-द्वयैरावतक्षेत्रार्यखंडयोः त्रैकालिका-नन्तानंततीर्थंकरसमवसरणेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वीपधातकीखण्ड में, चौंसठ क्षेत्र विदेह।
त्रैकालिक तीर्थेश प्रभु, जजूँ अनंत सनेह।।3।।

ॐ ह्रीं पूर्वापरधातकीखण्डसंबंधिचतुःषष्टिविदेहक्षेत्रार्यखण्डेषु त्रैकालिकानन्तानंततीर्थंकरसमवसरणेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-दोहा-

पुष्करार्ध में दो भरत, तिनमें चौथे काल।
त्रैकालिक तीर्थेश प्रभु, जजूँ अनंत त्रिकाल।।4।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधि-द्वयभरतक्षेत्रार्यखण्डयोः त्रैकालिकानन्तानन्ततीर्थंकरसमवसरणेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्करार्ध में दो कहे, क्षेत्रैरावत जान।
त्रैकालिक तीर्थंकरा, जजूँ अनंत प्रमाण।।5।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधि-द्वयैरावतक्षेत्रार्यखंडयोः त्रैकालिकानन्तानंततीर्थंकरसमवसरणेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्करार्ध में चौंसठे, क्षेत्र विदेह महान्।
त्रैकालिक तीर्थेश प्रभु जजूँ अनंत प्रमाण।।6।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधि-चतुःषष्ठिविदेहक्षेत्रार्यखण्डेषु त्रैकालिकानन्तानंततीर्थंकरसमवसरणेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-

इस जम्बूद्वीप में भरतैरावत विदेह माने चौंतिस है।
पूर्व व पश्चिम धातकि में, चौंतिस-चौंतिस मिल अड़सठ हैं।।
ऐसे ही पूर्व व पश्चिम पुष्करार्ध में सब मिल अड़सठ हैं।
ये इक सौ सत्तर कर्मभूमि, इनमें तीर्थंकर विहरत हैं।।

-दोहा-

इक सौ सत्तर तीर्थंकर, समवसरण अभिराम।
जजूँ यहीं पूर्णार्घ्य ले, मिले स्वात्म विश्राम।।1।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-सप्तत्यधिक-एकशततीर्थंकरसमवसरणेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-दोहा-

इक सौ सत्तर कर्मभू, त्रैकालिक तीर्थेश।
कहे अनंतानंत ही, जजत मिटे भवक्लेश।।2।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकएकशतकर्मभूमिष्वार्यखंडेषु त्रैकालिकानन्तानन्ततीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य मंत्र-**ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-त्रैकालिकानन्तानन्ततीर्थंकरेभ्यो नमः।**

जयमाला

-दोहा-

समवसरण तीर्थेश के, जिनमंदिर सत्यार्थ।
गाऊँ गुणमाला अबे, सिद्ध करें सर्वार्थ।।1।।

छंद-हे दीनबंधु.....

जय जय जिनेन्द्र तीर्थ नाथ, गुण मणी भरें।
जय जय जिनेन्द्र तीर्थ नाथ, जग सुखी करें।।
जब घाति कर्म को हना, तब केवली हुये।
तुम ज्ञान में तब लोक वा, अलोक दिख गये।।2।।

तब इन्द्र की आज्ञा से, धनपती यहाँ आया।
अद्भुत अपूर्व रम्य, समवसरण बनाया।।
रवि बिम्ब सदृश गोल, इंद्र नील मणी का।
इस भूमि से वह बीस, सहस हाथ था ऊँचा।।3।।

चारों दिशा में सीढ़ियाँ हैं, बीस सहस ही।
वे एक एक हाथ ऊँची, सर्व सुखमयी।।
चारों दिशा में चार, मानस्तंभ बने हैं।
जो दर्श से ही मानियों का, मान हने हैं।।4।।

पहला है धूलिसाल कोट, सर्व रत्न का।
फिर चैत्य के प्रासाद की, मानी है भूमिका।।

फिर नाट्यशाला फेर मान, स्तंभ की भूमी।
फिर वेदिका प्रथम है पुनः खातिका बनी।।5।।

वेदी लता भूमी के बाद कोट दूसरा।
उपवन वनी व नाट्यशाला वेदि ध्वज धरा।।
परकोट तृतीय कल्पभूमि नाट्य शालिका।
वेदी भवन धरा स्तूप कोट चतुर्था।।6।।

पश्चात् श्रीमंडप की भूमि जो फटिकमयी।
वेदी के बाद प्रथम द्वितीय तृतीय पीठ ही।।
इसके उपरि है गंधकुटी मध्य सिंहासन।
उस पर सहस्रदलमयी स्वर्णिम कमल आसन।।7।।

चतुरंगुल अधर तीर्थनाथ इसपे राजते।
निज दिव्यध्वनि से असंख्य भव तारते।।
बालक व वृद्ध अंध वधिर, पंगु आदि भी।
मुहूर्त में ही चढ़ते लोग, सीढ़ियाँ सभी।।8।।

नाटक गृहों में अप्सरा, अभिनय विविध करें।
तीर्थंकरों के पंचकल्याणक को विस्तरें।।
गणधर व चक्रवर्ती पुण्य पुरुष चरित का।
नाटक करें सब लोक का, मन हर रहीं नीका।।9।।

मिथ्यादृशी पाखंडि शूद्र जन वहाँ नहीं।
जो दर्श करें नाथ का, वे भव्य हैं सही।।
बाधा बिना बैठें सभी, निज निज के हि कोठे।
मुनिगण व आर्यिका व देव देवि असंख्ये।।10।।

नर पशु सभी निज निज के वैर भाव छोड़ के।
प्रभु का सुने उपदेश, रुचि से हाथ जोड़ के।।
प्रभु वीर का समवसरण, योजन सु एक था।
फिर भी असंख्य देव का, निवास वहाँ था।।11।।

अतिशय जिनेन्द्र देव की, अवगाहना शक्ती।
जो भव्य हैं वे ही वहाँ, कर सकते हैं भक्ती।।
भव्यों के पुण्य से प्रभू का, श्रीविहार हो।
दुर्भिक्ष रोग शोक उपद्रव वहाँ न हो।।12।।

सब कर्मभूमियों में ये समवसरण बने।
ये भूत भावि काल के अनन्त हैं गिनें।।
ये सार्वभौम नाथ की हैं धर्म सभायें।
इनको नमें वे निज को सर्व गुण से सजायें।।13।।

-दोहा-

जो तीर्थंकर को नमें, समवसरण पूजंत।
सकल 'ज्ञानमति' संपदा, वे पा लेत तुरंत।।14।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-सप्ततिशतकर्मभूमिसंजातत्रैकालिकसर्वतीर्थंकर-समवसरणेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 60)

पंचकल्याणक तीर्थ पूजा

अथ स्थापना (गीता छंद)

वर पंचकल्याणक जगत में, इंद्रगण से वंद्य हैं।
त्रैलोक्यपति तीर्थंकरों की, चरणरज से धन्य हैं।।
मैं स्वात्मसिद्धी प्राप्ति हेतू, सर्व तीर्थों को जजूँ।
आह्वाननादी विधि करूँ, सम्पूर्ण कल्याणक भजूँ।।1।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थिततीर्थंकरपंचकल्याणकक्षेत्र-महामुनिनिर्वाणक्षेत्र-सर्व-अतिशयक्षेत्रसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थिततीर्थंकरपंचकल्याणकक्षेत्र-महामुनिनिर्वाणक्षेत्र-सर्व-अतिशयक्षेत्रसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थिततीर्थंकरपंचकल्याणकक्षेत्र-महामुनिनिर्वाणक्षेत्रसर्व-अतिशयक्षेत्रसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं स्थापनं।

अथ अष्टकं (भुजंगप्रयातछंद)

पयोसिंधु को नीर झारी भराऊँ।
प्रभो! आपके पाद धारा कराऊँ।।
महापंचकल्याण तीर्थादि पूजूँ।
महापंच संसार से शीघ्र छूटूँ।।1।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थिततीर्थंकरपंचकल्याणकक्षेत्र-महामुनिनिर्वाणक्षेत्रसर्व-अतिशयक्षेत्रेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सुगंधीत चंदन कपूरादि वासा।
चढ़ाते तुम्हें सर्व संताप नाशा।।
महापंचकल्याण तीर्थादि पूजूँ।
महापंच संसार से शीघ्र छूटूँ।।2।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थिततीर्थंकर-पंचकल्याणकक्षेत्र-महामुनिनिर्वाणक्षेत्रसर्व-अतिशयक्षेत्रेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

पयोराशि के फेन सम तंदुलों को।
चढ़ाऊँ तुम्हें सौख्य अक्षय मिले जो।।
महापंचकल्याण तीर्थादि पूजूँ।
महापंच संसार से शीघ्र छूटूँ।।3।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थिततीर्थंकर-पंचकल्याणकक्षेत्र-महामुनिनिर्वाणक्षेत्रसर्व-अतिशयक्षेत्रेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जुही केवड़ा चंपकादी सुमन हैं।
तुम्हें पूजते काम व्याधी शमन है।।
महापंचकल्याण तीर्थादि पूजूँ।
महापंच संसार से शीघ्र छूटूँ।।4।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थिततीर्थंकर-पंचकल्याणकक्षेत्र-महामुनिनिर्वाणक्षेत्रसर्व-अतिशयक्षेत्रेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

कलाकंद लाडू भरा थाल लाऊँ।
क्षुधा डाकिनी नाश हेतू चढ़ाऊँ।।
महापंचकल्याण तीर्थादि पूजूँ।
महापंच संसार से शीघ्र छूटूँ।।5।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थिततीर्थंकर-पंचकल्याणकक्षेत्र-महामुनिनिर्वाणक्षेत्रसर्व-अतिशयक्षेत्रेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणी दीप ज्योती भुवन को प्रकाशे।
करूँ आरती ज्ञान ज्योती प्रकाशे।।
महापंचकल्याण तीर्थादि पूजूँ।
महापंच संसार से शीघ्र छूटूँ।।6।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थिततीर्थंकर-पंचकल्याणकक्षेत्र-महामुनिनिर्वाणक्षेत्रसर्व-अतिशयक्षेत्रेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्निपात्र में धूप खेऊँ दशांगी।
करम धूम्र फैले चहूँ दिक् सुगंधी।।

महापंचकल्याण तीर्थादि पूजूँ।
महापंच संसार से शीघ्र छूटूँ।।7।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थित-तीर्थंकर-पंचकल्याणकक्षेत्र-महामुनिनिर्वाणक्षेत्रसर्व-अतिशयक्षेत्रेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

नरंगी मुसम्बी अनन्नास लाऊँ।
महामोक्ष फल हेतु आगे चढ़ाऊँ।।
महापंचकल्याण तीर्थादि पूजूँ।
महापंच संसार से शीघ्र छूटूँ।।8।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थित-तीर्थंकर-पंचकल्याणकक्षेत्र-महामुनिनिर्वाणक्षेत्रसर्व-अतिशयक्षेत्रेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलादी वसू द्रव्य से थाल भर के।
चढ़ाऊँ तुम्हें अर्घ्य रत्नादि धर के।।
महापंचकल्याण तीर्थादि पूजूँ।
महापंच संसार से शीघ्र छूटूँ।।9।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थिततीर्थंकर-पंचकल्याणकक्षेत्र-महामुनिनिर्वाणक्षेत्रसर्व-अतिशयक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा –

सकल जगत में शांतिकर, शांतिधार सुखकार।।
जिनपद में धारा करूँ, सकल संघ हितकार।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुरतरु के सुरभित सुमन, सुमनस चित्त हरंत।
पुष्पांजलि अर्पण करत, मिले सौख्य दुःख अंत।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

जम्बूद्वीप के तीर्थंकरों के पंचकल्याणकादि तीर्थ के अर्घ्य

दोहा– **तीर्थंकर कल्याण से, भूमी पावन मान्य।**
पुष्पांजलि से पूजते, भव्य लहें धन-धान्य।।1।।

अथ मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–दोहा –

भरतक्षेत्र में जन्म भू, तीर्थ अयोध्या आदि।
जन्मभूमि सोलह प्रथित, जजत मिटे भव व्याधि।।1।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपभरतक्षेत्रसंबंधिवर्तमानकालीन चतुर्विंशतितीर्थंकर-अयोध्या-प्रभृति-कुण्डलपुरपर्यंतषोडशजन्मभूमितीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर प्रयाग अहिछत्र अरु, तीर्थ जृंभिका ख्यात।
दीक्षा ज्ञानकल्याण थल, जजत सुगुण हों प्राप्त।।2।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपभरतक्षेत्रसंबंधि-श्रीऋषभदेवदीक्षाकेवलज्ञानभूमि-प्रयागश्रीपार्श्वनाथमहावीरकेवलज्ञानस्थल-अहिच्छत्र-जृंभिकातीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टापद सम्मेदगिरि चम्पापुर गिरनार।
पावापुर निर्वाणस्थल, जजत होउं भवपार।।3।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपभरतक्षेत्रसंबंधि-कैलाशपर्वतसम्मेदशिखरचम्पापुरगिरनार-पावापुरचतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मांगीतुंगी आदि हैं, सिद्धक्षेत्र बहुतेक।
भक्तिभाव से नित ही, जजूँ नमूँ शिरटेक।।4।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपभरतक्षेत्रसंबंधि-मांगीतुंगीगजपंथादिगणधरमुनिगण-निर्वाणक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अतिशयस्थल महावीर जी, कचनेर आदि प्रसिद्ध।
अतिशय सुख की प्राप्ति हो, जजत कार्य सब सिद्ध।।5।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपभरतक्षेत्रसंबंधि-महावीरकचनेरादिसर्वातिशयतीर्थेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भरतक्षेत्र में तीर्थ सब, त्रैकालिक सुरवंद्य।
कहे अनंतानंत ही, जजत मिटे भवफंद।।6।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपभरतक्षेत्रसंबंधित्रैकालिकानन्तानंतपंचकल्याणकतीर्थ-निर्वाणक्षेत्रातिशयतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-

जम्बूद्वीप के भरत में, तीर्थ अनंतानंत।
त्रैकालिक हुये होयंगे, जजूँ करूँ भव अंत।।1।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपभरतक्षेत्रसंबंधित्रैकालिकचतुर्विंशतितीर्थंकरपंचकल्याणक-गणधरगुरुचक्रवर्त्यादि-निर्वाणक्षेत्रातिशयक्षेत्रेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

धातकीखण्ड द्वीप तीर्थ अर्घ्य

-दोहा-

पूर्वधातकी खंड में, कर्मभूमि चौंतीस।
तीर्थंकर कल्याणभू, जजूँ नमाकर शीश।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखण्डद्वीपसंबंधि-चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितत्रैकालिकानन्तानंत-तीर्थंकरपंचकल्याणकतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्व धातकी खण्ड में, आर्यखण्ड में साधु।
सिद्ध व अतिशय क्षेत्र हैं, जजूँ मिले निजस्वाद।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखण्डद्वीपसंबंधि-चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-त्रैकालिका-नन्तानंतमुनिनिर्वाणक्षेत्रातिशयक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपर धातकीखण्ड में, चौतीस आरजावंड।
तीर्थंकर कल्याणथल, जजत पाप शतखंड।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसंबंधि-चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितत्रैकालिका-नन्तानन्त तीर्थंकरपंचकल्याणकतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम धातकि द्वीप में, मुनिगण त्रयकालीक।
मुक्ति गये थल मैं जजूँ, क्षेत्र अतिशयादीक।।4।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसंबंधि-त्रैकालिकानंतानंतगणधरमुनि-गणादिनिर्वाणक्षेत्रातिशयक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-दोहा-

द्वीप धातकीखण्ड में, कर्मभूमि अड़सष्ठ।
पंचकल्याणक आदि सब, तीर्थ जजूँ हो ठाठ।।1।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपसंबंधि-अष्टषष्टिकर्मभूमिस्थितत्रैकालिकानन्तानंत-तीर्थंकरपंचकल्याणकक्षेत्रगणधरमहामुनि-निर्वाणक्षेत्रातिशयक्षेत्रेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

पुष्करार्धद्वीप तीर्थ अर्घ्य

-दोहा-

पूरब पुष्कर अर्ध में, कर्मभूमि चौंतीस।
तीर्थंकर कल्याणथल, जजूँ नमाकर शीश।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थित-त्रैकालिकानन्तानंत-तीर्थंकरपंचकल्याणकतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्करार्ध पूरब तरफ, चौंतिस आरजखंड।
सिद्धक्षेत्र अतिशय सुथल, जजूँ करूँ अघ खंड।।2।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितत्रैकालिकानंतानंत मुनिनिर्वाणक्षेत्रातिशयक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम पुष्कर अर्ध में, चौंतिस आरजखंड।
तीर्थंकर कल्याणक भू, जजत पाप शतखंड।।3।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितत्रैकालिका-नन्तानंततीर्थंकरपंचकल्याणकतीर्थक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम पुष्कर द्वीप में, कर्मभूमि चौंतीस।
अतिशयस्थल निर्वाणस्थल, जजूँ नमाकर शीश।।4।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-चतुस्त्रिंशत्कर्मभूमिस्थितत्रैकालिकानन्तानंत-मुनिनिर्वाणक्षेत्रातिशयक्षेत्रेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-दोहा-

द्वीप सुपुष्कर अर्ध में, अड़सठ आरजखंड।
पंचकल्याणक आदि सब, तीर्थ जजूँ सुख कंद।।1।।

ॐ ह्रीं पूर्वापरपुष्करार्धद्वीपसंबंधि-अष्टषष्टिकर्मभूमिस्थितत्रैकालिकानन्तानंत-तीर्थंकरपंचकल्याणकभूमिगणधरमुनिगणनिर्वाणक्षेत्रातिशयतीर्थेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-शंभु छंद-

इस जम्बूद्वीप में चौंतिस हैं, धातकीखण्ड में द्विगुणित हैं।
वर पुष्करार्धद्वीप में भी, सब अड़सठ कर्मभूमि शुभ हैं।।
ये इक सौ सत्तर कर्मभूमि में, आर्यखण्ड व विजयार्ध में।
लवणोदधि कालोदधि में भी, कल्याणक तीरथ आदिक हैं।।

-दोहा-

त्रैकालिक ये तीर्थ सब, कहे अनंतानंत।
नमूँ अनंतों बार मैं पाऊँ सौख्य अनंत।।1।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिषु सर्वार्यखंडेषु विजयार्धपर्वत-लवणसमुद्र-कालोदधिनदीपर्वतवृक्षादिषु संजातत्रैकालिकानंतानंत-पंचकल्याणकतीर्थक्षेत्र-निर्वाणक्षेत्र-अतिशयक्षेत्रेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य मंत्र – **ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि-त्रैकालिकपंचकल्याणकतीर्थसिद्ध-क्षेत्रातिशयक्षेत्रेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा –

तीनलोक की सम्पदा, करें हस्तगत भव्य।
तुम जयमाला कंठधर, पूरें सब कर्तव्य।।1।।

चाले-हे दीनबंधु.....

जैवंत मुक्तिकन्त देव देव हमारे।
जैवंत भक्त जंतु भवोदधि से उबारें।।

हे नाथ! आप जन्म के छह मास ही पहले।
धनराज रत्नवृष्टि करें मातु के महले।।1।।

माता की सेवा करती थीं श्री आदि देवियाँ।
अद्भुत अपूर्व भाव धरें सर्व देवियाँ।।
जब आप मात गर्भ में अवतार धारते।
तब इन्द्र सपरिवार आय भक्तिभाव से।।2।।

प्रभु गर्भकल्याणक महा उत्सव विधी करें।
माता-पिता की भक्ति से पूजन विधी करें।।
हे नाथ! आप जन्मते सुरलोक हिल उठे।
इन्द्रासनों के कंप से आश्चर्य हो उठे।।3।।

इन्द्रों के मुकुट आप से ही आप झुके हैं।
सुरकल्पवृक्ष हर्ष से ही फूल उठे हैं।।
वे सुरतरु स्वयमेव सुमनवृष्टि करे हैं।
तब इन्द्र आप जन्म जान हर्ष भरे हैं।।4।।

तत्काल इन्द्र सिंहपीठ से उतर पड़ें।
प्रभु को प्रणाम करके बार-बार पग पड़ें।।
भेरी करा सब देव का आह्वान करे हैं।
जन्माभिषेक करने का उत्साह भरे हैं।।5।।

सुरराज आ जिनराज को सुरशैल ले जाते।
सुरगण असंख्य मिलके महोत्सव को मनाते।।
जब आप हों विरक्त देव सर्व आवते।
दीक्षाविधि उत्सव महामुद से मनावते।।6।।

जब घातिया को घात ज्ञानसम्पदा भरें।
तब इन्द्र आ अद्भुत समवसरण विभव करें।
तुम दिव्य वच पीयूष को पीते असंख्यजन।
क्रम से करें वे मुक्तिवल्लभा का आलिंगन।।7।।

जब आप मृत्यु जीत मुक्तिधाम में बसें।
सिद्धचंगना के साथ परमानंद सुख चखें।।
सब इन्द्र आ निर्वाण महोत्सव मनावते।
प्रभु पंचकल्याणकपती को शीश नावते।।8।।

इन ढाईद्वीप में समस्त कर्मभूमि में।
आचार्य उपाध्याय साधुओं को नित नमें।।
वे साधु कर्मनाश मोक्ष प्राप्त कर रहे।
उन सबको नमूँ भक्ति से वे सिद्ध हो रहे।।9।।

सब गणधरों के चरण-कमल नित्य मैं नमूँ।
उनके सभी निर्वाणक्षेत्र को भि नित नमूँ।।
सब तीन न्यून नव करोड़ साधु को नमूँ।
उनके समाधिक्षेत्र-मुक्तिक्षेत्र को नमूँ।।10।।

जो ब्राह्मी आदि गणिनी और आर्यिकाएँ भी।
इन सबकी वंदना से गुणरत्न भरें भी।।
इनके समाधिक्षेत्र भी पवित्र मान्य हैं।
उनकी करूँ मैं वंदना वे सौख्य खान हैं।।11।।

इन सर्व तीर्थक्षेत्र की मैं वंदना करूँ।
निज आत्मा को तीर्थ बनाकर सुखी करूँ।।
अतिशायि क्षेत्र की सदैव अर्चना करूँ।
सम्पूर्ण अतिशयों से स्वात्म संपदा भरूँ।।12।।

जिन पादपद्म से पवित्र तीर्थ बन रहे।
उन तीर्थनाथ को हृदय में धार सुख लहें।।
तीर्थंकरों को तीर्थ को निर्वाण तीर्थ को।
मैं बार-बार नित्य नमूँ सिद्धि हेतु जो।।13।।

हे नाथ! आप कीर्ति कोटि ग्रंथ गा रहे।
इस हेतु से ही भव्य आप शरण आ रहे।।

मैं आप शरण पाय के सचमुच कृतार्थ हूँ।
बस 'ज्ञानमती' पूर्ण होने तक ही दास हूँ।।14।।

–दोहा –

पाँच कल्याणक पुण्यमय, हुए आपके नाथ।
बस एकहि कल्याण मुझ, कर दीजे हे नाथ।।15।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वीयद्वीपसंबंधिसर्वपंचकल्याणकक्षेत्रमहामुनिनिर्वाणसर्व-अतिशयक्षेत्रेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 61)

सिद्ध शिला पूजा

अथ स्थापना-शंभु छंद

श्री सिद्धशिला नरलोक मात्र पैंतालिस लाख सुयोजन है।
त्रैलोक्य शिखर पर अष्टम भू, पर रुक्मी[1] अर्ध चंद्र सम है।।
श्री सिद्ध अनंतानंत इसी पर तिष्ठें अष्ट गुणान्वित हैं।
आह्वानन कर इनको पूजूँ, ये देते सौख्य अपरिमित हैं।।1।।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यशिखरस्थितसिद्धशिलोपरि-विराजमानअनंतानंतसिद्धसमूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यशिखरस्थितसिद्धशिलोपरि-विराजमानअनंतानंतसिद्धसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यशिखरस्थितसिद्धशिलोपरि-विराजमानअनंतानंतसिद्धसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं-शंभु छंद

श्री सिद्ध सुयशसम उज्ज्वल जल, लेकर झारी भर लाया हूँ।
निज समरस सुख पाने हेतू, प्रभु चरण चढ़ाने आया हूँ।।
श्रीसिद्धशिला को नित पूजूँ, सब सिद्ध अनंतानंत जजूँ।
सर्वार्थसिद्धि को पा करके, इस सिद्ध शिला पर शीघ्र बसूँ।।1।।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यशिखरस्थितसिद्धशिलोपरि-विराजमान-अनंतानंतसिद्धेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सिद्ध गुणों सम अतिशीतल, चंदन घिसकर के आया हूं।
निज की शीतलता पाने को, प्रभू चरण चढ़ाने आया हूँ।।श्री.।।2।।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यशिखरस्थितसिद्धशिलोपरि-विराजमान-अनंतानंतसिद्धेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

1. चांदी की सिद्धशिला है।

श्री सिद्ध सौख्य सम खंड रहित, उज्ज्वल तंदुल ले आया हूँ।
निज आत्म सौख्य पाने हेतू, प्रभु पुंज चढ़ाने आया हूँ।।श्री.।।3।।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यशिखरस्थितसिद्धशिलोपरि-विराजमान-अनंतानंतसिद्धेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सिद्धगुणों सम अति सुगंध, पुष्पों को चुनकर लाया हूँ।
निज गुण सुगंधि पाने हेतू, प्रभु चरणों पुष्प चढ़ाया हूँ।।श्री.।।4।।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यशिखरस्थितसिद्धशिलोपरि-विराजमान-अनंतानंतसिद्धेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सिद्ध पुष्टि सम नानाविध, पकवान बनाकर लाया हूँ।
निज आत्म तृप्ति पाने हेतू, प्रभु चरण चढ़ाने आया हूँ।।श्री.।।5।।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यशिखरस्थितसिद्धशिलोपरि-विराजमान-अनंतानंतसिद्धेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सिद्ध ज्ञान सम ज्योतिर्मय, कर्पूर जलाकर लाया हूँ।
निज ज्ञानज्योति पाने हेतू, मैं आरति करने आया हूँ।।श्री.।।6।।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यशिखरस्थितसिद्धशिलोपरि-विराजमान-अनंतानंतसिद्धेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सिद्ध गुणों की सुरभि सदृश, वर धूप सुगंधित लाया हूँ।
निज आत्म सुरभि पाने हेतू, अग्नी में धूप जलाया हूँ।।श्री.।।7।।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यशिखरस्थितसिद्धशिलोपरि-विराजमान-अनंतानंतसिद्धेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सिद्ध सुखामृत सदृश मधुर, रसभरे बहुत फल लाया हूँ।
निज मोक्ष सुफल हेतू भगवन्! फल आज चढ़ाने आया हूँ।।श्री.।।8।।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यशिखरस्थितसिद्धशिलोपरि-विराजमान-अनंतानंतसिद्धेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सिद्ध गुणों के सम अनर्घ, यह अर्घ सजाकर लाया हूँ।
निज तीन रत्न पाने हेतू, प्रभु चरण चढ़ाने आया हूँ।।श्री.।।9।।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यशिखरस्थितसिद्धशिलोपरि-विराजमान-अनंतानंतसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-दोहा-

सिद्धशिला पर आज, मन से जल धारा करूँ।
पूर्ण शांति साम्राज्य, मिले त्रिजग में शांति हो।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सिद्ध शिला पर आज, पुष्पांजलि मन से करूँ।
मिले सिद्धि साम्राज्य, त्रिभुवन की सुख संपदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

-दोहा-

सिद्ध शिला को पूजते, सर्व कार्य हों सिद्ध।
पुष्पांजलि कर पूजते, हों प्रसन्न सब सिद्ध।।1।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

-शंभु छंद-

इस जम्बूद्वीप में सात क्षेत्र, में कर्म भोग भू आदिक हैं।
निज इच्छा से उपसर्गादिक, से सिद्ध हुये मुनि आदिक हैं।।
जिस जिस थल से निर्वाण गये, बस वहीं शिला पर पहुँच गये।
उन सब सिद्धों को पूजूँ मैं, मेरे सब वांछित सिद्ध भये।।1।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसंबंधिकर्मभूमिभोगभूमि-आदिस्थलेभ्यः सिद्धपदप्राप्त-सर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस द्वीप में सत्रह लाख बानवे, हजार नब्बे नदियां हैं।
ये शाश्वत हैं कृत्रिम उपसागर, सरवर आदिक नदियाँ हैं।।
इन नदियों से उपसर्ग आदि से बहुत मुनीश्वर मुक्त हुये।
उन सब सिद्धों को पूजूँ मैं मेरे सब इच्छित पूर्ण हुये।।2।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसंबंधि-अकृत्रिमनदीकृत्रिम-उपसागरनदीसरोवरतडागादिजल-स्थानेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस जंबूद्वीप में मेरु आदि त्रय शत ग्यारह पर्वत मानों।
ये शाश्वत हैं कृत्रिम बहुते सम्मेदशिखर आदिक जानों।।

इनसे इन मध्य गुफाओं से मेरु की मध्य गुफा से भी।
वृक्षादिक से जो सिद्ध हुये इन नभ सिद्धों को जजूँ अभी।।3।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसंबंधि-अकृत्रिमसुमेर्वादिपर्वतकृत्रिमसम्मेदशिखरादिपर्वतेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लवणोदधि में लंकादि द्वीप कूभोगभूमि बहु स्थल हैं।
वहाँ से जो मुनिवर मुक्त हुये उपसर्ग व इच्छा के वश हैं।।
इन सब सिद्धों को पूजूँ नित ये भव दुख हरने वाले हैं।
ये स्थलसिद्ध अनंतें हैं ये सब सुख करने वाले हैं।।4।।

ॐ ह्रीं लवणोदधिसंबंधिलंकादिद्वीपकुभोगभूमि-आदिस्थलेभ्यः सिद्धपद-प्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वीपों के नदी सरोवर से लवणोदधि के जल ऊपर से।
उपसर्ग आदि के कारण से बहुते मुनिवर शिवपुर पहुँचे।।
इन सब सिद्धों को पूजूँ नित ये परमानंदाबुधि में न्हावें।
ये जल से सिद्ध अनंतें हैं इनको वंदत निज सुख पावें।।5।।

ॐ ह्रीं लवणोदधिसंबंधिलंकादिद्वीपमध्यस्थितनदीसरोवरकूपतडागादिजल-समुद्रजलस्थानेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लवणोदधि मध्य हंस आदिक लंकादि द्वीप में पर्वत हैं।
इन पर से सिद्ध हुये जो मुनि उपसर्ग आदि के कारण हैं।।
लवणोदधि वेदी ऊपर से या वहीं अन्य वृक्षादिक से।
जो सिद्ध हुये उनको पूजूँ जिससे निजात्म शक्ती प्रगटे।।6।।

ॐ ह्रीं लवणोदधिसंबंधिलंकादिद्वीपस्थितत्रिकूटाचलादिपर्वतेभ्यः सिद्धपदप्राप्त-सर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वरद्वीप धातकी खंड द्वितिय में कर्मभूमि अरु भोगभूमि।
वन उपवन की भूआदि स्थल से सिद्ध हुये पावनभूमी।।
तीर्थंकरगण मुनिगण बहुते सब कर्म काटकर मुक्त हुये।
उपसर्ग आदि से सब थल से उन पूजत सौख्य अनंत लिये।।7।।

ॐ ह्रीं धातकीखंडद्वीपसंबंधिकर्मभूमिभोगभूमि-आदिस्थलेभ्यः सिद्धपदप्राप्त-सर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस द्वीप धातकी में कृत्रिम अकृत्रिम अगणित नदियाँ हैं।
सब आर्यखंड में उपसागर सरवर कूपादिक नदियाँ हैं।।
इन सबके जल के ऊपर से बहुतेक साधु गण मुक्ति गये।
चारण ऋद्धीधर या उपसर्ग आदि से हम उन जजत भये।।8।।

ॐ ह्रीं धातकीखंडद्वीपसंबंधिकृत्रिमाकृत्रिमनदी-उपसागरकूपतडागादिजल-स्थानेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस धातकि में दो मेरु अन्य अगणित पर्वत कूटादिक हैं।
धात्री तरु शाल्मलितरु आदि बहुविध उपवन तरु आदिक हैं।।
इन नभस्थान से सिद्ध हुये ऋद्धीबल उपसर्गादिक से।
उन सब सिद्धों को पूजूँ मैं आतमनिधि मिल जावे जिससे।।9।।

ॐ ह्रीं धातकीखंडद्वीपसंबंधिमेर्वादिपर्वतकृत्रिमाकृत्रिमपर्वतकृत्रिम-अकृत्रिमवृक्षादिनभस्थानेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कालोदधि मध्य कुभोगभूमि से मागध आदि द्वीप थल से।
चारणऋषि या उपसर्ग आदि कारण से मुनि शिवपुर पहुँचे।।
वर द्वीप जलधि के वेदी के थल से भी जो मुनि सिद्ध हुये।
उन सब सिद्धों को पूजूं मैं ये मेरे सिद्धि निमित्त हुये।।10।।

ॐ ह्रीं कालोदधिसंबंधिकुभोगभूमि-आदिस्थलेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कालोदधि के जल से कुभोगभूमि के नदी सरोवर से।
चारण ऋषि मुनि या उपसर्गादिक से मुनिगण शिवपुर पहुंचे।।
इन जल से मुक्ति प्राप्त मुनि को मैं नितप्रति शीश झुकाता हूं।
इन सब सिद्धों को अर्घ चढ़ाकर शिव की आश लगाता हूँ।।11।।

ॐ ह्रीं कालोदधिसंबंधिकुभोगभूमि-आदिमध्यस्थितनदीसरोवरसमुद्रजलेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस सागर मध्य कुभोगभूमि मागध सुर आदि निवास बनें।
उनमें जो पर्वत कूट शिखर तरु आदि नभस्थल हों जितने।।
उन पर से जो मुनि सिद्ध हुये उन सबको वंदन करता हूँ।
सब इष्ट वियोग अनिष्ट योग टल जावे अर्चन करता हूँ।।12।।

ॐ ह्रीं कालोदधिसंबंधिकुभोगभूमिमागधद्वीपादिमध्यस्थितपर्वतकूटवृक्षादि-स्थानेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्करवर द्वीप मध्य वलयाकृति मनुजोत्तर पर्वत सोहे।
इस परे मनुष नहिं जा सकते इस तक नरलोक चित्त मोहे।।
इसमें जो कर्मभूमि अरु भोगभूमि वन उपवन स्थल हैं।
उन सबमें सिद्ध हुये जिनवर मुनिगण उन सबको वंदन है।।13।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधिकर्मभूमिभोगभूमिवन-उपवनवेदिकादिस्थलेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस पुष्करार्ध में गंगादिक अगणित अकृत्रिम नदियां हैं।
कृत्रिम सरवर कूपादि तथा उपसागर आदिक नदियां हैं।।
इन जल से चारण बल से या उपसर्ग आदि से सिद्ध हुये।
उन सबको पूजूँ अर्घ चढ़ा मेरे सब मनरथ सफल हुये।।14।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधिकृत्रिम-अकृत्रिमनदीसरोवर-उपसागरकूपतडागादि-जलेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस पुष्पकरार्ध में दो मेरु हिमवन आदिक बहुपर्वत हैं।
शाश्वत पर्वत कृत्रिम पर्वत इन गुफा कंदरा आदिक हैं।।
इन ऊपर से मुनि सिद्ध हुये पुष्कर शाल्मलि तरु आदिक से।
इन सब सिद्धों को पूजूँ मैं रत्नत्रय निधी मिले जिससे।।15।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधिमेर्वादि-अकृत्रिमकृत्रिमपर्वततन्मध्यगुहादिवृक्षादि-स्थानेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह सिद्धशिला पैंतालिस लाख सुयोजन मनुज लोक प्रम है।
सर्वत्र अनंतानंत सिद्ध से भरी अकृत्रिम अनुपम है।।
गणधर मुनिगण से वंद्य शिला इसको मेरा शत शत वंदन।
यह सिद्ध शिला जब तक न मिले, तब तक इसको शत शत वंदन।।16।।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यशिखरस्थितपंचचत्वारिंशल्लक्षयोजनप्रमाणसिद्धशिलायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-पूर्णार्घ्य-

इन ढाई द्वीप दो सागर तक पैंतालिस लाख सुयोजन है।
यह मनुज लोक इसमें ही मानव मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं।।

इसमें थल जल पर्वत चोटी आदिक सब थल से सिद्ध हुये।
अणुमात्र जगह नहिं रिक्त यहाँ सब सिद्धों को मैं धरूँ हिये।।1।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपद्विसमुद्रप्रमितमनुष्यलोकस्थितसर्वजलस्थलपर्वतवृक्षगुहादिस्थानेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य-ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनन्तानन्तप्रमसिद्धेभ्यो नमो नमः।

जयमाला

चाल-शेर.....

जय जय त्रिलोक शिखर अग्र सिद्ध शिला है।
जय जय त्रिलोक शिखर अग्र मोक्ष इला[1] है।।
जय जय अनंतानंत सिद्ध इसपे राजते।
जय जय त्रिकाल सिद्ध अनंत गुण से भासते।।1।।

सर्वार्थ सिद्धि इंद्रक के ध्वजादंड से।
बारह सुयोजनोपरि भू आठवीं लसे।।
यह पूर्व अपर दिश में सुएक राजू है।
उत्तर दखिन के कुछ कम यह सात राजु है।।2।।

योजन सुआठ मोटी वायूवलय घिरी।
घनउदधि घनवायु तनुवायु से घिरी।।
इस मध्य 'ईषत्प्राग्भार' नाम क्षेत्र है।
चांदी सुवर्ण रत्नपूर्ण सिद्धक्षेत्र है।।3।।

उत्तान धवल छत्र सदृश सिद्धशिला ये।
योजन सुपैंतालिस लाख सिद्धशिला ये।।
ये आठ योजन मध्य में फिर अंत तक घटती।
नरलोक के प्रमाण है इस क्षेत्र की परिधी[2]।।4।।

यह अर्ध चंद्रसम त्रिलोक अग्रभाग में।
अनंत अनंत सिद्ध वहां राजते निज में।।

1. भूमि। 2. तिलोयपण्णत्ति, अधिकार आठवाँ, गाथा 652 से।

तीर्थेश होके सिद्ध अनंते वहाँ तिष्ठे।
तीर्थेश बिना सिद्ध अनंतानंत वहाँ पे।।5।।

जल थल व गगन से अनंत सिद्ध हुये हैं।
सामान्यकेवलि अंतकृत केवलि भि सिद्ध हैं।।
उत्कृष्ट पाँच सौ पचीस धनु शरीर से।
जघन्य साढ़े तीन हाथ देह मात्र से।।6।।

मध्यम अनके विधि की अवगाहना धरें।
ये सिद्ध हुये हम उन्हों को चित्त में धरें।।
जो ऊर्ध्व लोक अधोलोक तिर्यक लोक से।
सब कर्म नाश सिद्ध हुये मर्त्यलोक से।।7।।

उत्सर्पिणि अवसर्पिणी के छहों काल से।
उपसर्ग निमित्त सिद्ध हुये नमूँ भाल से।।
उपसर्ग बिना सिद्ध चौथे काल से हुये।
इन पाँच भरत पांच ऐरावत से शिव गये।।8।।

दो ज्ञान त्रय व चार से कैवल्य पायके।
जो सिद्ध हुये हैं अनंत सौख्य पायके।।
जो साधु संहरण से सिद्ध हो गये यहां।
बिन संहरण अनंत सिद्ध हो रहे यहां।।9।।

कुछ साधु समुद्घात सिद्ध हुये है।
कुछ केवली बिन समुद्घात सिद्ध हुये हैं।।
खड्गासनों से सिद्ध भी अनंत हुये हैं।
पद्मासनों से भी अनंत सिद्ध हुये हैं।।10।।

सब द्रव्य से पुंवेदी ही सिद्ध हुये हैं।
हां भाव से त्रय वेद से भी सिद्ध हुये हैं।।
प्रत्येक बुद्ध स्वयंबुद्ध सिद्ध हुये हैं।
बोधित प्रबुद्ध भी अनंत सिद्ध हुये हैं।।11।।

सब आठ कर्म नाश करके सिद्ध हुये हैं।
वे इक सौ अड़तालीस प्रकृति नष्ट किये हैं।।
सब सिद्ध अंतिम देव से कुछ न्यून कहे हैं।
इस विध से अन्त्यदेह के आकार रहे हैं।।12।।

ये सर्व सिद्ध गुण अनंतानंत धारते।
ये सर्व सिद्ध सुख अनंतानंत धारते।।
ये सर्व सिद्ध जन्म मरण शून्य हो गये।
ये सर्व सिद्ध ज्ञान गुण से पूर्ण हो गये।।13।।

इन ढाई द्वीप से अनंत सिद्ध हुये हैं।
दो ही समुद्र से अनंत सिद्ध हुये हैं।।
नरलोक में सब एक सौ सत्तर हैं कर्मभू।
नरमें जनम को प्राप्त करें मनुज मुक्तिभू।।14।।

नरलोक में अणुमात्र भी ना रिक्त थान है।
जहां से न हुये सिद्ध सब निर्वाण स्थान है।।
मेरु की चूलिका से भी सिद्ध हुये हैं।
वे मेरु की गुफा से ही सिद्ध हुये हैं।।15।।

अनंतानंत सिद्धों की वंदना करूँ।
मैं नित अनंतानंत बार वंदना करूँ।।
श्री सिद्धशिला को नमूँ मैं भक्ति भाव से।
ये सिद्धशिला प्राप्त करूँ भक्ति भाव से।।16।।

-दोहा-

नमूँ सिद्ध परमात्मा, सिद्धशिला मुनिवंद्य।
'ज्ञानमती' गुण पूर्णकर, पाऊँ परमानंद।।17।।

ॐ ह्रीं त्रिलोकशिखरस्थितसिद्धशिलोपरिविराजमान-अनंतानंतसिद्धेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शंभु छंद-

ढाईद्वीप विधान भक्ति से, जो नर-नारी करते हैं।
वे कर्मभूमि में मनुज बने, मुनि हो भव सार्थक करते हैं।।
नर सुरगति के अभ्युदय पाय, सब मनवांछित को लभते हैं।
कैवल्य 'ज्ञानमति' रवि किरणों, से जग आलोकित करते हैं।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

बड़ी जयमाला

परम ज्योति परमात्मा, सकल विमल चिद्रूप।
जिनवर गणधर साधुगण, नमूँ नमूँ जिनरूप।।1।।

-शंभु छंद-

जय जय पाँचों मेरू के जिन, मंदिर हैं शाश्वत रत्नमयी।
जय जय जिनमंदिर बीसों ही, गजदंतगिरी के स्वर्णमयी।।
जय जय जंबूतरु शाल्मलि के, दश जिनमंदिर महिमाशाली।
जय जय वक्षारगिरी के भी, अस्सी जिनगृह गरिमाशाली।।2।।

जय इक सौ सत्तर विजयारध के, सब जिनमंदिर सुखकारी।
जय जय तीसों कुलपर्वत के तीसों जिनगृह भव दुःखहारी।।
इष्वाकृति मनुजोत्तर पर्वत के, चार चार जिनमंदिर हैं।
ये ढाईद्वीप के तीन शतक, अट्ठानवे शाश्वत मंदिर हैं।।3।।

प्रति जिनगृह में जिनप्रतिमाएं, हैं इन सौ आठ कहीं सुंदर।
ये ब्यालिस हजार नव सौ चौरासी प्रतिमाएं अति मनहर।।
सब रत्नमयी जिनप्रतिमाएँ, जिनवर भक्ति सम फल देतीं।
भक्तों की इच्छा पूर्तीकर, अंतिम शिव में पहुँचा देतीं।।4।।

पाँचों मेरू के पांडुक वन, विदिशा में चार शिलाएँ हैं।
तीर्थंकर के जन्माभिषेक से, पावन पूज्य शिलाएँ हैं।।
पण भरत पाँच ऐरावत में, होते हैं चौबिस तीर्थंकर।
केवलि श्रुतकेवलि गणधर मुनि, साधुगण होते क्षेमंकर।।5।।

उनके कल्याणक से पवित्र, पृथिवी पर्वत भी तीर्थ बने।
जो उनकी पूजा करते, उनके मनवांछित कार्य बनें।।
सब इक सौ साठ विदेहों में, सीमंधर युगमंधर स्वामी।
बाहु सुबाहू आदिक विहरें, केवलज्ञानी अन्तर्यामी।।6।।

उन सर्व विदेहों में संतत, तीर्थंकर होते रहते हैं।
केवलज्ञानी चारणऋद्धी, मुनिगण वहाँ विचरण करते हैं।।

आकाशगमन करने वाले, ऋषिगण मेरू पर जाते हैं।
निज आत्म सुधारस स्वादी भी, जिनवंदन कर हर्षाते हैं।।7।।

इस ढाईद्वीप के तीन शतक, अट्ठानवे मंदिर को वंदन।
जितने भी कृत्रिम जिनगृह हों, उन सबको भी शत शत वंदन।।
जितने तीर्थंकर हुए यहाँ, हो रहे और भी होवेंगे।
उन सबको मेरा वंदन है, वे मेरा कलिमल धोवेंगे।।8।।

आचार्य उपाध्याय साधूगण, जो भी इन कर्मभूमियों में।
चिन्मय आत्मा को ध्याते हैं, सुस्थिर होकर निज आत्मा में।।
वे घाति चतुष्टय घात पुनः अरिहंत अवस्था पाते हैं।
इन कर्मभूमियों से फिर वे, भगवान सिद्ध बन जाते हैं।।9।।

-दोहा-

पंच परमगुरु जिनधरम, जिनवाणी जिनगेह।
जिन प्रतिमा को नित नमूँ, कोटि नमूँ धर नेह।।10।।

त्रैकालिक कृत्रिम सभी, जिनप्रतिमा जिनधाम।
कहें अनंतानंत ही, तिन्हें अनंत प्रणाम।।11।।

पैंतालिस लख योजनों, सिद्धशिला का व्यास।
सिद्ध अनंतों को नमूँ, हो लोकांत निवास।।12।।

ॐ ह्रीं श्रीसार्धद्वयद्वीपसंबंधि-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्म-जिनागमजिनचैत्यचैत्यालयतीर्थंकरसमवसरणपंचकल्याणकतीर्थसर्वसिद्धेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

-शेर छंद-

जो भव्य ढाई द्वीप का विधान करेंगे।
वे मनुज देव के सुखों को प्राप्त करेंगे।।
फिर ढाईद्वीप में जनम ले साधु बनेंगे।
कैवल्य ज्ञानमती से ही सिद्ध बनेंगे।।1।।

इत्याशीर्वादः।।

ढाई द्वीप विधान की प्रशस्ति

-अनुष्टुप् छंद-

सार्धद्वितयद्वीपेऽस्मिन्, वंदे सर्वजिनालयान्।
कृत्रिमाकृत्रिमांश्चापि, जिनार्चा नवदेवताः।।1।।

-शंभु छंद-

श्री शांतिनाथ श्री कुंथुनाथ, श्री अरजिनवर को करूँ नमन।
तीनों तीर्थंकरा चक्रवर्ति, औ कामदेव इन पद वन्दन।।
यहाँ जम्बूद्वीप बना सुंदर, जिनगृह जिनप्रतिमाओं संयुत।
इसकी प्रतिष्ठापना तिथी आज, अट्ठाइसवीं सबजन सुखप्रद।।2।।

श्री ढाई द्वीप का यह विधान, ये त्रेसठ पूजायें सुंदर।
यह सर्वसौख्यप्रद होवेगा, अतिशायी जग में मंगलकर।।
वीराब्द पचीस सौ उनतालिस, वैशाख सुदी द्वादशि तिथि है।
यह विधान मैंने पूर्ण किया, संकलित ग्रंथ सब हितकर है।।3।।

श्रीमत् चारित्र चक्रवर्ती, आचार्य शांतिसागर गुरुवर।
बीसवीं सदी के प्रथम सूरि, इन पट्टाचार्य वीरसागर।।
ये दीक्षा गुरुवर मेरे हैं, मुझ नाम रखा था 'ज्ञानमती'।
इनके प्रसाद से ग्रंथों की, रचना कर हुई अन्वर्थमती।।4।।

यह ढाईद्वीप पूजा विधान, भाक्तिकगण रुचि से किया करें।
जिनवर जिनप्रतिमा की भक्ती, भक्तों की रक्षा किया करें।।
जब तक हस्तिनापुर में सुमेरु-पर्वत, शुभ तेरहद्वीप रहें।
तब तक मुझ गणिनी 'ज्ञानमती' कृत, यह विधान जयशील रहे।।5।।

-दोहा-

नवदेवों की भक्ति से, भक्त बने भगवान।
गुण अनंत को पूर्ण कर, पावें सिद्धस्थान।।6।।

।।इति ढाईद्वीपविधानं संपूर्णम्।।

ढाईद्वीप विधान की आरती

—प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

आरति करो रे,
ढाईद्वीपों के जिनबिम्बों की, आरति करो रे।। टेक.।।

मध्यलोक में द्वीप असंख्यों का वर्णन पाया जाता।
तेरहद्वीपों तक उनमें जिनमंदिर का वर्णन आता।।
आरति करो, आरति करो, आरति करो रे,
चउ शत अट्ठावन जिनमंदिर की, आरति करो रे।।1।।

इनमें ढाई द्वीपों तक ही, मनुज क्षेत्र कहलाता है।
पंच भरत पंचैरावत, क्षेत्रों का दृश्य सुहाता है।
आरति करो, आरति करो, आरति करो रे,
श्रीपंचमेरु के जिनबिम्बों की, आरति करो रे।।2।।

जम्बूद्वीप धातकी एवं पुष्करार्ध जो द्वीप कहे।
ये ही ढाई द्वीप कहाते, दो समुद्र इन मध्य रहें।।
आरति करो, आरति करो, आरति करो रे,
इन ढाई द्वीपों के मंदिर की, आरति करो रे।।3।।

इन सबका वर्णन तिलोय-पण्णत्ति ग्रंथ में मिलता है।
दर्शन कर साक्षात् पुण्य का, कमल हृदय में खिलता है।।
आरति करो, आरति करो, आरति करो रे,
ढाई द्वीपों के समवसरण की, आरति करो रे।।4।।

गणिनीप्रमुख ज्ञानमती माताजी ने हमें बताया है।
ढाई द्वीप का यह विधान सुंदर भाषा में बनाया है।।
आरति करो, आरति करो, आरति करो रे,
''चन्दनामती'' इस काव्यकृती की, आरति करो रे।।5।।

ढाईद्वीप विधान का भजन

—प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज –तुम करो प्रभु से प्रीत.....

करो जिनवर का गुणगान, अवसर आया है।
रचा ढाईद्वीप विधान, अतिशय छाया है।।

पाँच मेरुपर्वत हैं इसमें, अस्सी जिनप्रतिमाएँ उनमें।
ये लगते स्वर्ण समान, अतिशय छाया है।।1।।करो.।।

ढाईद्वीप में कुल जिनमंदिर, तीन शतक अट्ठानवे सुंदर।
ये हैं शाश्वत जिनधाम, अतिशय छाया है।।2।।करो.।।

इक सौ सत्तर समवसरण हैं, उनमें चतुर्मुखी भगवन हैं।
उन्हें झुक-झुक करो प्रणाम, अतिशय छाया है।।3।।करो.।।

अतिशयकारी यह विधान है, प्रभु पूजन का फल महान है।
हों सिद्ध तुरत सब काम, अतिशय छाया है।।4।।करो.।।

ज्ञानमती माताजी की महिमा, ढाईद्वीप विधान की गरिमा।
''चन्दनामती'' है महान, अतिशय छाया है।।5।।करो.।।

भजन

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज–जिंदगी प्यार का गीत है.....

जन्म मानव का पाया है जो,
उसे सार्थक तो करना पड़ेगा।
वंश उत्तम ये पाया है जो,
मूल्यांकन तो करना पड़ेगा।।टेक.।।

कई जन्मों का पुण्य खिला, जिससे जिनधर्म उत्तम मिला।
गुरु का उपदेश ऐसा मिला, ज्ञान का दीप मन में जला।।
पाके सम्यक्त्व के रत्न को,
शिव डगर पे तो चलना पड़ेगा।।1।।

शुद्ध भोजन करोगे यदी, बुद्धि अच्छी बनेगी तभी।
छानकर जल पिओगे यदी, वाणी पावन बनेगी तभी।।
मन की शुद्धी के हेतू तुम्हें,
स्वच्छ भोजन तो करना पड़ेगा।।2।।

जाति औ कुल की रक्षा करो, शास्त्र औ गुरु की शिक्षा वरो।
दान-पूजन के योग्य बनो, आगे दीक्षा के योग्य बनो।।
शुद्ध खानदान रखना है यदि,
जाति में ब्याह करना पड़ेगा।।3।।

अपने बच्चों को संस्कार दो, पिण्ड शुद्धी का उपहार दो।
मुक्ति का मार्ग साकार हो, निज व पर का भी उपकार हो।।
''चन्दनामति'' सुनो भाइयों!
तुम्हें कुल शुद्धि रखना पड़ेगा।।4।।

भजन

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज-महाकुंभ का पर्व महान.....

जिनमंदिर का निर्माण, करो सब मिल के करो।
करो सब मिल के करो, करो सब मिल के करो...,
इससे मिलता है पुण्य महान, करो सब मिल के करो।।टेक.।।

मंदिर में राजें जिनवर प्रतिमा, तीर्थंकर चौबीसों की महिमा।
चौबीसों प्रभू का गुणगान, करो सब मिल के करो।।जिन.।।1।।

मंदिर में बजते हैं घंटे झालर, जिनवर पे ढुरते हैं चौंसठ चामर।
प्रभु आरती का पुण्य महान, करो सब मिल के करो।।जिन.।।2।।

मंदिर व प्रतिमा निर्माण जैसा, दूजा न कोई है पुण्य वैसा।
धन बढ़ता है करने से दान, करो सब मिल के करो।।जिन.।।3।।

मंदिर में सोने की ईंट लगाओ, सोना ही सोना जीवन में पाओ।
अपनी आत्मा को स्वर्ण समान, करो सब मिल के करो।।जिन.।।4।।

मंदिर के दर्शन की कर लो प्रतिज्ञा, ''चन्दनामती'' आज लेना ये शिक्षा।
सम्यग्दर्शन से आत्मा महान, करो सब मिल के करो।।जिन.।।5।।